व द्धि व विकास का अर्थशास्त्र

(Economics of Growth and Development)

एम. ए. अर्थशास्त्र (पूर्वार्द्ध)

M.A. Economics (Previous)

प्रश्न-पत्र - त तीय

Paper-III

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय

रोहतक—124 001

Copyright © 2003, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

Developed & Produced by EXCEL BOOKS PVT. LTD., A-45 Naraina, Phase 1, New Delhi-110028

विषय सूची

UNIT-1

अध्याय 1	आर्थिक संव द्धि तथा आर्थिक विकास	5
अध्याय 2	अल्पविकास	12
अध्याय 3	विकास के परम्परागत सिद्धांत	20
अध्याय 4	शुम्पीटर के विकास का सिद्धांत	27
अध्याय 5	लुइस के विकास का सिद्धांत	30
अध्याय 6	फाई-रेनिस के आर्थिक विकास का सिद्धांत	33
अध्याय 7	राज्य/संस्थानों की आर्थिक विकास में भूमिका	36

UNIT-2

अध्याय 8	संतुलित व द्धि विकास	40
अध्याय 9	असंतुलित व द्धि का सिद्धांत	45
अध्याय 10	बड़े धक्के का सिद्धांत	49
अध्याय 11	क्रांतिक न्यूनतम प्रयत्न सिद्धांत	53
अध्याय 12	निम्न संतुलन पाश सिद्धांत	58
अध्याय 13	जोन रॉबिन्सन का आर्थिक व द्धि सिद्धांत	61
अध्याय 14	वितरण का कालडर मॉडल	66
अध्याय 15	नवक्लासिक व द्धि का सिद्धांत - आर०एम० सोलो का मॉडल	70
अध्याय 16	तकनीकी परिवर्तन के मॉडल	74
अध्याय 17	हैरॅड तथा डोमर का मॉडल	79
अध्याय 18	नवक्लासिक के सिद्धांत की कैम्ब्रिज से आलोचना	86

UNIT- 3

अध्याय 19	औद्योगिकरण और कृषि	88
अध्याय 20	तकनीकी परिवर्तन व विकास	94
अध्याय 21	निवेश कसौटियाँ	100
अध्याय 22	लागत-लाभ विश्लेषण	106
अध्याय 23	मौद्रिक नीति (मुद्रा)	113
अध्याय 24	राजकोषीय नीति	117
अध्याय 25	भारत में योजना मॉडल	124
अध्याय 26	व्यापार सिद्धान्त और विकासशील देशों के अनुभव	128
अध्याय 27	भारत में गरीबी	134
अध्याय 28	नियोजन और विकास	139
अध्याय 29	भौतिक आगत	143

M.A. (Previous)
Economics of Growth and Development

Paper-III

Max. Marks : 100
Time : 3 Hours

Note : (i) *Question paper will be consist of two sections A and B.*

(ii) *Section A will consists of two compulsory questions spread over the whole of syllabus. The first questions spread of 7 parts and the candidate will be required to attempt 5 parts. Answers will be very short type about 35 words carrying 4 marks each. The second question will consist of 3 parts and the condidate will be required to attempt 2 parts Answer will be short type of about 200 words carrying 10 marks each.*

(iii) *Section B of the paper will consist of 6 questions taking two from each Unit, and the candidate will be required to attempt 3 questions selecting one from each Unit. The answers will be full length essay type carrying 20 marks.*

Unit-I : Economic Growth, Economic development and sustainable development; Importance/role of Institutions-government and markets.

Perpetuation of underdevelopment-vicious circle of poverty circular causation, Structural view of underdevelopment.

Measurement of development-Conventional, Human development index and quality of life indices.

Factors affecting economic growth and development-Natural resources, capital, labour, technology, human resources development and infrastructure.

Theories of development: Classical, Marx, Schumpeter and structural analysis of development- imperfect market paradigm, Lewis model of development, Ranis-Fei model. Dependency theory of development.

Unit-II : **Approaches to development:** Balanced growth, Critical minimum effort, big push, unbalanced growth, low income equilibrium trap.

Theories of economic growth: Model of growth of job Robinson and Kaldor; Harrod Domar model, Instability of equilibrium, Neo-classical growth Solow's model, Steady state growth

Technical Progress-Hicks, Harrod and learning by doing production function approach to the determinants of growth.

Cambridge criticism of neo-classical analysis of growth: The Capital controversy.

Unit-III **Sectoral aspects of development:** Importance of agricultural and industry in economic development; Trade and development; trade as an engine of growth, two-gap analysis, Prebishch, Singer and Murd views, gains from trade and LDCs. Choice of techniques and appropriate technology; Investment criteria; Cost-benefit analysis.

Objects and role of monetary and fiscal policies in economic development; Indicators and measurement of poverty; Techniques of planning; Plan models in India; Planning in a market-oriented economy.

Endigenous growth: Role of education, Research and knowledge-explanation of cross country differentials in economic development and growth.

UNIT-1

अध्याय-1

आर्थिक संव द्धि तथा आर्थिक विकास

(Economic Growth and Economic Development)

आर्थिक संव द्धि के बारे में अर्थशास्त्रियों के अलग-अलग विचार है। आमतौर पर अर्थशास्त्री आर्थिक संव द्धि का प्रयोग विकसित देश के लिए करते है।

स्पष्ट शब्दों में आर्थिक संव द्धि का अभिप्रायः देश की प्रति व्यक्ति आय या उत्पादन में एक मात्रात्मक निरंतर व द्धि से है। जो कि उपभोग, श्रम शक्ति, पूँजी व व्यापार में मात्रात्मक व द्धि के साथ होती है। आर्थिक संव द्धि का मतलब अधिक उत्पादन से है। अल्पविकसित देशों में आर्थिक संव द्धि का अहम् स्थान है क्योंकि प्रति व्यक्ति उत्पादन में व द्धि के अभाव के कारण, विशेषकर जब जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है, तो आर्थिक संव द्धि के बिना आर्थिक विकास के बारे में सोचना कठिन प्रतीत होता है।

आर्थिक विकास
(Economic Development)

अधिकतर अर्थशास्त्री आर्थिक विकास का प्रयोग अल्पविकसित अर्थव्यवस्था के लिए करते हैं। विकास का अर्थशास्त्र अल्पविकसित देशों की बढ़ती समस्याओं जैसे-आर्थिक विकास से सम्बन्ध रखता है। इसकी तरफ वाणिज्य-वादियों तथा विभिन्न अर्थशास्त्रियों एडम स्मिथ से लेकर केन्ज और मार्क्स का ध्यान आकर्षित किया था। फिर भी उनकी दिलचस्पी मुख्य रूप से ऐसी समस्याओं में रही जो पश्चिम यूरोपीय ढाँचे से संबंध रखती थी। विशेषतौर पर द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद ही अर्थशास्त्रियों का अल्पविकसित देशों की समस्याओं के विश्लेषण की तरफ आकर्षित हुआ। क्योंकि विकसित देश यह महसूस करने लगे थे कि किसी देश की गरीबी अन्य किसी संव द्ध देश के लिए खतरा पैदा कर सकती है। जैसा कि मायर तथा बाल्डविन ने कहा है ”राष्ट्रों के धन के अध्ययन की अपेक्षा राष्ट्रों की गरीबी को दूर करने के अध्ययन की अधिक आवश्यकता है“ लेकिन यहाँ यह भी समझने की आवश्यकता है कि अल्पविकसित देशों की गरीबी को दूर करने के पीछे धनी देशों का अपना स्वार्थ छिपा है क्योंकि अन्य देशों की अपेक्षा अधिक आर्थिक सहायता देकर प्रत्येक धनी देश अल्पविकसित देशों का समर्थन तथा वफादारी खरीदना चाहता है।

स्पष्ट शब्दों में आर्थिक संव द्धि एक संकुचित धारणा है तथा आर्थिक विकास एक विस्त त धारणा है। आर्थिक विकास आर्थिक आवश्यकताओं, वस्तुओं, प्रेरणाओं और संस्थाओं में गुणात्मक परिवर्तनों से संबंधित है। यह प्रौद्योगिक, संरचनात्मक बदलाव में व द्धि करने वाले तत्त्वों को निर्धारित करता है। आर्थिक विकास में व द्धि तथा गिरावट दोनों विद्यमान है। एक अर्थव्यवस्था व द्धि कर सकती है परन्तु यह विकास नहीं कर सकती क्योंकि औद्योगिक विकास और संरचनात्मक परिवर्तनों की कमी के कारण गरीबी, बेरोजगारी तथा आय की असमानताएँ निरंतर विद्यमान रहती है।

वास्तव में विकास और व द्धि का अभिप्राय परिस्थितियों पर निर्भर करता है न कि अर्थव्यवस्था के अर्द्धविकसित या विकसित होने पर क्योंकि विकास स्थिर अवस्था में अपने आप परिवर्तन को प्रेरित करता है जो पहले से संतुलन अवस्था को बदलकर स्थापित करता है जबकि व द्धि दीर्घकाल में होने वाले निरन्तर परिवर्तन से है जो बचतों तथा जनसंख्या में व द्धि होने पर धीरे-धीरे आता है। यही परिभाषा उपयुक्त परिभाषा दिखाई देती है।

संस्थापित विकास
(Sustainable Development)

इसका अभिप्राय है वर्तमान जनसंख्या का भविष्यकाल के लिए साधनों को बचाकर रखना। अर्थात् दोनों समय (वर्तमान तथा भविष्यकाल) में जनसंख्या का साधनों का समान रूप से उपभोग करना। यदि शुरू से विकास की प्रक्रिया का आंकलन किया जाए तो यह कई स्तरों से गुजर कर यहाँ तक पहुँची है। पहले आर्थिक व द्धि से आर्थिक विकास से मानव विकास तथा Sustainable (संस्थापित) विकास।

अल्पविकसित देशों में लगातार जनसंख्या की व द्धि से प्राकृतिक साधनों का पूर्ण रूप से सदुपयोग नहीं हो पाता इसलिए व द्धि के लिए हम इन साधनों का दुरूपयोग करना आरम्भ कर देते है। जैसे बढ़ती जनसंख्या की माँग को पूरा करने के लिए बिजली की पूर्ति के लिए पानी का दोहन या किसी क्षेत्र में रोजगार के साधन बढ़ाने के लिए अधिक मात्रा में प्राकृतिक या उपस्थित साधनों का दोहन आरम्भ कर देते हैं। इसलिए पर्यावरण, आकाश की ओजोन परत दूषित है। इस तरह की समस्याएँ अर्थव्यवस्था में अपना स्थान बना लेती हैं। मानव संसाधन देश की पूंजी हैं। यदि इसको बचाए रखना है या इसके विकास को बनाए रखना है तो अर्थव्यवस्था को स्थापित विकास देना होगा ताकि भविष्य में पैदा होने वाली जनसंख्या को प्राकृतिक साधन जैसे पानी, साफ हवा रहने की व्यवस्था मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति की कमी न हो। यदि हम विकास के नाम पर इसी तरह इन साधनों का दोहन करते रहे तो भविष्य के लिए इनकी कमी हो जाएगी। विकास का अभिप्रायः जनता को शुद्ध वातावरण स्वच्छ पानी, रोजगार तथा मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने से होना चाहिए न कि केवल उत्पादन बढ़ाने से। इसलिए वर्तमान तथा भविष्य जनसंख्या के बीच उपलब्ध साधनों का समान रूप से प्रयोग ही संस्थापित विकास है।

विकास का माप
(Measurement of Development)

कुछ अर्थशास्त्री आर्थिक व द्धि को प्रति व्यक्ति कुल राष्ट्रीय उत्पाद से होने वाली व द्धि से मापते है। पहले इस तरह से माप के तरीके के ऊपर प्रश्नचिन्ह नहीं लगा था क्योंकि विकसित अर्थव्यवस्था में इसे लोगों को वस्तुओं और सेवाओं की आवश्यकता की पूर्ति के लिए ही नहीं बल्कि अर्थव्यवस्था को आगे बढ़ाने से लिया है। लेकिन अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में आर्थिक व द्धि को आर्थिक बुराइयों का कारण भी माना जाता है। क्योंकि अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में आर्थिक व द्धि से वस्तुओं कमी की पूर्ति तो हो जाती है लेकिन इसके साथ दूसरी समस्याएँ जैसे गरीबी, आय की असमानता तथा बेरोजगार की स्थिति अपने आप उभर आती है।

लेकिन वर्तमान स्थिति में इच्छित आर्थिक व द्धि पर प्रश्न चिन्ह लग गया है। यह केवल इन समस्याओं के निपटारे की वजह से नहीं है बल्कि पर्यावरण पर भी इसका प्रभाव नजर आता है। किसी अर्थव्यवस्था के लिए आर्थिक व द्धि इच्छित है यह उसके विकास के लिए पूर्ण नहीं है क्योंकि प्रति व्यक्ति आय में व द्धि देश में वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन को दर्शाती है। यह इन वस्तुओं और सेवाओं के प्रयोग से होने वाले कल्याण को मापने में असफल रही है। प्रायः प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय व द्धि में सामाजिक लागत को भी सम्मिलित रखना चाहिए जिसमें पर्यावरण दूषित होने जैसी समस्या उभर कर आती है।

राष्ट्रीय आय में बहुत सी वस्तुएँ और सेवाओं जैसे घरेलू कार्य को उत्पादन में शामिल नही किया जाता और न ही वे बाजार से होकर गुजरती है लेकिन अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में इस तरह की स्थिति प्रति व्यक्ति आय को प्रभावित करती है बढ़ी हुई राष्ट्रीय आय प्राकृति के साधनों के दुरूपयोग तथा आय के वितरण को भी वर्णित नही कर पाती, लकिन आय का वितरण आर्थिक कल्याण के स्तर को प्रभावित करता है। क्योंकि अल्प विकसित अर्थव्यवस्था में जहाँ आय की असमानता अधिक मात्रा में है। आय का बड़ा हिस्सा कुछ लोगों के हाथ में होता है और यदि इस हिस्से को गरीबी से प्रभावित क्षेत्र में बाँट दिया जाए तो आर्थिक कल्याण के स्तर में व द्धि एकदम उभर कर आएगी।

कुल राष्ट्रीय आय में होने वाली व द्धि को मापने की समस्या ये भी है कि सम्बन्धित कीमत हर देश में विभिन्न होती है जैसे चीन में आधारभूत वस्तुओं की कीमत कम है जहाँ पर लोग कम आय पर भी अपने जीवन स्तर को बनाए रख सकते हैं।

ऊपरलिखित बातों से यही तात्पर्य है कि आर्थिक विकास को मापने में अथवा आर्थिक विकास को बनाए रखने में आर्थिक व द्धि का योगदान है। लेकिन यह सिर्फ विकास एक छोटा सा हिस्सा है क्योंकि आय के स्तर और आर्थिक विकास की दर को निर्धारित करना कठिन है।

आधुनिक अर्थशास्त्री विकास को व्यक्तिगत और सामाजिक कल्याण की द ष्टि से देखते हैं। जो मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताओं, शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के अवसर जुटाने में आय और धन के वितरण की बात करते हैं। यह प्रव त्ति भी होती है कि आर्थिक कल्याण के हिसाब से विकास को परिभाषित किया जाए। ऐसी अवस्था में विकास की संभावना अधिक होती है जिसमें प्रति व्यक्ति वास्तविक आय में व द्धि होती है और साथ-साथ आय की असमानताओं का अन्तर कम होता है। इसलिए कुछ अर्थशास्त्रियों ने विकास को सामाजिक तथा मूलभूत आवश्यकता सूचक के रूप में मापना प्रारंभ किया है।

शताब्दी के मध्य तक GNP प्रति व्यक्ति को विकास का सूचक माना जाता रहा है इसके बाद सामाजिक कल्याण तथा विकास प्रक्रिया की गुणवत्ता की तरफ ध्यान देना आरंभ किया जिसमें गरीबी हटाना, आय की असमानता को कम करना, रोजगार के अवसर प्रदान करना शामिल किया गया। शिक्षा, स्वास्थ्य, जल, खुराक, कपड़े, आवास, काम आदि की तरफ विशेष ध्यान दिया गया जो मानव संसाधन विकास से उत्पादकता के उच्च स्तर प्राप्त करते हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या आर्थिक व द्धि और मूलभूत आवश्यकताओं की प्रकृति में कोई अन्तर है। नहीं ये दोनों एक दूसरे के पूरक है। मूलभूत आवश्यकताएँ लक्ष्यों से संबंधित है और आर्थिक व द्धि इन लक्ष्यों को पाने का साधन। जो देश अपने सकल घरेलू उत्पाद का बड़ा हिस्सा स्वास्थ्य तथा शिक्षा पर खर्च करते हैं वे अधिक कुशल है। इससे हम निष्कर्ष पर पहुँचते है कि मूलभूत आवश्यकताओं के अधिक स्थापन्न करने से आर्थिक व द्धि होगी। नॉरमन हिक्स ने भी अपने अध्ययन में इसी तथ्य का उल्लेख किया हैं।

अब प्रश्न यह उठता है यदि सकल राष्ट्रीय उत्पाद में व द्धि हो तो क्या यह विकास का सूचक है। लेकिन इसमें अथवा इसके माप में काफी कठिनाइयाँ है।

1. **सामाजिक न्याय** (Social Justice): आर्थिक व द्धि सामाजिक न्याय की समस्या को समझने में नाकाम रही है। क्योंकि यह केवल प्रति व्यक्ति के उत्पाद में होने वाली व द्धि के बारे में ही वर्णन करती है। इस उत्पादन व द्धि में समाज पर पड़ने वाले प्रभावों जैसे आय वितरण, गरीबी, वातावरण में गिरावट आदि के बारे में अध्ययन नहीं करती।

2. **राष्ट्रीय आय अंदाजे** (National Income Estimates): बहुत सी घरेलु वस्तुएँ तथा घर में निर्मित मशीनें चीजें बाजार से होकर नहीं गुजरती हैं। ऐसी अवस्था में राष्ट्रीय आय का आंकलन सही नहीं बल्कि इसका अंदाजा ही है। क्योंकि इन वस्तुओं का कीमत में आंकलन न होने से यह राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं होती हैं।

3. **प्राकृतिक साधन** (Natural Resaourcesa): राष्ट्रीय आय व द्धि में प्राकृतिक साधनों का कितना दुरूपयोग हुआ इस का वर्णन नहीं है। देश के प्राकृतिक साधन उस देश के विकास में अहम् योगदान दे सकते हैं। क्योंकि कई बार जनसंख्या व द्धि होने पर उसकी खाद्यान्न पूर्ति पूरी करने के लिए भूमि का गलत ढंग से प्रयोग करते है।

4. **आय का वितरण** (Distribution of Income): बढ़ी हुई राष्ट्रीय आय अथवा इसकी व द्धि आय के वितरण के बारे में कोई जानकारी प्रदान नहीं करती। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में आय की असमानता अधिक रहती है और राष्ट्रीय आय का बड़ा हिस्सा कुछ ही लोगों के हाथ में रहता है। इसलिए बड़ी हुई राष्ट्रीय आय आर्थिक कल्याण का व्याख्यान नहीं करती है।

5. **संबंधित कीमतें** (Relative Pricesa): बढ़ी हुई राष्ट्रीय आय अथवा प्रति व्यक्ति आय के द्वारा एक दूसरे की (अल्पविकसित और विकसित) अर्थव्यवस्था की तुलना करना न्यायसंगत नहीं है। हर देश की संबंधित कीमत अलग-अलग होती है कीमत कम या ज्यादा होने से व्यक्ति की वास्तविक आय पर भी प्रभाव पड़ेगा। एक अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में मूलभूत वस्तुओं की कीमत कम हो सकती है तथा दूसरी अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में अधिक हो सकती है। इसलिए प्रति व्यक्ति GNP से विकास अथवा कल्याण का माप सही नही है।

मानव विकास सूचकांक
(Human Development Index ([HDI])

1990 से संयुक्त विकास कार्यक्रम (UNDP) अपनी वार्षिक मानव विकास रिपोर्ट में मानव विकास सूचक के रूप में मानव विकास के माप को प्रस्तुत कर रहा है। HDI तीन सामाजिक सूचकों का एक मिश्रित सूचक है जिसमें आधारभूत पहलुओं जैसे शिक्षा,

स्वास्थ्य व न्यूटरिसन को लिया है। मानव विकास सूचक का मूल्य निकालने के लिए तीन आधारभूत सूचक लिए गए हैं। एक लम्बा व स्वस्थ जीवन, ज्ञान तथा उत्क ष्ट जीवन-स्तर

1. लम्बा व स्वथ्य जीवन (दीघार्यु) जिसे जन्म से लेकर जीवन की संभाव्यता से मापा जाता है।
2. ज्ञान (शैक्षिक योग्यता की प्राप्ति) जिसे वयस्क शिक्षा (दो तिहाई भार) तथा प्राथमिक माध्यिक व क्षेत्रीय विद्यालयों में उपस्थिति अनुपातों (एक तिहाई भार) के मिश्रण के रूप में मापा जाता है।
3. उत्क ष्ट जीवन स्तर, जिसे डॉलर की क्रय शक्ति समता (Purchasing Power Parity) (PPP) पर आधारित वास्तविक प्रतिव्यक्ति GDP द्वारा मापा जाता है। HDI की तीनों सूचक की गणना इन तीनों के संकेतों के योग को तीन से विभाजित कर निकाली जाती है। इसमें प्रत्येक चर का न्यूनतम तथा अधिकतम मूल्य स्थिर है, जिसे घटाकर शून्य तथा एक के बीच पैमाने पर रखा गया है तथा प्रत्येक देश इस पैमाने के किसी न किसी बिन्दु पर आता है।

HDI में निम्नलिखित सिद्धांतों को लिया गया है:

HDI, GNP को रिप्लेस नहीं करता बल्कि आय के साथ-साथ शिक्षा और स्वास्थ्य का भी माप है। यह उन नीतियों को निर्धारित करता है जो विकास को निर्धारित करती है न की उनके साधनों को।

प्रत्येक देश का HDI मूल्य यह दर्शाता है कि अपने परिभाषित लक्ष्यों में उसे कितनी सफलता मिली है तथा उसे कितना और प्रयास करना है।

राष्ट्रों के बीच मानव विकास की दरार को पाटना आसान है लेकिन आय की असमानता को पाटना मुश्किल है।

HDI में सामाजिक तथा आर्थिक दोनों तत्त्वों को लिया जाता है।

HDI की बनावट का तरीका

1. जन्म से लेकर जीवन की संभाव्यता= सूचक $= \dfrac{\text{वास्तविक मूल्य - न्यूनतम मूल्य}}{\text{अधिकतम मूल्य - न्यूनतम मूल्य}}$

$$\text{आय सूचक} = \frac{\log y - \log y \text{ न्यूनतम}}{\log y \text{ अधिकतम} - \log y \text{ न्यूनतम}}$$

$\therefore \log y$ न्यूनतम $= 100$

HDI हमें विकास की प्रगति की ओर जाने के बारे में बताता है लेकिन इसकी भी कुछ सीमाएँ है। केवल तीन सूचक ही विकास के सूचक नहीं है। दूसरे साधनों के साथ प्रति व्यक्ति GNP क्रमों को लेना भी आवश्यक है। यदि समान भारित दर से सभी देश अपने HDI मूल्य को सुधार ले तो निम्न मानव विकास वाले देशों के सुधार के बारे में पता लगाना मुश्किल है।

जीवन का भौतिक गुणवत्ता सूचक
(Physical Quality of Life Indices (PQLI))

मौरिस डी मौरिस ने PQLI को विकसित किया था उसने 1979 में विकसित तथा विकासशील देशों की सम्मिश्र भौतिक गुणवत्ता (Composite Physical Quality of Life) का तुलनात्मक अध्ययन किया। PQLI में तीन सूचकों का प्रयोग किया गया है। एक वर्ष की आयु में जीवन सम्भाव्यता, शिशु म त्यु दर तथा साक्षरता। प्रत्येक सूचक के तीनों घटकों को 1 से 100 के पैमाने (स्तर) पर रखा है। जिसमें एक को मन्दतम तथा 100 को सर्वोत्तम प्रदर्शन के रूप में परिभाषित किया है। तीनों घटकों को समान भार देते हुए औसत निकालकर PQLI की गणना की जाती है।

अध्ययन से पता चलता है कि आमतौर पर अधिक प्रति व्यक्ति GNP से PQLI की दर (स्तर) भी ऊँची होती है तथा कम प्रति व्यक्ति GNP से PQLI का स्तर भी नीचा रहता है। लेकिन कई बार यह अपवाद है। कुछ देशों में अधिक प्रति व्यक्ति GNP कम होने के बावजूद PQLI का स्तर ऊँचा रहता है। उदाहरणतया- चीन और श्रीलंका। सऊदी अरेबिया और कुटार में अधिक

प्रति व्यक्ति GNP के बावजूद PQLI का स्तर नीचा है। इसका अभिप्राय प्रतिव्यक्ति GNP दर तथा PQLI के बीच स्वतः कोई तालमेल नहीं है।

मौरिस ने यह स्वीकार किया है कि PQLI मूल आवश्यकताओं को केवल एक सीमा तक ही माप सकता है। यह आर्थिक विकास तथा कुल कल्याण को भी नहीं मापता यह सिर्फ अल्पविकास के विशेष क्षेत्रों का पता लगाने तथा सामाजिक नीतियों की असफलता के बारे में तथा समाज के विभिन्न वर्गों पर इसके प्रभाव की जानकारी प्राप्त करने का काम कर सकता है।

वर्तमान परिस्थितियों में HDI को ही विकास को मापने के लिए स्वीकृत किया है। जो 1990 में UNDP द्वारा प्रस्तुत किया गया था।

आर्थिक व द्धि तथा विकास को प्रभावित करने वाले तत्त्व
(Factors Affecting Economic Growth and Development)

आर्थिक व द्धि तथा आर्थिक विकास के बारे में पहले ही वर्णन कर चुके हैं।

प्राकृतिक साधन
(Natural Resources)

किसी भी देश के आर्थिक विकास को प्रभावित करने के लिए प्राकृतिक साधनों का अहम् योगदान है अर्थशास्त्र में प्राकृतिक साधन का अर्थ भूमि से है। इसकी उपजाऊ शक्ति, क्षेत्र, बनावट, वन-सम्पदा, खनिज पदार्थ, जन साधन आदि शामिल होते हैं। अल्पविकसित देशों में प्राकृतिक साधनों का सही ढंग से प्रयोग नहीं हो पाता है इसीलिए देश के विकास में इसका पूर्ण योगदान नहीं होता। प्राकृतिक साधनों के सदुपयोग से रोजगार खाद्यान्न तथा आर्थिक सुधार की रफ्तार में तेजी नहीं आ पाती। अल्पविकसित देशों में तकनीकी ज्ञान के अभाव की वजह से या तो इनका उपयोग नहीं होता है या अल्प-उपयोग या दुरूपयोग होता है। इस प्रकार यह कहा जाता है कि प्राकृतिक साधनों की कमी से विकास संभव तो हो सकता है लेकिन प्राकृतिक साधन किसी देश की व द्धि तथा विकास को किसी न किसी तरीके से अवश्य प्रभावित करते हैं।

किसी भी अर्थव्यवस्था में प्राकृतिक साधनों का अहम् स्थान है। इनका यदि सदुपयोग किया जाए तो भारत जैसे देश जो प्राकृतिक साधनों से लबालब भरे पड़े है इनके सदुपयोग से विकसित देशों की कतार में खड़े हो सकते हैं। अल्पविकसित देशों में औद्योगिक विकास का आधार प्राकृतिक साधन ही है। क्योंकि जनसंख्या का अधिकतर भाग कृषि पर आधारित है। और कृषि पर आधारित अनेक उद्योग धन्धे रोजगार के अवसर प्रदान करते हैं।

पूँजी
(Capital)

आर्थिक विकास की दूसरी रूकावट पूँजी है। अल्पविकसित देशों में पूँजी की कमी से उद्योगों का विकास नहीं हो पाता। नकर्से ने कहा है जिस देश में पूँजी की कमी महसूस नहीं होती उस देश के लोग अपनी उत्पादन क्रियाओं का अधिकतर भाग उपभोग पर खर्च नहीं करते। बल्कि उसके हिस्से को पूँजीगत वस्तुओं, मशीनों, परिवहन निर्माण तथा यंत्र निर्माण में लगा देते हैं। इसलिए पूँजी निर्माण का अभिप्राय पूँजी को पूँजीगत वस्तुओं में लगाना है जिससे उत्पादकता तथा राष्ट्रीय आय में व द्धि होती है।

अल्पविकसित देशों में पूँजी निर्माण को बढ़ावा देने के लिए उपभोक्ता को बचत के लिए प्रोत्साहित करना, वास्तविक बचतों में व द्धि करना बचतों को इकट्ठा तथा बचतों को एकत्रित करने से है। क्योंकि पूँजी आर्थिक व द्धि की पूँजी है। पूँजी निर्माण का अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में बहुत महत्त्व है यह बढ़ी हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने तथा रोजगार के अवसर जुटाने में सहायक है। अल्पविकसित देशों में पूँजी की कमी के कारण उत्पादन क्षमता कम होती है। इसीलिए जो देश गरीबी के दुष्चक्र में फंसे हुए है उनके लिए पूँजी निर्माण अत्यन्त आवश्यक है।

श्रम
(Labour)

उत्पादन में दो तत्त्वों का अहम् स्थान है पूँजी तथा श्रम। श्रमिक की दक्षता से उत्पादन क्षमता में व द्धि होती है। लुइस ने कहा

है- श्रम की उपलब्धि किसी देश के लिए वरदान का कार्य करती है यदि उसका सही ढंग से प्रयोग किया जाए। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में पूँजी की कमी से सामाजिक विकास पर कम ध्यान केन्द्रित रहता है। जिससे श्रम में अज्ञानता तथा अकुशलता तत्त्वों का समागम अधिक है। जिससे प्रति व्यक्ति उत्पादन क्षमता प्रभावित होती है। यदि श्रम का विशिष्टीकरण किया जाए तो उत्पादकता में व द्धि होती है। आर्थिक व द्धि में श्रम के विशिष्टीकरण को अधिक महत्त्व दिया गया है। हर श्रमिक कुशल होगा तो वह समय की बचत करता है वह नई मशीनों की खोज करने में भी समर्थ होता है जिससे उत्पादन में कई गुणा व द्धि होती है।

तकनीक
(Technology)

आर्थिक विकास में तकनीकी पिछड़ेपन की वजह से रूकावट आती है। अल्पविकसित देशों में उत्पादन तकनीक विकसित नहीं होती है जिसकी वजह से उत्पादन क्षमता प्रभावित होती है। शोध और विकास, उद्योग और शोध संस्थाओं के बीच मन्द आदान प्रदान और श्रम की अधिकता तथा पूँजी की कमी नवप्रवर्त्तन तकनीक को प्रयोग लाने में रूकावट है। अल्पविकसित देशों में प्रभावित संस्थाओं की कमी है जो उस देश के लिए उपयुक्त तकनीक का आविष्कार कर सकें। ऐसी अवस्था में अल्पविकसित अर्थवयस्था में इस तरह की तकनीक को आयात करने का प्रयत्न नहीं किया गया जो उस अर्थव्यवस्था में पूर्ण रूप से समाहित हों। अधिकतर उत्पादन क्षेत्रों में उत्पादक आधुनिक तकनीक को प्रयोग करना चाहते है लेकिन आदान-प्रदान की तथा कुछ जगह गरीबी की वजह से प्रयोग करने में रूकावट है। उदाहरण के तौर पर भारत कृषक को आधुनिक तकनीक जैसे नए खाद-बीज मशीनरी के बारे में ज्ञान है लेकिन गरीबी की वजह से वह परम्परागत तकनीक का ही प्रयोग करता है। यह भी सही है कि आधुनिक तकनीक को प्रयोग करने से कुछ मजदूरों की नौकरी चली जाएगी लेकिन यह स्थिति केवल कुछ समय के लिए हो सकती है।

मानव संसाधन विकास
(Human Resource Development)

अल्पविकसित देशों के आर्थिक विकास में अविकसित मानव संसाधन एक बड़ी बाधा हैं। ऐसे देशों में देश के विकास के लिए आवश्यक कुशलताएँ तथा ज्ञान वाले व्यक्तियों की कमी होती है। अविकसित मानव संसाधन की वजह से उत्पादन में अधिकतर परंपरागत तकनीक का प्रयोग किया जाता है जिससे कार्यकुशलता की कमी से उत्पादकता कम हो जाती है। यदि कुछ क्षेत्रों में आयातित नई तकनीक का प्रयोग भी किया जाता है तो उस तकनीक अथवा मशीनों का ठीक ढंग से प्रयोग न करने पर टूट फूट, की संभावना ज्यादा होती है। और इसका सही ढंग से उत्पादकीय उपयोग नहीं हो पाता इसलिए अविकसित मानव संसाधन से नीची उत्पादकता, कार्यकुशलता की कमी, विशिष्टीकरण का अभाव, सीमित व्यवसाय तथा परम्परागत रीतिरिवाजों आदि जैसी स्थिति अर्थव्यवस्था में बनी रहती है जो आर्थिक विकास के लिए रूकावट है और किसी भी देश को आगे बढ़ने से रोकती है।

(Infrastructure)

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में मूलभूत सुविधाओं की कमी रहती है जो उत्पादन के क्षेत्र (कृषि तथा उद्योग) को प्रभावित करती है। इन देशों में यातायात तथा संचार के साधन अपर्याप्त, बाजार के छोटे आकार की वजह से इन साधनों का कुशलतम प्रयोग नहीं हो पाता। व्यापार के प्रमुख केन्द्र बड़े-बड़े शहरों में स्थित होने से ग्रामीण क्षेत्र प्रभावित हैं। इससे 70 से 80% जनसंख्या जो ग्रामीण क्षेत्र में विद्यमान रहती है उसकी गतिशीलता में मन्दी रहती है। अल्पविकसित देशों में उन्नत तथा पिछड़ी तकनीको का साथ-साथ प्रयोग करने से एक क्षेत्र (कृषि) दूसरे क्षेत्र से पिछड़ जाता है। साधनों का पर्याप्त विकास न होने पर उत्पादन लागतें ऊँची रहती हैं। साथ-साथ देश में व्यापार का क्षेत्रीय असंतुलन बना रहता है जबकि विकसित देशों की उन्नति का प्रमुख कारण infrastructure का विकसित होना है।

अल्पविकसित देशों में उद्यमी योग्यता का भी अभाव पाया जाता है। प्रशिक्षित श्रम व प्रबन्ध की कमी, बाजार का आकार, पूँजी की कमी, निजी सम्पत्ति का अभाव, कच्चे माल व आर्थिक उपरिसुविधाएँ न मिलने पर भी कुशल उद्यमी नवप्रर्वतन की क्षमता पर निर्भर रहता है। हालाँकि ये आर्थिक विकास में बहुत बड़ी रूकावट है, उद्यमी को पनपने से भी रोकती है। इसलिए आर्थिक विकास के क्षेत्र में दूसरे तत्त्वों के साथ-साथ (यातायात, संचार के साधन, मशीनीकरण) उद्यमी का भी अहम् स्थान है जो आर्थिक विकास में एक बहुत महत्वपूर्ण कड़ी है।

इस प्रकार ये सभी तत्त्व आर्थिक विकास की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करते हैं। वे एक दूसरे पर भी निर्भर करते हैं। आर्थिक विकास अतिरेक द्वारा भी प्रभावित होता है। क्योंकि अतिरेक निवेश को तथा निवेश पूँजी निर्माण को प्रोत्साहित करते हैं। इनके साथ-साथ दूसरे व्यापार से संबंधित तत्त्व जैसे सामाजिक तथा राजनैतिक प्रशासन क्योंकि यदि सामाजिक तथा राजनैतिक प्रशासन ढीला होगा तो उद्यमी में असुरक्षा की भावना पैदा होगी जिससे आर्थिक विकास प्रभावित होगा। क्योंकि स्वच्छ, शक्तिशाली तथा न्यायपूर्ण शासन आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करेगा। लुइस ने कहा है- योग्य सरकार के बिना आर्थिक प्रगति नहीं की जा सकती।

अध्याय-2

अल्पविकास

(Underdevelopment)

अल्पविकसित देशों को परिभाषित करने के लिए विभिन्न अर्थशास्त्रियों के विभिन्न मत है। अर्थव्यवस्था में अल्पविकसित और अविकसित शब्दों को एक दूसरे के पर्यायवाची शब्द के रूप में देखा जाता है लेकिन ये दोनों अलग-अलग पहलू हैं। इन दोनों का अर्थ जानने के लिए इनको परिभाषित करना अत्यन्त आवश्यक है। 'अविकसित' उस देश के लिए प्रयोग किया जाता है जहाँ विकास की आशाएँ न हों, दूसरी ओर, 'अल्पविकसित' उस देश के लिए प्रयोग किया जाता है जहाँ विकास की संभावनाएँ हों जैसे भारत भी इस अवस्था का हिस्सा है। मूल रूप से 'अल्पविकसित क्षेत्र' वह क्षेत्र होता है जो उचित रूप से विकसित है, लेकिन उसे निर्धन वर्ग में रखा गया है, जबकि अविकसित क्षेत्र को 'विकसित' या जिसमें विकास की क्षमता न हो से परिभाषित किया है।

अल्पविकसित के कारण (कारक)
(Perpetuation of Underdevelopment)

दरिद्रता के दुश्चक्र (Vicions Circle of Poverty): गरीबी के दुश्चक्र और आर्थिक विकास पर इसकी मार को समझने के लिए अधिकतर अर्थशास्त्री (जिन देशों में ब्रिटिश राज का नियन्त्रण रहा है) गरीब होने का कारण मानते हैं। क्योंकि नियन्त्रण की वजह से विकसित होने की क्षमता प्रभावित हुई है। इन सभी अर्थशास्त्रियों में 'रेगनार नकर्से' का सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण है। जिन्होंने अपनी पुस्तक 'परोबलमस आफ कैपिटल फोरमेंसन इन अंडरडवलपड कंटरिज' में इस विषय का वर्णन किया है। नकर्से ने आर्थिक रूप से पिछड़े देशों में पूंजी प्रवाह को दो भागों में विभाजित किया है। पूँजीपूर्ति पक्ष व पूँजी माँग पक्ष। पूँजीपूर्ति पक्ष बचत करने की क्षमता व इच्छा को दर्शाता है। पूँजी माँग पक्ष निवेश प्रलोभन को दर्शाता है।

संसार के गरीबी पीड़ित क्षेत्रों में पूँजी निर्माण की समस्या दोनों तरफ से संबंध रखती है जैसे वास्तविक आय का निम्न स्तर (कम) नीची उत्पादकता दर्शाता है जो दोनों तरफ विद्यमान है।

नकर्से ने अपनी पुस्तक में इस तर्क को अधिक तर्क संगत तरीके से परिभाषित किया है- एक गरीब देश में बचत करने की क्षमता सीमित है। अधिकतर गरीब देश राष्ट्रीय आय का 10 प्रतिशत हिस्सा बचा पाते है जिससे विकासशील कार्यों के लिए पूँजी की कमी उत्पन्न हो जाती है। पूँजी की कमी की वजह से श्रम प्रधान तकनीक का प्रयोग उत्पादन क्षमता को गिरा देता है। अतः इस प्रकार पूर्ति की ओर से दुश्चक्र पूरा हो जाता है।

दूसरी तरफ वास्तविक आय का निम्न स्तर माँग के स्तर को गिरा देता है। जिससे आगे निवेश की दर गिर जाती है और यहाँ से हम वापिस पूँजी की कमी तथा उत्पादकता के निम्न स्तर पर आ जाते है।

सैमुलसन ने अपनी पुस्तक 'इकनॉमिक्सः एन इनटरोडक्टीव अनालाईसिस' में लिखा है "अविकसित देश पानी से बाहर अपना सिर नहीं निकाल सकते क्योंकि निम्न उत्पादन की वजह से पूँजी निर्माण के लिए उनके पास कुछ भी फालतू नहीं है जिससे उनका जीवन स्तर प्रभावित हो सकता है।"

इसलिए गरीबी का दुश्चक्र आर्थिक विकास को प्रभावित करता है। यह प्राकृतिक साधनों के प्रयोग को भी प्रभावित करता है। यदि लोग पिछड़े तथा अशिक्षित है और तकनीकी दक्षता, ज्ञान तथा उद्यमीय क्रियाशीलता का अभाव है, तो प्राकृतिक साधनों

सही उपयोग नही हो पाएगा जिससे उत्पादन क्षमता प्रभावित होगी और देश गरीबी के दुश्चक्र से बाहर नहीं निकल पाएँगे।

इस 'दुश्चक्र' से अर्थव्यवस्था को बाहर निकालने के लिए-पूँजी निर्माण को बढ़ाना, प्राकृतिक साधनों का विकास, बाजार की सुविधाओं का विकास, मानवीय साधनों का विकास, औद्योगिक उन्नति तथा अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन आवश्यक है जिससे संतुलित विकास की संभावना जन्म लेगी।

पूँजी निर्माण की निम्न दर
(Low Rate of Capital Formation)

आर्थिक विकास की सबसे बड़ी रूकावट पूँजी की कमी होती है। अल्पविकसित देशों में लगातार व द्वि के लिए पूँजी निर्माण एक आवश्यक पहलू है। अधिकतर अल्पविकसित देशों में कृषि क्षेत्र में सामन्तवाद की उपस्थिति कृषि में तकनीकी परिवर्तन को रोकती है क्योंकि सामन्तवाद की उपस्थिति कृषि में निवेश के लिए जोतने वाले के पास कोई साधन नहीं छोड़ती परिणामतः उत्पादकता के निम्न स्तर की वजह से आर्थिक अधिक्य की कमी होती है जिससे भूमि मालिक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि कृषि विकास में उसकी कोई रूचि नहीं है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक आधिक्य के दुरूपयोग पर रोक आवश्यक है। जमींदारी प्रथा खत्म होने के बाद वास्तविक जोत के पास भूमि अधिकार है, आर्थिक आधिक्य भी उसी के पास रहता है और वह इसको निवेश के लिए प्रयोग कर सकता है। जो देश इस तरह की परंपरा से पीछा नहीं छुड़ाते गरीबी का दुश्चक्र भी उनमें समाहित रहता है। उदाहरण के तौर पर भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक समारोहों में पूँजी का अधिक भाग खर्च किया जाता है जो खर्च न करके पूँजी निर्माण को बढ़ाने में अहम् योगदान दे सकता है।

शहरी क्षेत्र में आधुनिक उद्योगों ने जन्म लिया है लेकिन बाजार का छोटा आकार और पश्चिमी देशों का बढ़ता एकाधिकरण निवेशक को प्रभावित करता है। लेकिन अल्पविकसित देशों में इसके साथ-साथ काम करने वाले वर्ग की न्यूनतम मजदूरी की वजह से बचत करने की क्षमता कम होती है जो निवेश को प्रभावित करती है। यद्यपि इन देशों में सरकार उपभोग को कम करने के लिए वस्तुओं पर अप्रत्यक्ष कर लगाती है। शहरी क्षेत्रों में बचत करने की क्षमता ज्यादा होती है लेकिन बेकार के खर्चो में उपभोक्ता अपनी बचत का अधिक हिस्सा गवा देता है। और इससे पूँजी निर्माण को गहरा धक्का लगता है।

इसको नियन्त्रित करने का एक ही उपाय है सरकार का हस्तक्षेप सरकार को ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में उपभोग खर्च को कम करना होगा। यदि सरकार ऐसा नहीं कर पाती है तो उसे इस दुश्चक्र से निकलने में मुश्किल होगी क्योंकि इसके लिए पूँजी निर्माण की आवश्यकता है।

अपर्याप्त तकनीक
(Inappropriate Technology)

अल्पविकसित देशों में कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्र में उत्पादन कम होने का कारण उत्पादन की पुरानी तकनीक है। अधिकतर प्रयोग होने वाली तकनीक जो विकसित देशों में विकसित की गई है कुछ ही क्षेत्रों में प्रयोग की जाती है। पुरानी तकनीक का प्रयोग का मुख्य कारण जनसंख्या विस्फोट की स्थिति भी रही है क्योंकि जनसंख्या दबाब को नियन्त्रित रखने के लिए अल्पविकसित देशों को श्रम प्रधान तकनीक के प्रयोग की आवश्यकता लगातार रहती है उदाहरण के तौर पर भारत में कृषि में परम्परागत तकनीक के प्रयोग की वजह से आर्थिक विकास में इसका योगदान कम है।

दूसरी तकनीक जो अल्पविकसित देश प्रयोग में लाते है वह विकसित देशों से आयात की जाती है। इस प्रकार की तकनीक खासतौर से विकसित देशों के लिए बनाई जाती है लेकिन अल्पविकसित देशों की तकनीकी विकास में असफलता के कारण इन देशों के पास विकसित देशों से तकनीक आयात करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं है। आमतौर पर ये देश दूसरे दर्जे की तकनीक ही खरीद पाते हैं। यह उन्हें अपने उद्योग या अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन को विकसित करने में मदद करती है लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतिस्पर्द्धा शक्ति को सुधारने में मदद नहीं कर सकती। आजकल पश्चिम देशों में जो आधुनिक तकनीक प्रयोग की जाती है वह बहु नाजुक तथा पूँजी प्रधान है जो श्रम की खप्त न कर बेरोजगारी को बढ़ाती है। अधिकतर अल्पविकसित देशों में पूँजी कम तथा श्रम का आधिक्य है इसलिए विकसित देशों से आयात की हुई तकनीक अल्प विकसित देशों के उद्देश्य को पूरा नहीं कर पाएगी। यह सत्य है ही कुछ क्षेत्र इस अत्यधिक आधुनिक तकनीक का प्रयोग करते हैं। लेकिन यह मात्रा केवल 15% ही है। सुम्पीटर के अनुसार अन्तर्मधीय तकनीक ही उपयुक्त है जो अल्पविकसित देश में

परम्परागत तकनीक को कम करके तथा आयात तकनीक के ऊपर निर्भर न रह कर देश को विकास के रास्ते पर अग्रसर करती है।

जनसंख्या विस्फोट
(Population Explosion)

अल्पविकसित देशों में जनसंख्या की स्थिति विस्फोटक है। इन देशों में जनसंख्या के कारण उत्पादन का स्तर उतना नहीं बढ़ पाता जितनी तेज गति से उपभोग में व द्धि होती है। जनसंख्या विस्फोट से गरीबों की संख्या में व द्धि होती है। जनसंख्या के इस भाग को बाजार दर पर खाद्यान्न की उपलब्धि नहीं होती और सरकार कम कीमत पर खाद्यान्न प्रदान करती है। इसकी वजह से सरकार को उत्पादक को भी अच्छी कीमत देने का आश्वासन देना पड़ता है नहीं तो खाद्यान्न की पूर्ति में रूकावट आती है।

इसलिए बढ़ती जनसंख्या पिछड़ी अर्थव्यवस्था में साकारात्मक परिवर्तन में बाधक बन जाती है क्योंकि आर्थिक नीतियों का मुख्य उद्देश्य रोजगार प्रदान देने तक सीमित रहता है जिससे पूँजी निर्माण को गहरा धक्का लगता है और अल्पविकसितता का कारण बनता है।

राजनैतिक व प्रशासनिक बाधाएँ
(Political and Administrative Obstacles)

अल्पविकसित देशों में राजनैतिक व प्रशासनिक ढाँचा भी विकास में एक बड़ी बाधा बना हुआ है। इन देशों में राजनैतिक भ्रष्टाचार, देश में बार-बार सरकार का बदलना, राजनैतिक दलों द्वारा हड़ताल तथा सरकारी मशीनरी का दुरूपयोग भी देश को विकास के पथ पर जाने में रूकावट है। दूसरी तरफ विकसित अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए इन देशों को गुटों में बाँट कर रखती है। और आर्थिक सहायता के लिए भी इन देशों को विकसित देशों पर निर्भर रहना पड़ता है।

दूसरी तरफ अल्पविकसित देशों का प्रशासनिक ढाँचा भी विकास में बाधा है। बेरोजगारी की वजह से भाई-भतीजावाद, पक्षपात तथा भ्रष्टाचार की स्थिति जन्म ले लेती है। अल्पविकसित देशों के सार्वजनिक क्षेत्र का काफी फैलाव हुआ है लेकिन भ्रष्टाचार तथा अनिपुणता की वजह से इस पर प्रश्न चिन्ह लगा हुआ है। प्रशासनिक ढाँचा भी राजनीति से प्रेरित होता है जिससे देश में लोग सरकारी कार्य को पूरी निष्ठा से नहीं करते और प्रशासनिक दक्षता कम हो जाती है। प्रशासनिक दक्षता की कमी सार्वजनिक तथा निजी दोनों क्षेत्रों में विकास को प्रभावित करती है।

बाहरी प्रतिप्रभाव
(External Bottlenecks)

विकसित और अल्पविकसित देशों के बीच आर्थिक सम्बन्ध आर्थिक विकास में एक बड़ी बाधा साबित हो रहे हैं। व्यापार का परम्परावादी सिद्धांत इस बात की वकालत करता है कि इन देशों के बीच आर्थिक सम्बन्ध कुछ समय के लिए ही लाभकारी हैं। गुनार मिरडल का भी यही विचार है व्यापार सिद्धान्त अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सन्तुलन सिद्धान्त से बिल्कुल विपरीत है क्योंकि बाजारी ताकते उत्पादन के साधनों तथा आय की समानता के बारे में नहीं सोचती है। उनका कहना है आर्थिक विकास एक चक्रव्यूह की तरह है जिसमें जो विकसित देश है इसका अधिक फायदा उठाते हैं और अल्पविकसित देश इस दौड़ में पीछे रह जाते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार खुल जाने से अल्पविकसित देशों के आयात में व द्धि हुई है और निर्यातों पर निर्भर रहने से इनको अपनी वस्तुओं की माँग तथा कीमत को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में उतार-चढ़ाव के खतरों में डाल दिया है। कीमत कम करने के बावजूद भी ये निर्यात का लाभ नहीं उठा पाते क्योंकि उनकी निर्यात की पूर्ति लोचरहित होती है।

अल्पविकसित देशों में विदेशी निवेश का भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। विदेशी निवेश निर्यात को बढ़ाने के लिए किया गया है जिससे प्राथमिक क्षेत्र में उत्पादन के स्तर, आय तथा जीवन स्तर नहीं बढ़े। वास्तविक मजदूरी की दर भी नीची रही है क्योंकि प्रबंधात्मक मजदूरी व लाभों के कारण पूँजी का बड़ा हिस्सा विदेशी लोगों के हाथों में चला जाता है।

प्रो रॉल प्रैबिश के विचार में अल्पविकसित देशों का व्यापार के क्षेत्र में पतन हुआ है। आयात पर नियन्त्रण रखने के लिए औद्योगिक विकास में आधुनिक तकनीक का प्रयोग न करने से वंचित रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में दक्षता की कमी, पूँजी निर्माण तथा आर्थिक व द्धि भी घटी है। इसलिए व्यापार का लाभ भी विकसित देशों को अधिक हुआ है।

सामाजिक सांस्कृतिक बाधाएँ
(Socio-cultural Obstaclesa)

अल्पविकसित देशों में सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाएँ भी अल्पविकसित देशों के विकास को प्रभावित करती हैं। अल्पविकसित देशों में जाति, धर्म, सामाजिक बुराइयों तथा सांस्कृतिक परम्परा से देश को विभाजित कर देते हैं। जैसे नकर्से ने कहा है "आर्थिक विकास अधिकतर मानवीय गुणों, सामाजिक ढाँचा, राजनैतिक परिस्थितियों से संबंध रखता है। एक श्रमिक के रूप में यदि उसकी योग्यता का आंकलन जाति, धर्म तथा सामाजिक स्तर से किया जाए तो यह आर्थिक विकास में सबसे बड़ी रूकावट है। क्योंकि उत्पादन में संभावित योगदान से कोई संबंध नहीं होता इसके परिणामस्वरूप कुशलता को क्षति पहुँचती है। इसलिए नकर्से ने कहा है प्रगति के लिए पूँजी आवश्यक तो है लेकिन विकास के लिए केवल पूँजी का होना ही काफी नहीं है।

अल्पविकास पर संरचनात्मक विचार
(Structural View on Underdevelopment)

एक कृषक परम्परागत समाज से आधुनिक औद्योगिक अर्थव्यवस्था में परिवर्तन को संरचनात्मक ढाँचे में परिवर्तन कहते हैं अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन-रोजगार में व द्धि, श्रम उत्पादन तथा पूँजी स्टाक में व द्धि से है।

एक अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में 70 से 80 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर होती है। संरचनात्मक परिवर्तन से कृषि पर जनसंख्या की निर्भरता को कम करके अकृषि क्षेत्र में संलग्न करना है अथवा एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में रोजगार का स्थानान्तरण और साथ-साथ राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान कम होने से है। कृषि का योगदान कम होने का अभिप्राय यह नहीं है कि कृषि में उत्पादन की कमी होती है बल्कि भूमि सुधार तथा नवीनतम तकनीक के प्रयोग की वजह से और साथ-साथ बाजार के अच्छे संगठन से इसकी कमी को पूरा करने से है।

जब कृषि उत्पादन में व द्धि होती है तो कृषक समाज की आय में व द्धि होने के साथ-साथ उनकी माँग में भी बढ़ोतरी होती है जो औद्योगिक क्षेत्र के प्रसार को भी प्रोत्साहित करती है। क्योंकि कृषि और उद्योग क्षेत्र एक दूसरे के पूरक है। कृषि उत्पादन में व द्धि से इस क्षेत्र में मशीनरी का उपयोग बढ़ जाता है जो उद्योग क्षेत्रो द्वारा निर्मित की जाती है। दूसरी तरफ कृषि उत्पादकता और आय बढ़ने से औद्योगिक क्षेत्र की उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं की माँग बढ़ जाती है। इस तरह का बदलाव संरचनात्मक विचारों में परिवर्तन से ही संभव है।

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में एक त तीय क्षेत्र भी उभर कर आता है। प्राथमिक तथा द्वितीय क्षेत्र अथवा कृषि तथा औद्योगिक व द्धि के साथ यातायात, संचार, शिक्षा, आदि सेवाओं में भी व द्धि होती है। इसलिए आर्थिक विकास के साथ त तीय क्षेत्र में भी श्रम का अनुपात बढ़ जाता है। लेकिन प्राारम्भिक अर्थव्यवस्था में बड़े क्षेत्रों जैसे रेल इत्यादि में श्रम की बजाय पूँजी का स्थानान्तरण ज्यादा होता है। इसलिए श्रम को खपाने में इस अवस्था में असफल रहते हैं।

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक विचारों का व्याख्यान तीसरा क्षेत्र अथवा नया क्षेत्र खुलने से भी किया जा सकता है। खुलापन से बाजार में विस्तार से विदेशी बाजार का निर्माण भी जन्म ले लेता है जिससे लोगों में श्रम तथा पूँजी की भौतिक सीमाओं को पार करने की होड़ लग जाती है अथवा यह अर्थव्यवस्था के फैलाव को प्रेरित करती है।

संरचनात्मक विचारों का परिवर्तन समाज के सामाजिक, प्रशासनिक तथा सांस्कृतिक ढाँचे में परिवर्तन लाता है। समाज रूढ़िवादिता को छोड़कर अधिक तीव्र आर्थिक उन्नति की ओर अग्रसर होता है। क्योंकि संस्थात्मक परिवर्तन, तकनीकी दक्षताओं और उद्यमी क्रियाओं को प्रभावित करते हैं। जिनके द्वारा बचतों को एकत्रित करके उत्पादित क्षेत्रों में लगाया जाता है।

इसके साथ-साथ प्रशिक्षित वर्ग जैसे वैज्ञानिक, इंजीनियर, प्रबंधक तथा प्रशासक आदि की कमी अल्पविकसित अर्थव्यवस्था को प्रभावित करती है। इसलिए प्रशिक्षण संबंधी संस्थाओं को विकसित करने की आवश्यकता महसूस होती है इसलिए

संरचनात्मक परिवर्तन के लिए सरकार को उद्यमियों को प्रोत्साहन, कानून व्यवस्था, तकनीकी प्रगति और नवप्रवर्तन की सुविधाओं को अधिक विकसित करने की आवश्यकता है तभी देश में संरचनात्मक परिवर्तन सहायक सिद्ध हो सकेगे।

अल्पविकास का मापदण्ड
(Criteria of Underdevelopment)

अल्पविकास के बारे में पहले ही वर्णन किया जा चुका है। अल्पविकसित देशों को पिछड़े, कम विकसित तथा विकास की संभावना वाले देश कह सकते है। अल्पविकास को हम आय (प्रति व्यक्ति आय, कुल आय) से मापते है। लेकिन कुछ अर्थशास्त्रियों ने तर्क दिए है कि प्रति व्यक्ति GNP विकास मापने का सही तरीका नहीं है। यदि प्रति व्यक्ति आय के हिसाब से देखें तकरीबन सभी विकासशील देश गरीब है। वे भौतिक साधनों, आर्थिक स्तर, जनसंख्या का आकार, कम मानव विकास की प्राप्ति, ऐतिहासिक भूत और सामाजिक और राजनैतिक स्तर में भिन्न है फिर भी आय के हिसाब से गरीब हैं। इसलिए अल्पविकसित देशों का ढाँचा अलग होने के बावजूद एक वर्ग में रखना उचित नहीं। निम्नलिखित बातों से अल्पविकसित देशों के संरचनात्मक ढाँचे का वर्णन किया जा सकता है।

आकार और आय स्तर
(Size and Income Level)

भौगोलिक क्षेत्र, जनसंख्या आकार तथा आय का स्तर किसी देश की उत्पादन क्षमता को निर्धारित करता है। बड़ा भौगोलिक क्षेत्र होने पर विभिन्न साधनों की प्राप्ति को निश्चित करता है, जनसंख्या का आकार यदि उसका सही ढंग से प्रयोग किया जाए तो बाजार के आकार में व द्धि होगी। इसलिए अल्पविकसित देश का आकार तथा जनसंख्या का आकार विकास में अहम् भूमिका अदा कर सकता न कि केवल प्रति व्यक्ति GNP।

ऐतिहासिक प ष्ठभूमि
(Historical Background)

सभी अल्पविकसित देशों का इतिहास एक जैसा नहीं होता। बहुत से देश पश्चिम यूरोपियन देशों की कोलोनी रह चुके हैं। किसी अल्पविकसित देश में हो सकता है भूत में किसी दूसरे देश का नियन्त्रण न रहा हो। दूसरे देशो का नियन्त्रण उस देश की विकास शक्ति को बाधित करता है इसलिए सभी देशों का मापदण्ड एक तरीके से करना न्यायपूर्ण नहीं है।

साधनों की उपलब्धता
(Availability of Resources)

अल्पविकसित देशों में साधनों की उपलब्धता अलग-अलग होती है। यदि किसी अल्पविकसित देश में साधनों की उपलब्धता ज्यादा है तो वहाँ विकास की संभावना ज्यादा है। साधनों से यहाँ हमारा अभिप्राय मानव व भौतिक साधनों से है। हालाँकि साधनों की उपलब्धता विकास करने के लिए अपने आप में पूर्ण नहीं है। यह विकास के लिए केवल एक साधन है। लेकिन यदि किसी अल्पविकसित देश में इस तरह के साधन बिल्कुल ही न हो तो विकास की संभावना पर असर पड़ता है। यह भी सही है कि साधनों की कम उपलब्धता होने के बावजूद कई देशों में विकास की गति तेज है। दूसरे शब्दों में भौतिक साधन एक आवश्यक पहलू है विकास के लिए परिपूर्ण नहीं। दूसरा है मानव संसाधन। अल्पविकसित देश इसमें भी एक दूसरे से भिन्न हैं शिक्षा का स्तर तथा उसकी गुणवत्ता भी भिन्न है। इसलिए विभिन्न ढाँचों या साधनों के भिन्न-भिन्न होने के बावजूद एक ही तरीक से अल्पविकास का मापदण्ड सही नहीं है।

दरिद्रता तथा आय की असमानता
(Poverty and Inequality of Income)

अल्पविकसित देश की विशिष्टता उसकी गरीबी तथा आय की असमानता है। इसका मुख्य कारण उत्पादन में पुराने तरीकों का प्रयोग तथा सामाजिक व सांस्कृतिक पिछड़ापन है, जो विकास में रूकावट बनता है। अल्पविकसित देशों में प्राकृतिक साधनों को सही तरीके से प्रयोग में न लाना, पूँजी की कमी, उत्पादन की पुरानी तकनीक आदि दोष है इसलिए अल्पविकास के मापदण्ड में इन सभी तत्त्वों का भी प्रभाव पड़ता है।

पिछड़ा औद्योगिक क्षेत्र
(Backward Industrial Sector)

अल्पविकसित देशों में औद्योगिक क्षेत्र छोटा तथा पिछड़ा है। अधिकतर देशों में अपनी उत्पादित वस्तुओं के उत्पादन करने की भी क्षमता नहीं होती। ऐसी अर्थव्यवस्था में उत्पादन का बड़ा हिस्सा कृषि क्षेत्र से प्राप्त होता है। जनसंख्या का 70 प्रतिशत भाग कृषि पर निर्भर है। अधिकतर अल्पविकसित देशों में इस तरह की समस्या देखने को मिलती है। लेकिन श्रम की खपत अलग-अलग अल्पविकसित देशों में अलग है। कुछ देशों में 30 से 80 प्रतिशत श्रम कृषि तथा उससे सम्बन्धित क्रियाओं में संलग्न होता है। जैसे एशिया व अफ्रीका। लेकिन कुछ अल्पविकसित देशों में यह खपत कृषि क्षेत्र, में घटकर 20 प्रतिशत रह जाती है। यदि तुलना की जाए तो विकसित देशों में श्रम की उत्पादकता अल्प विकसित देशों की बजाय कम होती है।

प्रति व्यक्ति निम्न आय
(Low Per Capital Income)

किसी भी अल्पविकसित देश की प्रति व्यक्ति आय विकसित देश की अपेक्षा कम होती है। अल्पविकसित देशों का मापदण्ड का तरीका अधिक उपयुक्त तब है जब इन देशों में भावी संभावनाएँ हो कि वह तकनीकी विकास कर पाएगा। जनसंख्या का जीवन स्तर उठाने की क्षमता, उद्योगों का विकास, प्राकृतिक साधनों का सदुपयोग, प्रति व्यक्ति आय का स्तर पहले से ऊँचा हो अर्थात प्रति व्यक्ति आय बढ़ाने या बढ़ी हुई जनसंख्या पर वर्तमान प्रति व्यक्ति आय स्तर बनाकर रखने की क्षमता हो। यह उपयुक्त मापदण्ड है किसी भी अल्पविकसित के अल्प विकास को मापने का।

अल्पविकसित देश की विशिष्टताएँ
(Characteristics of Underdevelop Country)

किसी भी देश की समस्याओं को जानने के लिए आवश्यक है उस देश की रूपरेखा के बारे में सम्पूर्ण जानकारी।

गरीबी की अधिकता
(Widespread Poverty)

अल्पविकसित देशों में गरीबी का जाल फैला हुआ होता है। उसकी गरीबी प्रति व्यक्ति आय से झलकती है। अल्पविकसित देश जैसे भारत में प्रति व्यक्ति आय 460 डालर है जबकि अमरीका जैसे देशों में 34000 डालर है। अल्पविकसित देशों में चिकित्सा सुविधाओं की भी कमी होती है। भारत में 2530 व्यक्तियों पर एक डाक्टर है जबकि अमरीका में 460 व्यक्तियों पर एक डाक्टर है। शिक्षा तथा स्वास्थ्य की सेवाएँ नाम मात्र की पाई जाती हैं। अल्पविकसित देशों में कुपोषण की मात्रा अधिक पाई जाती है। एक अनुमान के अनुसार भारत में करीब 28 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा से नीचे निर्वाह करते हैं। जनसंख्या का काफी बड़ा हिस्सा अस्वस्थकारी परिस्थितियों में रहता है। जिनके लिए शौचालय, स्वच्छ पानी आदि की कोई व्यवस्था नहीं है। अल्पविकसित देशों में शिशु म त्यु दर भी काफी मात्रा में पाई जाती है। इसके कारण कुपोषण, असुरक्षित जल, सफाई का न पाना, माता पिता की अज्ञानता तथा रोगों की प्रति रक्षा का अभाव पाया जाता है। इस प्रकार एक अल्पविकसित देश में गरीबी न खत्म होने वाली बिमारी है जिसके चक्र में वह फंसा रहता है और बाहर नहीं निकल पाता।

निम्न उत्पादकता
(Low Level of Productivity)

अल्पविकसित देशों में श्रम की उत्पादकता का स्तर नीचा होता है। श्रम की उत्पादकता अल्पविकसित देश में रहने वाले लोगों के जीवन स्तर पर प्रभाव डालती है। श्रम की उत्पादकता कम होने का मुख्य कारण स्वास्थ्य तथा श्रम की कार्यकुशलता की कमी पाई जाती है। कृषि क्षेत्र में अधिकतर परम्परागत तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। कृषि, असंगठित क्षेत्र इत्यादि में मजदूरी परम्परागत तरीके से निर्धारित होती है जो बहुत मुश्किल के बावजूद भी निर्वाह मजदूरी से ऊपर नहीं पहुँच पाती। इन सबके बावजूद बैंकिंग संरचना तथा प्रशासनिक स्तर भी कमजोर पाया जाता है जिससे मशीनीकरण का कम मात्रा में प्रयोग होने से उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

कृषि पर निर्भरता
(Dependence on Agriculture)

अल्पविकसित देशों की जनसंख्या का बड़ा भाग कृषि पर आश्रित है। भारत में इसकी मात्रा लगभग 70 प्रतिशत है। उन्नत देशों में जितने लोग कृषि पर निर्भर करते है उनसे कई गुना लोग अल्पविकसित देशों में कृषि पर निर्भर करते है। कृषि में अधिकतर पुरानी तथा पिछड़ी तकनीकों का प्रयोग किया जाता है इसका परिणाम यह होता है कि पैदावार अनिश्चित रूप से कम रहती है। अधिकतर किसान गुजारे के स्तर पर जीवित रहते है। कुछ समय से अधिकतर देश कृषि में नई तकनीकों का प्रयोग करते है जिससे उत्पादन में कई गुणा वुद्धि हुई है। लेकिन अधिकतर अल्पविकसित देश प्राथमिक क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था में ही फंसे रहते हैं। प्राथमिक क्षेत्र के साथ अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में द्वितीय तथा त तीय दोनों क्षेत्र भी अल्पविकसित होते है।

दोहरी अर्थव्यवस्था
(Dual Economy)

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में दोनों क्षेत्र विकसित तथा अल्पविकसित समाहित है। एक क्षेत्र पिछड़ा होता है जिसमें गरीबी इत्यादि समस्याएँ है और जिसको ग्रामीण क्षेत्र का नाम दिया है दूसरा शहरी क्षेत्र जिसमें अर्थव्यवस्था अत्यन्त आधुनिक होती है। जीवन की सभी सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं। जैसे कार, बसें, टेलिफोन, स्कूल, कॉलिज तथा सुन्दर इमारतें तथा उद्योग दिखाई पड़ते है लेकिन ग्रामीण क्षेत्र में इसके बिल्कुल विपरीत। निर्वाह अर्थव्यवस्था पिछड़ी हुई तथा पूर्ण रूप से कृषि पर आधारित होती है। खुले व्यापार की वजह से कुछ क्षेत्र विदेशियों द्वारा संचालित किए जाते हैं। जो त तीय अवस्था में पाए जाते है तथा अत्यन्त पूँजीवादी होते हैं। इस प्रकार के क्षेत्रों से अर्जित लाभ विदेशी अपने देश ले जाते हैं। जिससे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था कंगाल बन जाती है इसका असर यह पड़ता है कि ये देश आर्थिक रूप से दरिद्र हो जाते है। इसलिए अर्थव्यवस्था की यह दोहरी प्रकृति विकास को रोकती है तथा आर्थिक प्रगति में रूकावट है।

उपभोग व्यय अधिक तथा बचत कम
(High Consumption Expenditure and Low Saving)

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में उत्पादन का अधिकतर भाग उपभोग कर लिया जाता है। इससे अतिरेक की मात्रा कम हो जाती है जिससे निवेश प्रभावित होता है। ऐसी अवस्था में निवेश पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। अल्पविकसित देशों में आय का स्तर निम्न होने से बचत करने की क्षमता भी कम होगी। नकर्से का कहना है कि अल्पविकसित देश गरीबी के दुश्चक्र में फँस जाते है इसलिए भी वे ज्यादा बचत नहीं कर पाते। दूसरी तरफ जिन लोगों में बचत करने की क्षमता अधिक है या जो बचत कर सकते है वे बेकार उपभोग पर आय का अधिक भाग खर्च कर देते है जिससे नकर्से के मुताबिक पूँजी की कमी हो जाती है।

अल्प-रोजगार या छिपी हुई बेरोजगारी
(Under-employment or Disguised Unemployment)

छिपी हुई बेरोजगारी से अभिप्राय है श्रमिक की संख्या बढ़ाने या कम करने से सीमांत उत्पादक शून्य रहती है। अल्पविकसित देश में जनसंख्या का बड़ा हिस्सा कृषि पर निर्भर करता है। इस प्रकार छिपी हुई बेरोजगारी कृषि क्षेत्र में पाई जाती है। इस तरह की बेरोजगारी ऐच्छिक नहीं अनैच्छिक होती है। क्योंकि कृषि क्षेत्र में परम्परागत साधनों का प्रयोग अधिक मात्रा में किया जाता है। इसलिए अनैच्छिक बेकारी की समस्या कृषि क्षेत्र में ही ज्यादा है इसका मतलब लोग काम करना चाहते हैं लेकिन पूरक साधनों की कमी के कारण सारा साल कोई काम नहीं मिल पाता। हालाँकि इस एनैच्छिक बेरोजगारी की मात्रा का पता लगाना मुश्किल है लेकिन कृषि क्षेत्र में लगभग 25 से 30 प्रतिशत पाई जाती है।

तकनीकी पिछड़ापन
(Technological Backwardness)

अल्पविकसित देशों में लगभग 70 प्रतिशत लोग ग्रामीण क्षेत्र में रहते हैं। जिनका प्रमुख व्यवसाय कृषि है। इस क्षेत्र में उत्पादन के पुराने ढंगों का प्रयोग किया जाता है कृषि ही नहीं उद्योग में भी पुरानी तकनीक का प्रयोग किया जाता है। कृषि क्षेत्र में

साधनों की पूरक कमी के कारण कृषक कृषि में अधिकतर पुरानी तकनीक प्रयोग करते हैं जिससे प्रति एकड़ उत्पादन कम प्राप्त होता है। अल्पविकसित देशों में संचार, यातायात के साधन तथा श्रमिकों की अकुशलता बाजार का आकार भी छोटा होता है। इन साधनों के अपर्याप्त विकास के कारण उत्पादन लागते ऊँची रहती हैं। इस वजह आर्थिक पिछड़ापन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसलिए कृषि तथा उद्योग दोनों क्षेत्र में उत्पादन की कमी का कारण तकनीक पिछड़ापन भी है।

विदेशी व्यापार में कम योगदान
(Low Participation in Foreign Trade)

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में विदेशी व्यापार अनुस्थापित होता है। इसका अभिप्राय अल्पविकसित देशों में प्राथमिक वस्तुओं का निर्यात तथा पूँजीगत वस्तुओं का आयात होता है। इससे देश की अर्थव्यवस्था पर उल्टा प्रभाव पड़ता है। पुरानी तकनीक प्रयोग करने तथा उत्पादन लागत अधिक होने की वजह से अल्पविकसित देश अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में प्रतियोगिता नहीं कर पाते। इसलिए व्यापार सन्तुलन बनाए रखने के लिए ये देश प्राथमिक वस्तुओं (जो लगभग 80%) है उसका निर्यात करते हैं। इससे अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था के कुछ देश प्राथमिक वस्तुओं जैसे खाद्यान्न, कपड़ा, उपभोक्ता वस्तुएँ इत्यादि भी आयात करते हैं तथा आयात करने की प्रव त्ति भी बढ़ जाती है। खुले व्यापारी की क्रियाओं से विदेशी पूँजी बढ़ने से भी अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। क्योंकि लाभ कमाने की प्रव त्ति से वे अधिक से अधिक शोषण करते है। विदेशी पूजीपतियों का मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना है इस से अल्पविकसित देशों की ऋण की स्थिति तथा विदेशी विनिमय की स्थिति अधिक गंभीर हो जाती है।

अपर्याप्त पूंजी
(Insufficient Capital)

अल्पविकसित देशों की ये भी एक विशिष्टता है। यहाँ न केवल पूंजी संचय कम होता है बल्कि पूंजी निर्माण की वर्तमान दर भी कम होती है। अल्पविकसित देशों में राष्ट्रीय आय का बहुत छोटा भाग निवेश किया जाता है। बचत की निम्न दर से बढ़ती हुई प्रव त्ति जनसंख्या की व्यवस्था के लिए भी काफी नहीं।

अल्पविकसित देशों में पूंजी की कमी का मुख्य कारण कम बचत है अथवा आर्थिक व द्धि बढ़ाने वाले साधनों में निवेश की मात्रा कम है। क्योंकि प्रति व्यक्ति आय कम होने से बचत करने की क्षमता कम होती है तथा जनसंख्या का बड़ा हिस्सा निर्वाह मजदूरी पर निर्भर है। इसलिए ये बचत नही कर पाते। अल्पविकसित देशों में आय की असमानता अधिक मात्रा में पाई जाती है। आय का अधिक भाग केवल कुछ लोगों के हाथ में होता है। जो आय का काफी हिस्सा शान शौकत बढ़ाने के लिए खर्च कर देते हैं इसलिए अधिक बचत करने वाला वर्ग भी अधिक बचत नहीं करता, जिसका निवेश में अहम् योगदान है। इसलिए अल्पविकसित अर्थ व्यवस्था में पूंजी की कमी लगातार बनी रहती है।

जनसंख्या व द्धि
(Population Growth)

अल्पविकसित देशो में जनसंख्या अधिक तेज गति से बढ़ती है लेकिन उत्पादन की मात्रा उतनी गति से नहीं बढ़ पाती। ऐसी अर्थव्यवस्था में खाद्यान्न की कमी रहती है। और इसी कारण अन्य वस्तुओं की कीमतें बढ़ती है। जो पूंजी निर्माण की प्रक्रिया को धीमा कर देती है।

आर्थिक नीतियाँ
(Economic Policies)

अल्पविकसित देशों की गलत आर्थिक नीतियाँ भी उनके विकास में बाधा हैं। अल्पविकसित देशों में जनसंख्या का अधिकतर भाग ग्रामीण क्षेत्र में रहता है। इन क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं की कमी रहती है। अधिकतर लोग वस्तु विनिमय प्रणाली का ही अनुकरण करते है। गाँव के साहुकार तथा बनिया ही उनकी शाखा अथवा ऋण संबंधी जरूरतों को पूरा कर देते हैं।

जो जनसंख्या शहर में रहती है। कर का अधिकतर भार उन्हें की सहन करना पड़ता है क्योंकि कृषि में केवल भूमि कर ही लगाया गया है। इसलिए ये नीतियाँ देश को विकास की ओर बढ़ने से रोकती हैं।

अध्याय-3

विकास के परम्परागत सिद्धांत

(Classical Theories of Development)

परम्परावादी

(Classical Economists)

अर्थशास्त्रियों ने जिसमें आमतौर पर एडम स्मिथ, रिकार्डो तथा माल्थस का नाम लिया जाता है, पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में अपने विचारों की अभिव्यक्ति की है। इन तीनों अर्थशास्त्रियों की Basic Approach (मूलभूत सोच) एक ही है। लेकिन कहीं-कहीं विचारों की टकराहट नजर आती है। यह टकराहट विकास के मुद्दों से संबंधित है। इसलिए यदि इन तीनों अर्थशास्त्रियों को एक मंच पर रखा जाए या इन को एक इकाई समझा तो यह अतिश्योक्ति न होगी।

एड्म स्मिथ

(Adam Smith)

एड्म स्मिथ के आर्थिक विकास के सिद्धांत को उतनी महत्त्वता नहीं मिल पाई है जितनी उसके मूल्य व वितरण सिद्धान्त को मिली है। इरमा एडलममन ने कहा है एडमस्मिथ का सिद्धांत तीन बातों पर निर्भर करता है; श्रम विभाजन (श्रम उत्पादकता) पूँजी संचय की प्रक्रिया तथा जनसंख्या व द्धि।

एड्म स्मिथ का सिाद्धांत मुक्त व्यापार के पक्ष में तथा नियमित आर्थिक विकास के विरूद्ध है।

एड्म स्मिथ ने अपनी विख्यात पुस्तक “An Enquiry into the Nature and Causes of the Wealth of Nations” जो 1776 में प्रकासित हुई मुख्यतः आर्थिक विकास की समस्या से संबद्धित है। यद्यपि उसने इसके बारे में व्यवस्थित सिद्धांत प्रतिपादित नहीं किया। फिर भी उनका सिद्धांत निम्न बातो का वर्णन करता है। उत्पादन सिद्धांत में एड्म स्मिथ ने तीन भूमि, श्रम व पूँजी

$\longrightarrow$ $Y=f(L,K,N)$

L = Labour force (श्रम)

K= Capital Stock (पूँजी)

N= Land (भूमि)

एड्म स्मिथ घटती सीमांत उत्पादकता के बारे मे न बात कर Producito function को Increasing Returns to Scale से जोड़ता है। उसकी राय में बाजार के आकार में व द्धि होगी, आन्तरिक तथा बाहरी अर्थव्यवस्था में वास्तविक उत्पादन की लागत को कम करना पड़ेगा यह अपने आप समय के साथ परिवर्तित होगा। उत्पादन तकनीक मे सुधार से श्रम विभाजन की संभावनाएँ बढ़ जाएगी जो न केवल उत्पादन तकनीक से प्रभावित होगी बल्कि इस पर बाजार के आकार का भी प्रभाव पड़ेगा। बाजार का आकार पूँजी के साथ घरेलू तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर लगे प्रतिबंध से निर्धारित होगा। इसलिए पूँजी संचय की पहली शर्त है श्रम विभाजन बढ़ेगा। बाजार के विरूद्ध प्रतिबंध लगाने से बाजार का आकार सीमित होगा तथा श्रम विभाजन भी सीमित होगा। इसलिए उत्पादन में व द्धि श्रम विभाजन से नहीं बल्कि पूँजी संचय से है। एड्म स्मिथ ने सुधरी हुई प्रौद्योगिकी (Technology) को भी महत्त्व दिया है। इससे श्रम विभाजन तथा बाजार का विस्तार होता है। तथा घरेूल तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का विस्तार विशेषरूप से लाभदायक है।

श्रम शक्ति में व द्धि
The Growth of Labour Force

देश में जिस दर से जनसंख्या की व द्धि होती है। उसी से श्रम की व द्धि भी निर्धारित होती है। एड्म स्मिथ के अनुसार जनसंख्या की व द्धि दर मानव निर्वाह के लिए उपलब्ध साधनों पर निर्भर करती है। स्मिथ की राय में यदि वास्तविक मजदूरी निर्वाह मजदूरी से अधिक है तो जनसंख्या में व द्धि होगी और यदि जीवन निर्वाह मजदूरी से कम है तो जनसंख्या घटेगी। इसलिए श्रम माँग तथा श्रम पूर्ति में सन्तुलन की आशा की जाती है।

दूसरी तरफ श्रम की माँग तथा पूर्ति पर मजदूरी का भी प्रभाव पड़ता है यदि मजदूरी की दर बढ़ती है तो जनसंख्या बढ़ेगी क्योंकि Working Population की माँग है। यदि मजदूरी घटती है तो जनसंख्या की दर भी घटेगी।

पूँजी संचय की प्रक्रिया
(Process of Capital Accumulation)

स्मिथ के अनुसार व द्धि प्रक्रिया में पूँजी संचय की प्रक्रिया एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। उसके अनुसार यह श्रम विभाजन से पहले होना चाहिए। उसकी राय में व द्धि निवेश के स्तर पर निर्भर करती है। इसलिए आर्थिक विकास की समस्या लोगों की बचत करने की क्षमता तथा देश में अधिक निवेश करने की योग्यता पर निर्भर करता है। स्मिथ ने पूँजी संचय प्रक्रिया में मजदूरी, ब्याज तथा लाभ और लगान को लिया है।

मजदूरी उस राशी के बराबर होती है जो जीवन निर्वाह के लिए काफी है। यदि जीवन निर्वाह स्तर की अपेक्षा मजदूरी कोष बढ़ जाए तो कार्यकुशलता में व द्धि होगी तथा श्रम शक्ति बढ़ जाएगी। रोजगार के लिए प्रतियोगिता तीव्र गति से बढ़ेगी परिणाम मजदूरी फिर वास्तविक स्तर पर आ जाएगी। जो मजदूर वास्तविक मजदूरी स्तर से पहले ज्यादा मजदूरी प्राप्त करते थे उनको जीवन निर्वाह में कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। इससे काम करने वाले श्रमिक कम हो जाएँगे। श्रमिकों को रोजगार पर लगाने से पूँजीपत्तियों में प्रतियोगिता से मजदूरी में व द्धि होगी यह प्रक्रिया चलती रहेगी जिसको Growth of Labout Force में वर्णित किया है। इसका अभिप्राय मजदूरी कोष बचतों से बनता है इस प्रकार शुद्ध निवेश से मजदूरी को बढ़ाया जा सकता है।

स्मिथ के अनुसार सम द्धि, विकास तथा जनसंख्या व द्धि से ब्याज की दर कम होगी। स्मिथ ने पूर्ति वक्र का स्लोप नकारात्मक दिखाया है। मतलब ब्याज की दर घटने से पूँजी संचय की प्रक्रिया बढ़ेगी। क्योंकि साहुकार कम ब्याज की दर होने से जीवन निर्वाह में कठिनाई महसूस करेंगे परिणाम वे खुद उद्यमी का रूप ले लेगें। पूँजी संचय तभी कम होगा जब लाभ की दर से ब्याज की दर से कम हो। पूँजीपति निवेश तभी करते है जब लाभ की आशा हो। स्मिथ के अनुसार आर्थिक विकास से भी लाभ की मात्रा मे कमी आएगी क्योंकि जब पूँजी संचय की दर बढ़ती है तो पूँजीपतियों मे बढ़ती प्रतियोगिता से लाभ कम हो जाते है।

एड्म स्मिथ के अनुसार आर्थिक प्रगति से लगान की मात्रा में व द्धि होगी तथा राष्ट्रीय आय में इसका हिस्सा बढ़ेगा। क्योंकि समाज की सम द्धि के साथ-साथ भूमिपतियों का हित भी जुड़ा है।

विकास प्रक्रिया
(The Growth Process)

स्मिथ के अनुसार विकास प्रक्रिया से अभिप्रायः एक अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में आय स्तर और पूँजी संचय दोनों बढ़ने से है साथ-साथ पूँजी प्रक्रिया की दर भी बढ़ने की स्थिति को दर्शाती है इससे निवेश बढ़ने से पूँजी संचय में बढ़ोतरी होगी जो बचत पर निर्भर करती है। इससे (आर्थिक व द्धि) से बाजार के विस्तार को प्रोत्साहन मिलता है जिसके कारण श्रम विभाजन में व द्धि होती है और इस प्रकार उत्पादकता बढ़ती है। स्मिथ के अनुसार यह प्रक्रिया संचयी (Cumulative) होती है। और यह क्रम लगातार चलता रहता है (जैसे श्रम विभाजन लाभ में व द्धि बाजार का विस्तार तकनीकी उन्नति आदि) परन्तु यह प्रगतिशील अवस्था सदैव नहीं रहती पूँजीपतियों में प्रतिर्स्पधा लाभ की मात्रा को कम कर देती है। जब अर्थव्यवस्था अपने साधनों का पूर्ण विकास कर लेती है तो ऐसी सम द्ध अर्थव्यवस्था मे वास्तविक मजदूरी गिरकर जीवन निर्वाह मजदूरी तक पहुँच जाती है क्योंकि

श्रमिकों में रोजगार की प्रतिस्पर्धा बढ़ जाती है। इन दोनों परिस्थितियों में निवेश भी प्रभावित होता है। निवेश घटने से पूँजी संचय भी कम होता है। इस प्रकार विकास का अन्तिम परिणाम होता है। स्मिथ अवस्था- ऐसी अवस्था में पूँजी संचय रूक जाता है मजदूरी का जीवन निर्वाह तक पहुँचना। जनसंख्या स्थिर लाभ न्यून्तम तथा प्रति व्यक्ति आय तथा उत्पादन में कोई अन्तर नहीं होता। अर्थव्यवस्था गतिहीन की अवस्था मे पहुँच जाती है यह सब मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था में होता है।

रिकार्डो का सिद्धान्त
(The Ricardian Theory)

डेविड रिकार्डो ने अपनी पुस्तक "The Principles of Political Economy and Taxation" में एडम स्मिथ की तरह अव्यस्थित ढंग से आर्थिक विकास के बारे में अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। रिकार्डो ने मूल्य तथा वितरण सिद्धान्त की अपेक्षा आर्थिक विकास मे कम रूचि थी। सूम्पीटर के अनुसार रिकार्डो ने वितरण के सिद्धान्त के साथ अर्थशास्त्र का व्याख्यान किया है। रिकार्डो का विश्लेषण सीमांत और अतिरेक नियमों पर आधारित है 'सीमान्त नियम' राष्ट्रीय आय में लगान के भाग की व्याख्या करता है और 'अतिरेक नियम' बाकी बचे भाग मे लगान के विभाजन व मजदूरी की।

रिकार्डो की उत्पादन प्रणाली में तीन तत्त्वों को शामिल किया है-भूमि, श्रम व पूँजी जो एड्म स्मिथ की तरह ही दिखाई देता है लेकिन रिकार्डो का सिद्धान्त घटती सीमांत उत्पादकता तक सिमटता है जो भूमि की अलोच्य पूर्ति तथा इसकी बदलती कुवालटी। रिकार्डो का मानना है कि यदि तकनीक विकास लागु न किया जाए तो उत्पादन के सभी साधनों की सीमांत उत्पादकता कम होगी। ⟶

रिकार्डो का Production Function $Y=F(K, L, N, S)$

स्मिथ की तरह से K, L, N का अभिप्रायः समान है एक नया तत्त्व जोड़ दिया है S से इसका अभिप्रायः है तकनीकी ज्ञान

भूमि और मानव संसाधन
(Land and Human Resources)

भूमि पर घटते प्रतिफल का नियम लागू होता है रिकार्डो के अनुसार, भूमि की पूर्ति भी स्थिर है। रिकार्डो का जनसंख्या सिद्धान्त स्मिथ ही तरह है। स्मिथ की तरह रिकार्डो ने भी बाजार मजदूरी दर व प्राकृतिक मजदूरी दर में अन्तर किया हैं रिकार्डो का मत है बाजार मजदूरी पर प्राकृतिक मजदूरी दर से अधिक भी हो सकती है और कम भी। यदि बाजार मजदूरी दर वास्तविक मजदूरी दर से ज्यादा है तो जनसख्या बढ़ेगी यदि कम है तो जनसंख्या का स्तर घटता है। यदि दोनों प्रकार की मजदूरी एक दूसरे के बराबर है तो जनसंख्या की प्रवत्ति में कोई बदलाव नहीं होगा। समानता के बावजूद रिकार्डो का मत जनसंख्या व द्धि के बारे में स्मिथ से अलग है। उसका मत है कि यदि आवश्यक वस्तुओं अर्थात जो वस्तुएँ मजदूरों द्वारा अधिक मात्रा में उपभोग की जाती है उनकी कीमत में व द्धि होने पर ही बाजार मजदूरी दर मे बढ़ोत्तरी होगी तथा जनसंख्या की व द्धि प्रभावित होगी। इसलिए जब मजदूरी की माँग मजदूरी की पूर्ति से ज्यादा होती है तो बाजार मजदूरी मे व द्धि होती है और जनसंख्या व द्धि में मोड़ आ जाता है। बड़ी हुई जनसंख्या (शुरू में) पहले तो बढ़ी बाजार मजदूरी का लाभ लेती है लेकिन बाद में यह गिरकर जीवन निर्वाह स्तर तक पहुँच जाती है। न्यूनतम बाजार मजदूरी जनसंख्या बढ़ने की प्रव त्ति को रोक देती है। यह चक्र जब तक चलता रहता है जब तक मजदूरी की माँग मजदूरी की पूर्ति के बराबर न हो।

पूँजी संचय
(Capital Accumulation)

रिकार्डो के अनुसार पूँजी का संचय लाभ से होता है। लाभ से धन कमाया जाता है जो पूँजी निर्माण में काम आता है। पूँजी संचय की दर बचत करने की क्षमता तथा बचत करने की इच्छा पर निर्भर करती है। बचत करने की क्षमता अर्थव्यवस्था की कुल आय पर निर्भर करती है तथा बचत करने की इच्छा (शुद्ध) कुल लाभ पर निर्भर करती है। रिकार्डो के मत में शुद्ध (कुल) आय का अभिप्रायः है। श्रमिकों के जीवन निर्वाह के पश्चात् कुल उत्पादन में से सरपलस के रूप में बचती है जितना सरपलस अधिक होगा। पूँजीपति इस अतिरेक (Surplus) का निवेश करते है जो लाभ की मात्रा पर निर्भर करता है।

रिकार्डो के अनुसार लाभ की दर निवेशित पूँजी के लाभों के अनुपात के बराबर होती है। जब तक लाभ की दर बढ़ती रहेगी तब तक पूँजी संचय होता रहेगा। श्रम की मात्रा में अनुपातिक व द्धि होती रहेगी क्योंकि लाभ मजदूरी की मात्रा पर निर्भर करते है। मजदूरी की मात्रा मजदूरों द्वारा उपभोग करने वाली वस्तुएँ (अनाज) कीमत में व द्धि तथा अनाज की कीमत भूमि की उर्वरता पर। इस प्रकार लाभ और मजदूरी में विपरीत समबन्ध है। लाभ मजदूरी के बढ़ने पर बढ़ते है। लेकिन मजदूरी अनाज की कीमत से यदि कृषि में मशीनों का प्रयोग किया जाए तो मजदूरों की कम खपत होगी तथा उत्पादन शक्ति भी बढ़ेगी परिणाम अनाज की कीमतें कम होगी इससे मजदूरी कम होगी तथा उत्पादकता बढ़ने से लाभ की मात्रा बढ़ेगी। पूँजी संचय भी बढ़ेगा-इससे श्रम की माँग बढ़ेगी और मजूदरी दर में व द्धि होने से जनसंख्या बढ़ने के कारण अनाज की कीमतों और माँग मे व द्धि होगी तथा मजदूरी मे और व द्धि होगी। इस प्रकार मजदूरी बढ़ने का कारण लाभ की मात्रा कम होगी। लेकिन यह निरन्तर प्रक्रिया का अन्त नही है। रिकार्डो का मत है कि बढ़ी हुई जनसंख्या के दबाव के घटिया किस्म की भूमि पर खेती की जाती है। ऐसी स्थिति में न्यून्तम लाभ की दर पर कोई अतिरेक नहीं होता है। पूंजी का संचय रूक जाता है, मजदूरी जीवन निर्वाह स्तर तक गिरने की प्रव त्ति, लाभ कम (शून्य) हो जाते है ऐसी अवस्था में जनसंख्या व द्धि भी नहीं होती आर्थिक प्रगति रूक जाती है जिसे स्थिर अवस्था का नाम दिया है।

रिकार्डो की निरन्तर प्रक्रिया
(Ricardian Dynamic Process)

रिकार्डो सिद्धांत स्थिर अवस्था स्थैतिक संतुलनों की तुलना तक सीमित नहीं है। रिकार्डो का सिद्धांत निरन्तर प्रगतिशील प्रतिक्रिया है। जब मजदूरी निर्वाह स्तर पर स्थिर हो जाती है। तो जनसंख्या व द्धि रूक जाती है लेकिन आय की मात्रा शुन्य तक नहीं गिरती है लेकिन लाभ की मात्रा एक व्यापार में न्यूनतम खतरे से अधिक होती है जो नए निवेश को प्रभावित करता हैं इससे मजदूरी की माँग में व द्धि होगी। यदि मजदूरी की माँग पूर्ति से ज्यादा है तो मजदूरी में व द्धि होगी और जनसंख्या भी बढ़ेगी। इस लघु समय में मजदूरी बढ़ने से लाभ प्रभावित होगे लेकिन मजदूरी की बढ़ी पूर्ति अपनी माँग को खुद निधार्रित करेगी, और अर्थव्यवस्था नए सन्तुलन स्तर पर पहुँचेगी इसमें अर्थव्यवस्था पहली तथा दूसरी अवस्था भिन्न होगी। रिकार्डो की स्थिर स्थैतिक अवस्था। निरन्तर प्रक्रिया से भिन्न होगी। रिकार्डो का मत है कि इस समस्या का निवारण सिर्फ जनसंख्या नियन्त्रण है। नहीं तो यह प्रक्रिया लगातार चलती रहेगी।

रिकार्डो के सिद्धांत की समीक्षात्मक टिप्पणी
(Critical Evaluation of Ricardian Theory)

1. रिकार्डो का सिद्धान्त कृषि क्षेत्र को ज्यादा महत्त्व देता है। उनका मत है कि यदि कृषि विकास पर जोर दिया जाए तो औद्योगिक विकास भी संभव है। क्योंकि उद्योगिक विकास कृषि पर निर्भर करता है। यह तथ्य भारत जैसे देशों पर भी लागू होता है।

2. रिकार्डो ने पूँजी संचय बढ़ाने के लिए बचत को ज्यादा महत्त्व दिया है उनका सोचना है कि यदि बचत ज्यादा है तो पूँजी प्रक्रिया ज्यादा होगी और पूंजी प्रक्रिया के ज्यादा होने पर पूँजी संचय भी बढ़ेगा।

3. रिकार्डो सिद्धान्त में लाभ पूँजी संचय पर निर्भर करता है। लेकिन लुइय जैसे अर्थशास्त्री इस मत से सहमत नहीं है। पूँजी संचय दीर्घकालीन प्रक्रिया है। इसलिए अल्पविकसित देशों के लिए पूर्ण रूप से सही नही बैठता है।

4. रिकार्डो ने Dynamic Theory (गत्यात्मक सिद्धान्त) का भी उल्लेख किया है। यदि आर्थिक विकास पर प्रभाव डालने वाले तत्त्व जैसे जनसंख्या, लाभ, लगान, मजदूरी आदि का क्रमबद्ध तरीके से अध्ययन किया जाए तो यह विकास की प्रक्रिया लगातार चलती रहेगी।

5. रिकोर्डो ने खुले बाजार के बारे में भी तर्क प्रस्तुत किए है। रिकार्डो के अनुसार आर्थिक व द्धि में सुधार लाने के लिए विदेशी व्यापार को महत्त्व देना आवश्यक है इससे साधनों का उचित प्रयोग होने से आय में व द्धि होगी लेकिन दूसरे अर्थशास्त्रीयों जैसे मार्क्स आदि ने इसका खंडन किया है। उसका मानना है कि इससे उद्यमी श्रम वर्ग का अधिक शोषण करेगा तथा वर्ग संघर्ष की स्थिति भी पैदा हो सकती है।

माल्थस का विकास सिद्धान्त
(Malthus Theory of Development)

माल्थस ने इस समस्या को अपनी पुस्तक Principles of Political Economy में धन (आर्थिक विकास) उन्नति के नाम से व्याख्या की है। माल्थस का सिद्धांत जनसंख्या से जुड़ा है। माल्थस का कहना है कि आर्थिक विकास स्वाभाविक नही है बल्कि लोगों के गहन प्रयास से है। माल्थस का सिद्धान्त धन व द्धि से जुड़ा है। धन व द्धि से विकास में व द्धि होती है। इसकी व द्धि जनसंख्या (श्रम) द्वारा उत्पादन की मात्रा तथा उत्पादन के मूल्य पर निर्भर करती है। उसका मत है कि धन व द्धि के बिना भी जनसंख्या मे बढ़ोतरी रहती है। इन दोनों का साथ-साथ बढ़ना आवश्यक नही है-उदाहरण के तौर पर गरीब देशों में जनसंख्या का दबाव। जनसंख्या के बढ़ने से आर्थिक विकास में व द्धि नही होती क्योंकि हो सकता है प्रभावित माँग न बढ़े जो माल्थस के विचार में आर्थिक व द्धि बढ़ाने का मुख्य कारण है। मजदूर प्रभावित माँग बढ़ाने में फेल हो जाते है क्योंकि मजदूरी दर की माँग की कमी की वजह से क्रय शक्ति कम होती है स्मिथ और रिकार्डो की तरह माल्थस के विचार मे पूँजी प्रक्रिया की दर पर श्रम की माँग निर्भर करती है।

माल्थस, स्मिथ और रिकोर्डो के मत बचत निवेश से असहमत है। क्योंकि बचत का कोई भी प्रभाव देश के धन को बढ़ाएगा। माल्थस का सिद्धान्त का एक विचार से बाजार का नियम (Say's Law of Market) कि पूर्ति अपनी माँग स्वयं निंधारित करती है से असहमत है क्योंकि बचत बढ़ाने से प्रभावित माँग घटेगी तथा उपभोग में गिरावट होने से लाभ तथा निवेश कम होगें। यह सिद्धान्त पूर्ण रूप से प्रभावित माँग पर आधारित है।

Malthusian's view -

$Y=R+W$

$R=Y-W$

Y= राष्ट्रीय आय

R= लाभ $\quad R=(I+Cc+Cw) - Cw=I+Cc$

Cw= उपभोग (मजदूर)

Cc=उपभोग (पूँजीपति)

I=निवेश

इसका अभिप्राय है कि मजदूरों को निर्वाह मजदूरी मिलती है और बचत की क्षमता नहीं होती वे सारी मजदूरी उपभोग पर खर्च करते है। पूँजीपतियों की कमाई उपभोग की मात्रा से अधिक होती है इसलिए अपनी आय का कुछ हिस्सा बचाते है। यह आवश्यक नही है कि पूँजीपतियों की सारी बचत निवेश रूप ले लेती है। बचत से आय तथा बढ़ती है जब इसका निवेश हो। यदि इस प्रकार प्रव त्ति नहीं होती है तो पूँजीपतियों की बचत से आर्थिक व द्धि नहीं होगी। माल्थस बचत तथा निवेश के महत्त्व को पहचानते है लेकिन कुछ समय के पश्चात् लाभकारी निवेश की संभावना कम हो जाती है क्योंकि मजदूरों की मजदूरी बढ़ने से वे सारी मजदूरी अपने उपभोग पर खर्च करेगें और पूँजीपित अपनी बचत में व द्धि करने के लिए मितव्यतता करेंगे परिणाम प्रभावी माँग की कमी होगी जो राष्ट्रीय आय पर उल्टा प्रभाव डालेगी और यह चक्र लगातार चलता रहता है। इसको माल्थस ने आर्थिक गतिहीनता का नाम दिया है। जो मजदूरी बढ़ने पर भी प्रभावी माँग नही बढ़ा पाती है लाभ कम हो जाते है और निवेश भी कम हो जाता है।

माल्थस के अनुसार इस कमी को कम वाले तत्त्वों पर काबु पाया जा सकता है यदि विभिन्न पहलुओं पर विचार किया जाए।

माल्थस ने अथव्यवस्था को दो भागों मे बाँटा है कृषि तथा औद्योगिक क्षेत्र तकनीकी विकास से इन दोनों मे विकास हो सकता है कृषि में निवेश तब तक किया जाता है जब तक घटते प्रतिफल का नियम लागू न हो इसलिए निवेश के अवसर औद्योगिक क्षेत्र में होते है। भूमि पर घटते प्रतिफल से तभी बचा जा सकता है जब उद्योगों में तकनीकी विकास तेजी से हो यदि इस निवेश

से औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार के अधिक अवसर उपलब्ध कराए जाएँ और कृषि से औद्योगिक क्षेत्र में जनसंख्या का हस्तान्तरण हो। इसलिए माल्थस संतुलित विकास की बात पर ज्यादा ध्यान देता है जो कृषि में भूमि सुधार आदि तथा दोनों क्षेत्रों में तकनीकी विकास से सम्बन्ध रखती है।

संक्षेप में माल्थस का विकास सिद्धांत प्रभावी माँग से सम्बन्धी है। देश को कृषि तथा औद्योगिक क्षेत्र में अधिक उत्पादन करना चाहिए। इसके लिए तकनीकी विकास, धन और भूमि का समान वितरण, व्यापार का विस्तार, लोक निर्माण, योजनाओं के जरिए रोजगार के साधन जुटाना इसके साथ-साथ गैर आर्थिक तरीके जैसे शिक्षा, सही प्रशासन, श्रमिक श्रमशील आदतें तथा नैतिक स्तर आदि से आर्थिक विकास की ओर जा सकते हैं।

परम्परावादी अर्थशास्त्रीयों में स्मिथ, रिकार्डो तथा माल्थस के विचार अलग-अलग प्रस्तुत किए है लेकिन इन की प्रव त्ति एक ही है तथा विचारों का समागन ही अलग है। तीनों, मुक्त व्यापार, पूँजी संचय, तकनीकी प्रगति, जनसंख्या व द्धि, पूंजी का संचय इत्यादि की बात करते है जो पहले ही अलग-अलग वर्णित किया जा चुका है।

मार्क्स का आर्थिक विकास सिद्धांत
(Marx's Theory of Economic Development)

मार्क्स के आर्थिक विकास के सिद्धांत में अर्थव्यवस्था में उत्पादन प्रक्रिया को इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या से आंकल करने पर जोर दिया है। यह स्पष्ट करने का प्रयत्न करती है कि समस्त ऐतिहासिक घटनाएँ समाज के भिन्न-भिन्न वर्गों के बीच लगातार आर्थिक संघर्ष का परिणाम है। इस संघर्ष का मुख्य कारण है उत्पादन का तरीका (Mode of Production) तथा उत्पादन का सम्बन्ध (Means of Production) उत्पादन का तरीका की सबसे बड़ी विशेषता है कि उत्पादन के साधन के ऊपर मजदूरों का नियन्त्रण नही होता है। इसलिए उत्पादन के साधन पर पूर्ण रूप से पूँजीपतियों का नियन्त्रण होता है जो मजदूर प्रक्रिया को चालू रखते हैं। मार्क्स के अनुसार प्रत्येक समाज का ढाँचा सम्पत्तिहीन तथा सम्पत्तिवान व्यक्तियों से बना है। उत्पादन की विधि में परिवर्तन होता है इसलिए ऐसी स्थिति आती है जब उत्पादन की शक्तियाँ समाज के वर्ग ढाँचे से टकराती है। इस टकराहट से वर्ग संघर्ष जन्म लेता है जो संघर्ष धनी व निर्धन के बीच-जो अन्त में सारी सामाजिक प्रणाली को नष्ट कर देता है।

मार्क्स के अनुसार उत्पादन प्रक्रिया में तीन तत्त्वों को शामिल किया है-स्थिर पूँजी जो उत्पादन में प्रयोग करने वाली मशीनरी व (कच्चे माल) मैटिरियल की लागत है। दूसरा तत्त्व है परिवर्तित पूँजी है जो मजदूरी शक्ति की कीमत से आँका है। और इसे (V) का नाम दिया है। स्थिर पूँजी को (C) का नाम दिया है। तीसरा तत्त्व (S) अर्थात Surplus (अतिरेक) लिया है जो शोषण की अवस्था को दर्शाता है। इस प्रकार वस्तु का कुल मूल्य=C+V+S है। स्थिर पूँजी व परिवर्तित पूँजी के अनुपात को पूँजी की संगठित रचना (Organic Composition of Capital) कहा है। (C/V) अतिरेक (Surplus) मूल्य की दर (शोषण) की कोटि (Degree of Exploitation) के रूप मे व्याख्या किया है (S/V)

यदि (C/V) बढ़ती है तो लाभ की मात्रा कम होती है तथा S/V बढ़ती है तो लाभ की मात्रा अधिक होती है।

मार्क्स के अनुसार पूँजी की मात्रा भी लाभों पर निर्भर करती है जितना पूँजी श्रम का अधिक खून चुसती है उतनी ही लाभ की मात्रा में व द्धि होती है तथा पूँजी संचय अधिक होता यही से वर्ग संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है।

पूँजी संचय का यह परिणाम होता है कि भारी उद्योग में पूँजी का केन्द्रीयकरण हो जाता है। इससे पूँजीपतियों में प्रतियोगिता की वजह से उन्हें अपनी वस्तु सस्ती करने पर विवश करते हैं। यह तभी संभव है जब श्रम की बचत करने के लिए मशीनें लगाई जाएँ जिनसे श्रम उत्पादकता बढ़ती है। जो पूँजीपति इस तरह की व्यवस्था नहीं कर पाते वे प्रतियोगिता से बाहर हो जाते है। और बड़े पूँजीपति उनके उद्यमों को हथिया लेते है।

परम्परावादी अर्थशास्त्रीयों की तरह मार्क्स भी श्रम की पूर्ति बढ़ने से जनसंख्या व द्धि की बात करता है। बहुत सी तकनीक पूँजी से श्रम को बदल देती है जिससे बेरोजगार की स्थिति पनपती है। इस प्रक्रिया में (तकनीक) औद्योगिक रक्षित सेना उत्पन्न होती है जो पूँजीवाद के विकास के साथ बढ़ती है। मार्क्स के अनुसार औद्योगिक रक्षित सेना जितनी अधिक होगी रोजगार पर लगे श्रमिकों की स्थिति उतनी ही खराब होगी क्योंकि तकनीक (मशीनी) उपयोग से रोजगार के अवसरों में कटौती हो गई

है। इसलिए पूँजीपति मजदूरी को घटाकर भूखमरी के स्तर पर भी ला सकते है तथा अधिक मजदूरी माँग करने वाले, हड़ताल इत्यादि श्रमिकों को बाहर निकालकर नए श्रमिक भी लगा सकते है। यहाँ पूँजीवादी के अर्न्तगत जनसाधारण की बढ़ती विपत्ति का नियम है। इसलिए अतिरेक श्रम द्वारा ही पूँजी संचय होता है यह अतिरेक श्रम केवल पूँजीपतियों के लाभ बढ़ाता है। यही उसका उद्देश्य है और यहीं से वर्ग संघर्ष पनपता (शुरूआत) है।

संक्षेप में मार्क्स का सिद्धान्त अल्पविकसित देशों पर लागू नहीं होता। मार्क्स ने मख्य रूप से पूँजीपतियों अथवा पश्चिमी जगत में पूँजीवादी के विकास से संबंध समस्याओं का उल्लेख किया है। विदेशी शासन को उपनिवेशों के आर्थिक पिछड़े-पन का प्रधान कारण माना है। राजनैतिक स्वतंत्रता ही एक मात्र उपचार था। समाज को दो वर्गों में विभाजित कर दिया है जो गलत है। ऐसी स्थिति में वर्ग संघर्ष छिड़ सकता है मार्क्स का सिद्धांत लाभ की दर के बारे में व्याख्यान करने में असफल रहा है कि पूँजी संगठित रचना बढ़ने से अतिरेक स्थिर रहेगा परन्तु मार्क्स यह भी समझाने में असफल रहा है कि तकनीकी विकास पूँजी की बचत करने वाले भी हो सकते हैं और पूँजी-उत्पादन उत्पादों में कमी तथा उत्पादकता में व द्धि होने पर मजदूरी के साथ-साथ लाभ भी बढ़ सकते है। पूँजी संचय और तकनीकी बदलाव से जरूरी नही कि पूँजीपतियों में प्रतियोगिता बढ़े तथा मजदूरी कम होने से कुल उत्पादन में मजदूरी का हिस्से में गिरावट आए। इसलिए प्रौद्योगिक उन्नति तथा नवप्रवर्तन आर्थिक विकास के सिद्धान्त के प्रमुख आधार है।

अध्याय-4

शुम्पीटर के विकास का सिद्धांत

(Schumpeter's Theory of Development)

शुम्पीटर ने The Theory of Economic Development में अपना सिद्धांत प्रस्तुत किया। प्रारम्भ में शुम्पीटर ऐसी अर्थव्यवस्था की कल्पना करता है जो स्थिर संतुलन की अवस्था में हो और ऐसी अर्थव्यवस्था में पूर्ण प्रतियोगिता संतुलन का नियम लागू होता है। शुम्पीटर ने ऐसी अर्थव्यवस्था को 'वित्तिय प्रवाह' कहा है। जिससे लाभ, ब्याज की दर, निवेश व बचत की तरफ ध्यान न देकर संतुलित विकास पर जोर दिया है। ऐसी अवस्था में अनैच्छिक बेरोजगारी नही पाई जाती और चक्रिय प्रवाह निरन्तर चलता रहता है। शुम्पीटर के अनुसार उत्पादन मे व द्धि उत्पादन के अनुसार उत्पादन में व द्धि उत्पादन के तत्त्वों की पूर्ति में व द्धि से, तकनीक परिवर्तन की दर तथा सामाजिक संगठनों में परिवर्तन की दर पर निर्भर करती है और यह बदलाव थोड़े समय में नहीं बल्कि दीर्घकाल में सम्भव हो सकता है।

शुम्पीटर ने अपने विचार को तीन भागों में विभिक्त किया है। बचत, निवेश तथा उद्यमी। उसके अनुसार बचत भविष्य के लिए उपभोग तथा निवेश के लिए की जाती है वह 'Iron Law of Wages' से भी असहमत है। उसका मत है कि पूँजीपतियों के साथ-साथ श्रमिक भी बचत करता है। बचत में व द्धि आय में व द्धि होने के साथ-साथ होती है। यह मत केन्द्र से मिलता है। लेकिन वह नवपरम्परावादी अर्थशास्त्रीयों से भी असहमत है कि निवेश की दर बढ़ने पर ही बचत बढ़ती है।

निवेश को दो भागों मे बाँटा गया है इन्डुस्ड इनवेंस्टमेंट व अटोनोमस इनवेसमेंट पहला निवेश आय, उत्पादन बिक्री तथा लाभ में परिवर्तन होने पर बदलता है तथा दूसरा पर इन सब बातों का कोई प्रभाव नही होता। यह लघु योजनाओं पर आधारित है जैसे तकनीकी प्रगति, साधनों की खोज आदि। इंडुसड निवेश का लाभ के साथ सकारात्मक संबंध है।

यदि लाभ बढ़ाता हैं तो इस प्रकार के निवेश में व द्धि होती है। तथा लाभ गिरने पर यह भी गिर जाता है, लेकिन ब्याज की दर के साथ इसका नकारात्मक संबंध है यदि ब्याज की दर में कमी आती है तो इसमे बढ़ोतरी होती है और यदि ब्याज की दर बढ़ती है तो इस प्रकार के निवेश में कमी होती है।

उद्यमी

शुम्पीटर के सिद्धात में उद्यमी के द्वारा नवप्रवर्तन का कार्य किया जाता है। उद्यमी का पूँजीपति होना तथा उद्योग का प्रबंधन करना नही हैं बल्कि ऐसा व्यक्ति जो नई चीज का एकदम प्रचलन करता है। यह वित्त प्रदान नही करता बल्कि उसके प्रयोग का र्निदेशन करता है लेकिन माल्थस ने उद्यमी को प्रबन्धन तक सीमित रखा है।

पूँजी का सिद्धांत
(The Concept of Capital)

शुम्पीटर के अनुसार उद्यमी के द्वारा भौतिक वस्तुओं की चाहत तथा उन पर नियंत्रण रखने के साधन को पूँजी कहते हे। उसके अनुसार प्रतियोगी संतुलन में वस्तु की कमीत तथा लागत में अन्तर नही होता तथा लाभ नही होते यह केवल नवप्रव तन से संभव है। शुम्पीटर ब्याज को भी विकास की देन मानता है लेकिन यह विकास का प्रत्यक्ष फल नहीं देता अर्थात यह उद्यमीय लाभ पर एक प्रकार का कर है।

विकास में साख का योगदान
(Role of Credit in Development)

यह मान लिया जाता है कि बैंक साख का निर्माण निवेश के लिए वित्त प्रदान करना है। इसलिए निवेश मौद्रिक आय व कीमतों को बढ़ाता है। लेकिन बैंक साख नवप्रवर्तन के लिए अति आवश्यक है। उपभोक्ता वर्ग उपभोग के लिए भी बैंक साख का प्रयोग करते है। इसलिए क्रयशक्ति में व द्धि होने के साथ-साथ पुराने उद्योगों की वस्तुओं की माँग उनकी पूर्ति के अपेक्षा बढ़ जाती है, कीमतें बढ़ती है लाभ बढ़ते है। इस प्रकार उद्योगों का विस्तार करके नव प्रवर्तन का कार्य शुरू होता है जिसके लिए बैंक साख आवश्यक है। इससे उत्पादन की मात्रा में भी व द्धि होती है। शुम्पीटर का विचार है बड़े पैमान पर उत्पादन का अर्थ है जनसाधारण की माँग पूरा करना अर्थात् उत्पादन करना। इस प्रकार यह चक्रिय प्रवाह निरन्तर चलता रहता है।

सब बातों को ध्यान में रखते हुए शुम्पीटर का मानना है कि दीर्घकाल में विकास से न केवल राष्ट्रीय आय और प्रति व्यक्ति उत्पादन का समान रूप से बँटवारा होगा लेकिन शुम्पीटर के सिद्धांत की मान्यता समयबद्ध रहते हुए पश्चिमी देशों पर लागू होती है। सभी प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं पर यह लागू नही हो पाता है। फिर भी शुम्पीटर का सिद्धांत आर्थिक विकास के प्रमुख साधन के रूप स्फीतिकारी वित्त तथा नई खोज को महत्त्व देता है। नई खोज अथवा नव प्रवर्तन के दीर्घकाल में रोजगार के अवसरों में व द्धि तथा उत्पादकता में व द्धि होती है। यद्यपि यह पाश्चात्य देशों से संबंधित है लेकिन एक बार औद्योगिकी की स्थिति (प्रक्रिया) शुरू हो जाए तो यह अल्पविकसित देशों के लिए भी फायदेमंद हो सकता है।

शुम्पीटर तथा अल्पविकसित देश
(Schumpeter and Underdeveloped Country)

1. अल्पविकसित देशों में शुम्पीटर का सिद्धान्त सही नहीं बैठता क्योंकि इन देशों में सामाजिक तथा आर्थिक ऊपरी सुविधाओं के कारण उत्पादन नहीं होता। इसलिए उद्यमी को प्रेरणाओं का अभाव रहता है यह केवल निश्चित समय पर आधारित पूँजीवादी अर्थव्यवस्था पर लागू होता है।

2. शुम्पीटर का सिद्धांत उद्यमी की योग्यता पर आधारित है। लेकिन अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में ड्यमी की उद्यमता का अभाव रहता है। तकनीकी परिवर्तन इतनी जल्दी संभव नहीं हो पाते है इसलिए नए निवेश की संभावना कम रहती है। इसके अतिरिक्त उद्यमी की साथ अन्य साधन जैसे यातायात, संचार तथा विद्युत क्षमता पर भी उत्पादन निर्भर करता है अकेले उद्यमी की क्षमता पर नहीं।

3. अल्पविकसित देशों में विकास प्रक्रिया को चालू रखने के लिए नवप्रवर्त्तन की बजाय अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन की आवश्यकता है।

4. शुम्पीटर का सिद्धांत नवप्रर्वतन में निजि उद्यमी की बात करता है। जो मिश्रित अर्थव्यवस्था में लागू नहीं होता क्योंकि अल्पविकसित देशों में विकास की प्रेरणा सार्वजनिक क्षेत्रों से प्राप्त होती है। इसलिए सरकार ही सबसे बड़ी उद्यमी है। निजि क्षेत्र केवल लाभ कमाने तक सीमित रहते है। इसलिए वर्ग शोषण की संभावना ज्यादा रहती है।

5. शुम्पीटर ने अपने सिद्धांत मे विकास की निरन्तर प्रक्रिया, उद्यमी का महत्त्व इत्यादि पर अधिक बल दिया है। यह केवल उत्पादन तक ही सीमित है उपभोग के बारे में कोई वर्णन नहीं किया है, जो अल्पविकसित देशों की अहम् जरूरत है। इसलिए यह उपभोक्ता की माँग जो अल्पविकसित देशों के विकास की अहम् कड़ी है उसको महत्त्व नहीं देता।

6. शुम्पीटर वित्त व्यवस्था के लिए बैंक साख पर आधारित है जिससे बचतों की अवहेलना कर देता है जो, निवेश मे अहम् योगदान करती हैं। यह प्रव त्ति घाटे के लिए वित्त प्रबन्ध, सार्वजनिक तथा राजकोषीय तरीकों को हानि पहुँचाती है।

7. शुम्पीटर का सिद्धांत केवल घरेलु प्रभावों का वर्णन करता है। बाहरी प्रभावों का वर्णन नही किया है। लेकिन अल्प विकसित अर्थव्यवस्था भीतरी परिवर्तनों से अधिक प्रभावित नही होती बल्कि बाहरी जैसे आयतित विचारों का असर औद्योगिक क्षेत्र मे साफ दिखाई देता है। अल्पविकसित देश तकनीकी तथा नवप्रवर्तन मे पिछड़े होते है इसलिए घरेलु क्षेत्र जैसे सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक संस्थाएँ विकास लाने की क्षमता नहीं रखती।

8. अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में विकास की प्रक्रिया नवप्रवर्तन पर नहीं बल्कि नव प्रवर्तन की खपत पर निर्भर करती

है। क्योंकि पूँजी की कमी तथा उद्यमी की अकुशलता के कारण अल्पविकसित देश नवप्रवर्तन करने की स्थिति में नहीं होते बल्कि प्रौद्योगिक विकास के लिए दूसरे विकसित देशों से आयात करते है।

9. शुम्पीटर का सिद्धांत पूँजीवाद से समाजवाद में जाने की बात करता है लेकिन यह समाजवाद केवल पूँजीवादी का समाजवाद है न कि अल्पविकसित अर्थव्यवस्था का समाजवाद जहाँ पर मानव विकास तथा सामाजिक कल्याण पर विशेष ध्यान दिया गया है।

सिद्धान्त की आलोचना
(Criticism of the Theroy)

1. शुम्पीटर ने कहा है नवप्रवर्तन का कार्य तथा उद्यमी का कार्य अलग-अलग है। लेकिन यह तथ्य सही नहीं है। नवप्रवर्तन जैसे कार्य के लिए विशेष व्यक्ति की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि नवप्रवर्तन तो उत्पादन का एक हिस्सा है जो समय के अनुसार अपने आप परिवर्तित होते है।

2. शुम्पीटर का विचार पूँजीवाद से समाजवाद की ओर जाने का विश्लेषण अधुरा है। उसके अनुसार उद्यमी कार्यों में परिवर्तन होने से पूँजीवाद समाज का संस्थानिक ढाँचा परिवर्तित होगा न कि यह पूँजीवाद समाज को खत्म करके समाजवाद की स्थापना करेगा।

3. शुम्पीटर के अनुसार नवप्रवर्तन ही विकास का मुख्य कारण है। उत्पादन में अनेक तत्त्व समाहित है जैसे प्राकृतिक मनोवेज्ञानिक, वित्तिय आदि। किसी एक से विकाास संभव नही है।

4. शुम्पीटर पूँजी निर्माण मे बैंक साख को अधिक महत्त्व देता है। लेकिन बैंक साख अल्पकाल में ही पूँजी निर्माण मे सहायक है दीर्घकाल मे नहीं। क्योंकि उद्योगों में दीर्घकाल मे नवप्रवर्तन करने के लिए अधिक पूँजी की आवश्यकता पड़ती है जो बैंक देने मे असमर्थ होते है अथवा यह अपर्याप्त होती है।

अध्याय-5

लुइस के विकास का सिद्धान्त

(Lewis Model of Development)

लुइस ने आर्थिक विकास के विचार को श्रम की असीमित पूर्ति के साथ जोड़ा है। लुइस के इस सिद्धांत को श्रम की असीमित पूर्ति का सिद्धांत भी कहते है। लुइस ने अर्थव्यवस्था को दो भागों में विभाजित किया है। 1. पूँजीवादी क्षेत्र 2 निर्वाह क्षेत्र। पूंजीवादी क्षेत्र वह क्षेत्र है। जो पुनः उत्पादित होने वाली पूंजी का प्रयोग करता है तथा उसके प्रयोग की एवज में पूंजीवादी को इसका प्रयोग का भुगतान करता हैं पूंजीवादी क्षेत्र में श्रमिकों को खानों और बागानों मे लगाता है। इसका उद्देश्य लाभ अर्जित करना है। पूंजीवादी क्षेत्र निजी तथा सरकारी दोनों हो सकते है। इस क्षेत्र में निर्वाह क्षेत्र की बजाय मजदूरी का स्तर ऊँचा होता है। दूसरा क्षेत्र निर्वाह क्षेत्र है जिसमें पुनः उत्पादित होने वाली पूंजी का प्रयोग नहीं किया जाता है। और इसमें प्रतिव्यक्ति उत्पादन की मात्रा पूंजीवादी क्षेत्र की बजाय कम होता है निर्वाह क्षेत्र मे उपलब्ध तकनीक पर कृषि में श्रम की सीमांत उत्पादकता जीरों (शुन्य) भी हो सकती है जहाँ छिपी बेरोजगारी की स्थिति हो।

दोनों क्षेत्रों के बीच संबंध

इन दोनों क्षेत्रों के बीच आपसी संबंध हैं जब पूंजीवादी क्षेत्र का फैलाव होता है तो श्रमिक निर्वाह क्षेत्र से पूंजीवादी क्षेत्र में चले जाते है। लेकिन यह निर्वाह के न्यूनतम आवश्यक इकाई पर निर्भर करता है। इसका अभिप्रायः निर्वाह क्षेत्र में मजदूरी स्तर श्रमिक के औसत उत्पादन से कम नहीं हो सकता। यह साफ है कि अकुशल श्रमिकों की पूर्ति पूंजीवादी क्षेत्र में असीमित है। ऐसी स्थिति मे नए उद्योगो की स्थापना होगी तथा पुराने क्षेत्र मजदूरी की वर्तमान सीमा पर फैलेंगे। नए रोजगार के साधनों के पनपने से श्रम की कमी महसूस नहीं होगी क्योंकि कृषि में पहले ही छुपी हुई बेरोजगारी समाहित है। इस असीमित पूर्ति क्षेत्र में वही आएँगे जो कृषि तथा दूसरे क्षेत्रों जैसे घरेलू नौकर, छोटे मोटे व्यापारी, घरेलू काम-काज करने वाली औरतें तथा जनसंख्या व द्धि।

विस्त त पूंजीवादी क्षेत्र में मजदूरी का निर्धारण निर्वाह क्षेत्र मे कमाने वाली मजदूरी से निर्धारित होगा। यदि कृषि में श्रम की सीमांत उत्पादकता शुन्य है और परिवार का एक व्यक्ति कुल उत्पादन मे से हिस्सा प्राप्त करता है तो यह लगभग औसत उत्पादन होगा।

यदि पूंजीवादी क्षेत्र में मजदूरी औसत उत्पादन से कम होगी तो वह निर्वाह क्षेत्र से पूंजीवादी क्षेत्र में स्थान्त्रित नहीं होगा। इसलिए पूंजीवादाी क्षेत्र द्वारा प्रदान की गई मजदूरी निर्वाह क्षेत्र से ज्यादा होनी चाहिए। तभी श्रमिक अपना परम्परागत व्यवसाय छोड़कर पूंजीवादी क्षेत्र में प्रवेश करेगा। इसको निम्नलिखित चित्र द्वारा समझाया गया है।

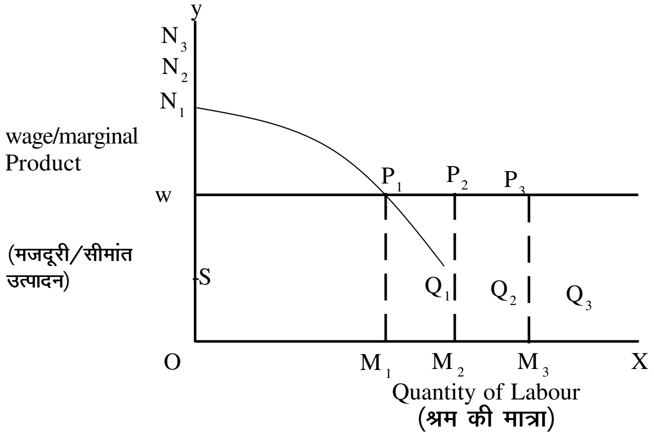

OS= निर्वाह मजदूरी

OW= पूंजीवाद क्षेत्र में वास्तविक मजदूरी

WK= श्रम की पूर्ण लोच पूर्ति

पूंजीवादी क्षेत्र में श्रम की सीमांत उत्पादक शुरू में OM_1 श्रम के लिए $N_1 Q_1$ है। इस अवस्था में Surplus (अतिरेक) WN_1P_1 है। जब अतिरिक्त निवेश दोबार किया जाता है तो सीमांत उत्पादकता वक्र ऊपर की तरफ चला जाता है जो $N_2 Q_2$ है इस पूंजीवादी क्षेत्र में रोजगार अधिक है जो $WN_2 P_2$ तथा OM_2 है। और अधिक पुनः निवेश से सीमांत उत्पादकता वक्र को रोजगार के स्तर को बढ़ाकर N_3Q_3 तथा M_3 पर ले जाते हैं। जब श्रम का कोई अतिरेक न बचे। आर्थिक फैलाव की प्रक्रिया चलती रहती है। जो पूंजीवादी का अतिरेक का एक हिस्सा का विनिवेश किया गया है जिससे स्थिर पूंजी और श्रम की सीमांत उत्पादकता बढ़कर N_2Q_2 हो जाती है। कुल उत्पादन $ON_2 P_2 M_2$ बढ़ जाता हैं परिणाम के तौर पर मजदूरी का हिस्सा बढ़कर $OWP_2 M_2$ तथा लाभ या पूंजीपति का अतिरेक बढ़कर $WN_2 P_2$ हो जाता है। प्रत्येक स्तर पर पूंजीपति का लाभ और रोजगार का स्तर बढ़कर OM_1 से OM_2 से OM_3 इत्यादि हो जाता है। यह ऊपर लिखित वर्णन आर्थिक विकास में लाभ ओर उसके विनिवेश महत्त्वता के बारे मे बताता है। जिससे पूंजीपति का लाभ, उत्पादन का स्तर, रोजगार तथा मजदूरी का स्तर भी बढ़ता है।

बचत की भूमिका
(Role of Saving)

यह सही है कि आर्थिक विकास में बचत का अहम् योगदान हैं यदि पूंजीपति लाभ का बड़ा हिस्सा का विनिवेश नहीं करेगे तो न तो उत्पादन बढ़ेगा न ही रोजगार में व द्धि होगी। लुइस का मानना है कि बचत उन्हीं लोगों द्वारा की जाती है। जो लाभ या कर प्राप्त करते हैं कारण यह है कि मजदूरों की बचत की मात्रा कम होती है। मध्यमवर्ग और वेतन भोगी वर्ग भी कम बचत कर पाता है। इसलिए जब विनिवेश की बात आती है तो यह लाभ और कर पर अटक जाती है अब प्रश्न यह उठता है कि ऊपरी 10 प्रतिशत लोग क्यों ज्यादा बचत करते है। इसका कारण विनिवेश की प्रक्रिया। एक बार यदि पूंजीवादी क्षेत्र का विकास होता है तो वह धीरे-धीरे बढ़ता रहता है। लेकिन अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में गरीबी का कारण पूंजीवादी क्षेत्र का छोटा होना है। यदि पूंजीवादी क्षेत्र में फैलाव होगा तो आय की असमानता की समस्या उत्पन्न होती है। लुइस का मत है कि अविकसित क्षेत्रों में बचत करने की क्षमता कम नही होती बल्कि आय का अधिक भाग 10 प्रतिशत लोगों के हाथ मे होने पर यह स्थिति उत्पन्न होती है।

पूंजी निर्माण में साख की भूमिका
(Role of Credit in Capital Formation)

पूंजी का निर्माण सिर्फ लाभों से नही होता बल्कि वह साख से भी निर्मित होता है। अल्पविकसित देशों में पूँजी की कमी होती है वहाँ पूँजी निर्माण पर बैंक साख का वही प्रभाव पड़ता है जो लाभों का। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में बैंक साख की वजह से उत्पादन तथा रोजगार के अवसरों में व द्धि होगी। लेकिन जो पूंजी निर्माण साख होगा उसमें आरम्भ में मुद्रास्फिती की स्थिति उत्पन्न होगी क्योंकि श्रम की खपत से मजदूरी बढ़ने की माँग बढ़ती है तथा कीमतों में व द्धि होती है लेकिन यह स्थिति तब तक है जब तक नया उत्पादन बाजार में नही आता। उसके बाद कीमतें अपने आप कम होनी शुरू हो जाती है। इसलिए बैंक साख से पूंजी निर्माण में व द्धि होती है लाभ तथा मजदूरी भी बढ़ती है। अधिक लाभों से अधिक बचत होती है और एक ऐसा समय आएगा जब बचते इतनी बढ़ जाएगी कि साख के बिना ही वित की व्यवस्था की जा सकेगी।

क्या पूंजी प्रक्रिया रूकती है
(Does Capital Accumulation Stop)

लुइस के मॉडल में विकास और पूंजीपति के लाभ में सम्बंध है। जैसे-जैसे पूंजीपति का अतिरेक बढ़ता है राष्ट्रीय आय में निवेश का स्तर बढ़ता है जो अर्थव्यवस्था मे विकास को बढ़ाता है। पूंजीपति अतिरेक का सम्बंध श्रम की अतिरेक मात्रा से संबंध‍ित है। यदि पूंजीपति अतिरेक बढ़ेगा तो श्रम की अतिरेक मात्रा में भी व द्धि होगी। यह प्रक्रिया तब रूकेगी जब जब मजदूरों की वास्तविक आय पूंजीपति के लाभ से अधिक हो जाए इस अवस्था में सारे लाभों का उपभोग करने से निवेश की प्रक्रिया रूक

जाती है अथवा कोई निवेश न हो दूसरी और लूईस ने बताया कि यदि पूंजी निर्माण के परिणामस्वरूप कोई अतिरेक श्रम न बचे, या पूंजी क्षेत्र में विकास इतनी तेजी से हो कि निर्वाह क्षेत्र में जनसंख्या बिल्कुल घट जाए और निर्वाह क्षेत्र में श्रम की उत्पादकता बढ़ जाए क्योंकि उत्पादन को बाँटने वाले लोग कम रह जाते हैं। और पूंजीवादी क्षेत्र नई तकनीक प्रयोग करना आरम्भ कर दे ऐसी अवस्था में पूंजीवादी क्षेत्र मे मजदूरी बढ़ जाएगी। इन सभी अवस्थाओं में पूंजीपति का अतिरेक कम होगा ऐसी अवस्था में पूजी की प्रक्रिया पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

खुली अर्थव्यवस्था
(Open Economy)

लुइस का मॉडल बन्द अर्थव्यवस्था में वर्जित किया गया है। जब इन सब साधनों से व द्धि की प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। तो दूसरे देश से अतिरेक श्रम की पूर्ति की जा सकती है यह आप्रवास को प्रोत्साहन देकर या उन देशो में पूजी का निर्यात करके जहाँ निर्वाह दर पर मजदूरी प्राप्त होती है। पूंजी संचय जारी रख सकते है। लेकिन लुइस ने इस सिद्धांत को रद्द कर दिया है क्योंकि अकुशल श्रमिकों का अप्रवास संभव नहीं, पूंजी निर्यात से आयात निर्यात का अन्तर अधिक होने पर भुगतान संतुलन की समस्या उत्पन्न होगी। ऐसी अवस्था के लिए लुइस ने विनिमय नियन्त्रण की सलाह दी है।

लुइस की मॉडल का समीक्षात्मक मूल्यांकन
(Critical Evaluation of Lewis Model)

लुइस का सिद्धांत अधिक जनसंख्या वाले देशों पर लागू होता है।

1. (Supply of Labour is not unlimited to all countries) (सभी देशों में श्रम की पूर्ति असीमित नहीं)।

   लुइस का मॉडल असीमित श्रम पूर्ति पर निर्भर है। लेकिन थोड़ी आबादी वाले देशों में यह धारणा अवास्तविक है। जरूरी नहीं अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र में छिपी बेरोजगारी निहित हो।

2. (adoption of capital intensive technigues rather than labour intensive techniques) (श्रम प्रधान तकनीक की बजाय पूंजी प्रधान तकनीक का अपनाना)

   लुइस के सिद्धांत में श्रम की खपत विनिवेश अतिरेक पर निर्भर करती है। लेकिन जरूरी नहीं की अल्पविकसित देश श्रम प्रधान तकनीक का प्रयोग करें। यदि पूंजी प्रधान तकनीक प्रयोग होगा तो उत्पादकता बढ़ेगी तथा श्रम की खपत कम होगी। अधिकतर अल्पविकसित देश कृषि क्षेत्र में भी नई तकनीक का प्रयोग करते हैं तथा साथ-साथ इसका उद्योग क्षेत्र मे प्रयोग करने से भी श्रम की खपत बढ़ने की बजाय कम होगी।

3. (Lack of enterprise) (उद्यम की कमी)

   लुइस ने अपने आप मान लिया है कि अर्थव्यवस्था में पूंजीवादी क्षेत्र है। पूंजीपति ही पूंजी का संचय करने की कुशलता रखता है। लेकिन अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में उद्यम की कमी पाई जाती है।

4. (Limiited supply of skilled labour) (कुशल श्रम की पूर्ति सीमित)

   लुइस यह मानकार चलता है कि अकुशल श्रमिक असीमित मात्रा में होते हैं लेकिन कुशल श्रम की कमी से औद्योगिकारण का विकास संभव नहीं।

5. (Inflation not self liquidating) (स्फीति स्वयं विनाशकारी नहीं)

   लुइस का मानना है कि पूंजी निर्माण के लिए स्फीति स्वयं विनाशकारी है। साख बढ़ने से मजदूरी बढ़ती है। तथा माँग में व द्धि होने पर कीमतें बढ़ जाती है। सरचनात्मक परिवर्तन के कारण वस्तुओं की पूर्ति को जल्दी नही बढ़ाया जा सकता है।

अध्याय-6

फाई-रेनिस के आर्थिक विकास का सिद्धान्त

(Fei-Ranis Model of Development)

फाई के अनुसार एक विकासशील अर्थव्यवस्था गतिहीन की स्थिति से सेलफ सस्टेंड विकास की और जाने की आशा रखती है। फाई ने अपने सिद्धांत में दो क्षेत्रो कृषि व उद्योग को लिया है।

कृषि क्षेत्र
(The Agricultural Sector)

कृषि क्षेत्र मे जनसंख्या दबाव से प्राकृतिक साधनों की कमी (भूमि का दोहन होना) हो जाती हैं तकनीक स्थिरता के कारण कृषि पर भूमि पर घटते प्रतिफल के नियम की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। जिसको निम्नलिखित चित्र से वर्णित किया गया है। भूमि को Y axis पर तथा श्रम को X axis पर लिया गया है। कृषि की प्रक्रिया में श्रम तथा भूमि द्वारा वस्तुओं का उत्पादन किया गया है। उत्पादन रेखा M, M^1, M^{11} द्वारा दर्शाई गई है। OV औ OU रेखा क्षेत्र में उत्पादन के साधनों में बदलाव (Substitution) को दर्शाती है। जो इस क्षेत्र के भीतर ही बदल सकते है। बाहर नहीं। उत्पाद वक्र OV रेखा के नीचे पूर्ण रूप से अनुलम्ब (Horizonal) है। जो बताता है कि भूमि सीमित है। इसलिए श्रम की मात्रा बढ़ने पर लम्बे समय तक उत्पादन में व द्धि नहीं हो सकती है। चित्र में जब भूमि की मात्रा ot पर स्थिर है जो ts तक श्रम को बढ़ाया जा सकता है। कृषि क्षेत्र में कुल श्रम te दी गई है इसलिए कृषि क्षेत्र में श्रम की मात्रा es इकाई के बराबर है जो redunt है। तो और श्रम की मात्रा जो st के बराबर है वो non redundant है। (चित्र 1 में दर्शाया गया है)

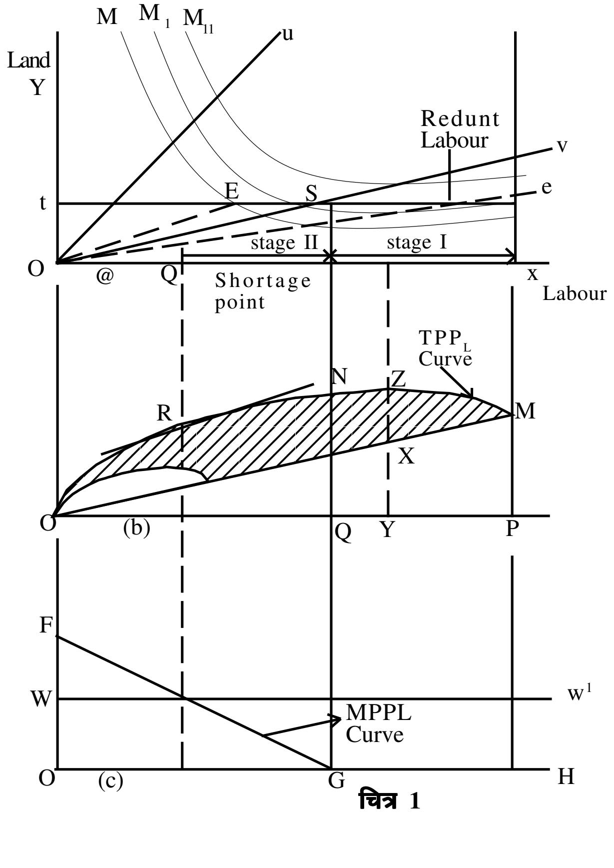

चित्र 1

"Labour Utilization Ratio" R=ts/ot

(श्रम प्रयोग करने की दर)

जो रिज रेखा (ov) से नीचे है।

हम यह मानते है कि श्रम की कुल पूर्ति (te) इकाई के बराबर है जिसकी (ts) श्रम की इकाई non redundant है तथा se इकाई redundant है ts/te के अनुपात को non-redundancy coefficient जो T के बराबर हैं $\therefore T = ts/te$

R= श्रम प्रयोग का अनुपात

S= जनसंख्या धनत्व

T का सम्बन्ध R से सीधा है तथा S से विपरीत है।

चित्र (b) तथा (c) में श्रम की कुल भौतिक उत्पादकता (TPPL) श्रम की सीमांत भौतिक उत्पादकता (MPPL) है। चित्र (b) दिखाता है कि (TPPL) घटती दर से बढ़ता है जब भूमि के निश्चित भाग पर अधिक से अधिक श्रम लगाई जाए। N बिन्दु पर वक्र अनुलम्ब (horizontal) हो जाता है तथा चित्र (c) में g तक पहुँचता है। और G पर MPPL शुन्य हो जाती है G व N रेखा बिन्दु पर क्षेतिज (vertically) है जो ov रिज लाइन पर है।

उद्योग क्षेत्र
(The Industrial Sector)

कृषि क्षेत्र में भूमि तथा श्रम को प्रयोग किया गया है। तथा उद्योग क्षेत्र में पूंजी तथा श्रम का प्रयोग किया है। निम्नलिखित चित्र द्वारा उद्योग क्षेत्र, में पूंजी, श्रम तथा उत्पादन को दर्शाया है। श्रम का माप अनुलम्ब अक्ष तथा पूंजी का माप तथा पूंजी को क्षैतिज अक्ष पर दिखाया है। Q_0, Q_1 तथा Q_2 उत्पादन को दर्शाती है। रेनिस फाई कृषि तथा औद्योगिक दोनों क्षेत्रों में स्थिर प्रतिफल की दर मान कर चलता है। उद्योग क्षेत्र में विस्तार (expansion path) को सीधी रेखा OA_0, A_1, A_2 तथा पूंजी विस्तार K_o से K_1 से K_2 है। श्रम का विस्तार L_o से L_1 से L_2 हैं जो उद्योग मे उत्पादन को Q_0 से Q_1 से Q_2 बढ़ाती है।

रेनिस का मानना है कि उद्योग क्षेत्र की उपब्धता कृषि क्षेत्र से होती है।

चित्र (b) में उद्योग क्षेत्र में श्रम के पूर्ति वक्र को $PP_oP_1P_2S$ दिखाया गया है जो चित्र (a) में क्षैतिज हैं चित्र (b) में उद्योग में श्रम की पूर्ति को अनुलम्ब अक्ष पर मापा है जबकि वास्तविक मजदूरी (उद्योग सामान में) क्षैतिज अक्ष पर मापी गई है। श्रम का पूर्ति अनुलम्ब वक्र कृषि क्षेत्र से उद्योग क्षेत्र में श्रम की मात्रा दर्शाता है। इसकी वजह से उद्योग क्षेत्र की वास्तविक मजदूर OP पर स्थिर रहती है P_2 बिन्दु पर वक्र ऊपर की तरफ से उठता है जिससे इस बिन्दु के पश्चात् श्रम की पूर्ति वास्तविक मजदूरी बढ़ाने पर ही बढ़ाई जा सकती है।

पूंजी संचय K_o, K_1, K_2 के द्वारा श्रम की सीमांत भौतिक उत्पादकता वक्र (MPPL) खिंचा गया है KO पूंजी संचय पर (MPPL) श्रम की सीमांत भौतिक उत्पादकता वक्र MO है। जब पूंजी संचय Ko से K_1 बढ़ता है। तो MPPL, M1 हो जाता है सन्तुलन कि स्थिति में MPPL वक्र उद्योग पूर्ति वक्र को P_0, P_1,P_2 पर काटता है। जब पूंजी संचय Ko है तो संतुलन की स्थिति Po है। रेनिस का मानना है कि आय स्तर के कम होने की वजह से उद्योग में काम करने वाले मजदूर कुछ नहीं बचा पाते। इसलिए निवेश का अधिक भाग उद्योगों के लाभ से किया जाता है।

नए पूंजी संचय की वजह से नया MPPL वक्र बनाया है। जो P_1 पर नया सन्तुलन स्थापित करता है। जिससे उद्योग क्षेत्र में रोजगार बढ़कर L_o, से L_1 हो जाता है। जिससे निवेश तथा रोजगार की प्रक्रिया लगातार चलती रहती है।

fig (1) तथा fig (2) कृषि तथा उद्योग के अतिरेक की प्रक्रिया भी वर्णन करती है। रेनिस के मॉडल में कृषि की भूमिका मूल है। पूंजी संचय में व द्धि होने पर श्रम की मात्रा कृषि क्षेत्र से उद्योग क्षेत्र में स्थानान्त्रित हो जाती है। इसलिए श्रम शक्ति, भोजन तथा कच्चा माल उद्योग क्षेत्र के लिए आग का काम करती है। रेनिस फाई दोहरी अर्थव्यवस्था की भी बात करता है जिसमें दोनों एक दूसरे के पूरक है। और सन्तुलित विकास के लिए दोनों मे एक साथ निवेश आवश्यक है।

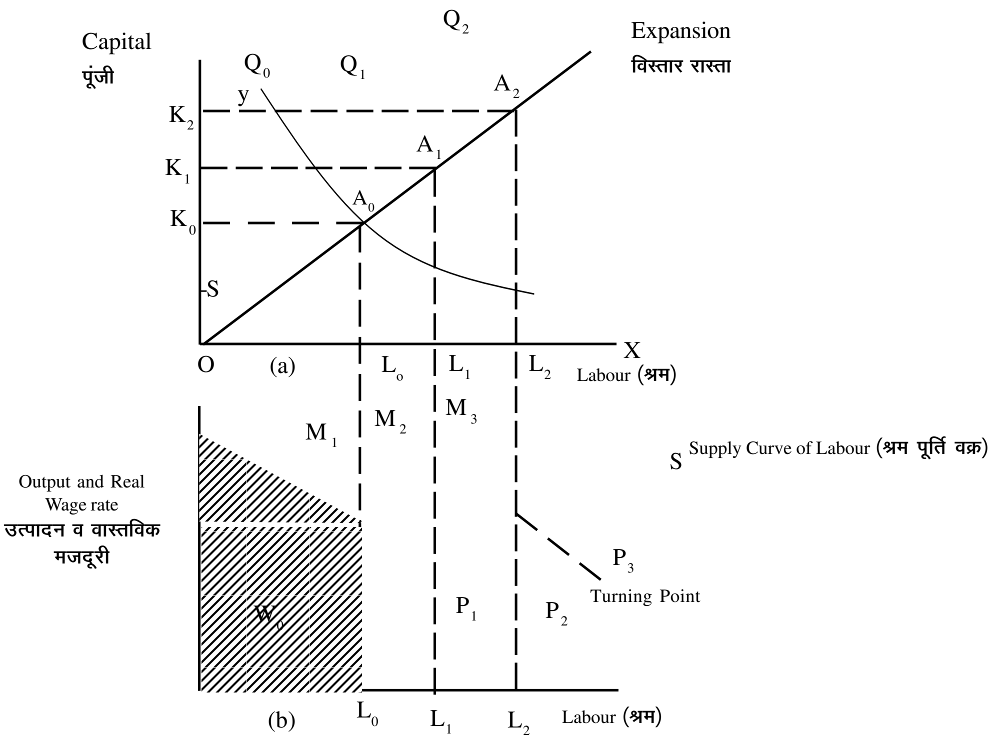

चित्र 2

रेनिस के सिद्धांत की सीमाएँ
(Limitations of the Fei Ranis Model)

1. रेनिस मानता है कि प्रारम्भिक अवस्था में कृषि की सीमांत भौतिक उत्पादकता शुन्य है। इससे जनसंख्या का अधिक हिस्सा ग्रामीण क्षेत्र से शहरी क्षेत्र मे स्थानान्तरित हो जाता है। यह अवस्था अल्पकालीन अवस्था है जो दीर्घकाल में संभव नहीं

2. रेनिस मानते है कि भूमि की पूर्ति स्थिर है लेकिन जनसंख्या बढ़ने पर घटिया भूमि का भी प्रयोग किया जाता है इसलिए यह स्थिर नहीं रहती।

3. रेनिस श्रम मजदूरी तथा घरेलू मजदूरी में अन्तर नहीं करते। लेकिन अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में कीमत के बगैर दोहरी अर्थव्यवस्था के बारे में पूर्ण जानकारी संभव नहीं। यह भी तर्क दिया गया है कि भौतिक पूंजी के लिए मुद्रा का स्थानापन्न ठीक नहीं है। इसलिए कि एक स्तर पर मुद्रा तथा भौतिक पूंजी एक दूसरे के समरूपक है।

4. रेनिस का विश्लेषण बंद अर्थव्यवस्था की धारणा पर आधारित है लेकिन अल्प विकसित अर्थव्यवस्था बंद न होकर खुली अर्थव्यवस्था है जहाँ कमी होने पर कृषि वस्तुओं को आयातित किया जाता है।

5. रेनिस मानते है कि कृषि उत्पादकता में व द्वि होने के बावजूद पहली दो अवस्थाओं में संस्थानिक मजदूरी स्थिर रहती है। लेकिन यह तर्क ठीक नही है क्योंकि कृषि उत्पादन में सामान्य व द्वि होने पर मजदूरी अवश्य बढ़ेगी। उदाहरण के तौर पर हरियाणा तथा पंजाब मे हरित क्रान्ति लागू हुई थी। सर्वेक्षण से पता चलता है इसके लागू करने के बाद कृषि वर्ग के लिए श्रमिक मजदूरों की दैनिक वास्तविक मजदूरी में सुधार हुआ है।

6. कृषि का व्यापारीकरण होने पर स्फीतिकारी दबाव शुरू हो जाते हैं। जब श्रमिक वर्ग कृषि क्षेत्र से उद्योग क्षेत्र में स्थानान्त्रित हो जाता है तो कृषि क्षेत्र में श्रम की कमी महसूस होती है। इसी प्रकार स्थान्त्रित मजदूरी श्रमिकों की सीमांत उत्पादकता के बराबर होती है। इस प्रकार कृषि क्षेत्र में वस्तुओं की कमी से स्फीतीकार दबाव पैदा होते है।

अध्याय-7

राज्य/संस्थाओं की आर्थिक विकास में भूमिका

(Role/Importance of Institutions and State in Economic Development)

आर्थिक विकास को बढ़ाने में सरकार की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में देश के हित के लिए राज्य को कठोर निर्णय लेने पड़ते हैं। World Development Report 1997 में राज्य की भूमिका का साफ तौर पर वर्णन किया है। राज्य आर्थिक तथा सामाजिक विकास में सक्रिय भूमिका के साथ-साथ विकास में हिस्सेदारी की भूमिका अदा करता है। इसलिए आर्थिक विकास के लिए राज्य-कार्य अनिवार्य है। इसलिए देशों की गतिहीनता कम करने के लिए शीघ्र सामाजिक-आर्थिक सुधारों की जरूरत होती हैं। विकास की प्रारम्भिक अवस्थाओं में निवेश करना होगा जैसे बिजली, परिवहन, शिक्षा, स्वास्थ्य इत्यादि जो सामाजिक तथा आर्थिक सुविधाओं का निर्माण करें। क्योंकि विश्व युद्ध II के पश्चात् अधिकतर अर्धविकसित देश गरीबी के चक्र में फंस गए थे। इनको इस चक्र से बाहर निकालने के लिए वित्तिय तथा भौतिक साधनों को विकसित करने की आवश्यकता है। इसके लिए सरकार को राजकोषीय तथा मुद्रा की विधियों की युक्तियाँ निकालनी पड़ती है। अर्थव्यवस्था में संतुलित व द्धि की जरूरत होती है। इसके साथ सामाजिक मतभेदों को तोड़ना और आर्थिक विकास के लिए उपयुक्त सामाजिक तथा राजनैतिक स्थिति का निर्माण करना राज्य का सबसे बड़ा कर्त्तव्य बन जाता है। आर्थिक विकास में राज्य की भूमिका का विस्तार से विवेचन निम्न प्रकार है।

संस्थानिक ढाँचे में भूमिका
(Role in Building Institutions)

यद्यपि आर्थिक विकास में पूँजी की कमी बड़ी समस्या है, लेकिन केवल पूंजी आर्थिक विकास के लिए पूर्ण नहीं है। यह बात मध्यम पूर्वी देशों पर फिट बैठती है। पूंजी साधन की बहुता के बावजूद ये देश अविकसित हैं। इसका मुख्य कारण आर्थिक विकास के लिए संस्थान की कमी और उनका सामाजिक ढाँचा तथा प्रव त्ति परम्परावादी व पिछड़ी है। ऐसे समाज में धार्मिक तथा सांस्कृतिक परम्पराएँ आर्थिक विकास की प्रेरक नहीं होती। जब तक यह तरीका व प्रव त्ति नहीं बदलेगी, सामाजिक-आर्थिक विकास की गति धीमी रहेगी। यदि सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन शुरू हो जाए तो लोग नए अवसरों को स्वीकार कर लेंगे जिससे शिक्षा का विस्तार, तकनीकी विकास, यातायात तथा संचार के बढ़ने से उत्पाद के साधनों की गतिशीलता बढ़ेगी जो विकास के नए आयाम उत्पन्न करेगी।

संगठनात्मक विकास
(Development of Infrastructure)

निजी क्षेत्र का उद्देश्य लाभ कमाना है यह सिर्फ लाभ देने वाले क्षेत्रों में ही निवेश करता है और यातायात, संचार, बिजली, सिंचाई इत्यादि कार्यों के विकास को अनदेखा करता है। इन क्रियाओं में निवेश की मात्रा अधिक तथा प्रतिफल धीरे मिलते हैं। इसीलिए इनके विकास के लिए सरकार की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। सरकार ही इनको विकसित करने का दायित्व पूरा कर सकती है जो अल्पविकसित अर्थव्यवस्था के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। दूसरी ओर श्रम-बाजार को संगठित करना भी राज्य का कार्य होता है। संगठित श्रम-बाजार से उत्पादन में व द्धि होती है। श्रम संघों को राज्य मान्यता देकर श्रम को संगठित होने में सहायता करता है। श्रमिक-मालिक अच्छे संबंध से, श्रम की कार्य-कुशलता में व द्धि से उत्पादन में व द्धि होगी तथा रोजगार के अवसर भी बढ़ेगें।

कृषि विकास
(Agricultural Development)

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में अधिकतर लोगों का व्यवसाय कृषि है तथा राष्ट्रीय आय में कृषि का काफी योगदान है। हालांकि इस क्षेत्र में विकास का स्तर मंद है और आर्थिक विकास में यह रूकावट है। अल्पविकसित देशों में किसानों के पास साधनों की कमी होती है। वे दरिद्र व निरक्षर होते हैं इसलिए भूमि सुधार करने और कृषि विकास के लिए योजनाएँ बनाने का कार्य राज्य के अन्तर्गत आता है।

कृषि व उद्योग एक दूसरे के पूरक हैं। कृषि उत्पादन में व द्धि के लिए आवश्यक है कि कृषि क्षेत्र उद्योगों की कच्चा माल की आवश्यकता को पूरा किया जाए, खाद्यान्नों में आत्म निर्भरता प्राप्त की जाए व कीमत व द्धि को रोका जाए। इसलिए राज्य उत्पादन को बढ़ाने के लिए विभिन्न कार्यक्रम चलाते हैं जैसे सहकारी खेती, भूमि सुधार आदि।

औद्योगिक विकास
(Industrial Development)

अल्पविकसित देशों में निजी उद्यमी केवल उपभोक्ता वस्तुओं के क्षेत्र में पाया जाता है। अल्पविकसित देशों में उद्योगों की भारी कमी होती है। इसलिए आधारभूत उद्योगों में पूंजी निवेश अधिक मात्रा में करना पड़ता है। इसलिए भारी निवेश के कारण निजी क्षेत्रों में इनका विकास करने की क्षमता नहीं पाई जाती। इन सब कमियों को दूर करके राज्य सरकार भारी उद्योगों में निवेश करने के लिए आगे आती है। इस प्रकार के उद्योग अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी की तरह हैं जो राज्य में भरपूर योगदान करते हैं। पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए सरकार बड़े उद्योगों को स्थापित करके तथा यातायात, संचार आदि सुविधा देकर निजी उद्यमियों को आकर्षित करती है। कई प्रकार की सुविधाएँ प्रदान करती है, जैसे सस्ती भूमि, कर छूट, जल, विद्युत की व्यवस्था इत्यादि।

गरीबी तथा आय असमानता की समस्या
(Problem of Poverty and Inequalities)

अल्पविकसित देशों में गरीबी तथा आय की असमानता की भयंकर समस्या है। जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा गरीबी रेखा से नीचे है। आय की असमानता का मुख्य कारण है-ग्रामीण क्षेत्र में भूमि का बड़ा मालिकाना हक कुछ ही लोगों के हाथ में तथा शहरी क्षेत्र में आय का बड़ा हिस्सा कुछ ही लोगों के हाथ में होता है इन सब कठिनाईयों को दूर करने के लिए सरकार का हस्तक्षेप आवश्यक है। राज्य ने गरीबी तथा आय की असमानता को कम करने के लिए विभिन्न कार्यक्रम चलाए हैं। गरीबी हटाने के लिए तथा रोजगार प्रदान करने के लिए राज्य ने विभिन्न कार्यक्रम चलाए हैं। इसलिए राज्य सरकार ने छोटे तथा हथकरघा उद्योगों के विकास के लिए जो उपाय किए हैं जो धन तथा आय के समान वितरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

लोक स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण
(Public Health and Family Welfare)

उत्पादकता तथा श्रम की दक्षता बढ़ाने के लिए लोगों के स्वास्थ्य में सुधार आवश्यक है। कई अल्पविकसित देशों में म त्यु दर में कमी तथा जन्म दर स्थिर रहने से जनसंख्या विस्फोटक गति से बढ़ रही है। भारत भी उनमें से एक हैं। ऐसी अर्थव्यवस्था में परिवार कल्याण का बहुत महत्त्व है। इसलिए सरकार ने परिवार कल्याण के लिए विभिन्न कार्यक्रम चलाए हैं। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में, परिवार में अतिरिक्त सदस्य को बोझ नहीं समझते उनका सोचना है बच्चों की अधिक संख्या से परिवार में कमाने वाले की संख्या भी अधिक होगी। ऐसी परिस्थितियों में गरीब आदमी स्वयं अपने परिवार का आकार कम नहीं करेगा। इस समय सरकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता है। जिससे जन्म दर कम की जा सके। परिवार छोटे परिवार की महत्ता को पहचाने हालाँकि इस प्रकार का तर्क लोगों की भावना को ठेस पहुँचाता है। इसलिए अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में छोटे परिवार रखनेवालों को प्रलोभन देना चाहिए। अतः जनसंख्या की व द्धि दर नियंत्रित होने से स्वास्थ्य, स्वच्छ पानी आदि की सुविधाओं में भी व द्धि होगी।

प्राकृतिक साधनों का विकास
(Development of Natural Resources)

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में प्राकृतिक साधन कम विकसित होते हैं। प्राकृतिक साधनों का विकास अल्पविकसित अर्थव्यवस्था के लिए महत्त्वपूर्ण है। इसलिए सरकार या राष्ट्र का यह कर्त्तव्य बनता है कि उनके विकास के लिए उचित नीति अपनाए। क्योंकि निजी हाथों में जाने से इनका दूरुपयोग या सही ढंग से प्रयोग नहीं होगा क्योंकि इन क्षेत्रों का कार्य या मकसद सिर्फ लाभ कमाना है।

पूँजी निर्माण में योगदान
(Role in Capital Formation)

आर्थिक विकास में पूँजी की अहम् भूमिका है। अल्पविकसित देशों में पूँजी की कमी होती है। इन देशों में आर्थिक विकास प्रक्रिया पूँजी निर्माण पर निर्भर करती है। सरकार किसी भी क्षेत्र को विकसित करना चाहे जैसे कृषि, भूमि सुधार, विदेशी पूँजी को आकर्षित करना, स्वास्थ्य, संस्थानिक ढाँचे का विकास, शिक्षा प्रसार, राजनैतिक स्थिरता और सामाजिक प्रव त्ति में परिवर्तन लेकिन इन सभी के लिए साधनों का समायोजन करना है। जिसके लिए पूँजी निर्माण आवश्यक है।

प्रश्न यह उठता है कि पूँजी का निर्माण कैसे बढ़े? आय कम होने की वजह से बचत प्रव त्ति भी कम है। इसलिए साधनों का समायोजन का कार्य सरकार (राज्य) कर सकता है। साधन जुटाने के लिए राज्य प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष कर लगा देती है हालाँकि अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में कर देने की क्षमता कम होती है। लेकिन सरकार भुगतान शेष एवं विदेशी विनिमय की समस्या का समाधान करके, स्फीति को कम करके पूंजी निर्माण से देश में आर्थिक विकास की दर को बढ़ाने में सहायक होती है।

विदेशी व्यापार में व द्धि
(Increase in Foreign Trade)

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में विदेशी व्यापार का आकार छोटा होता है। क्योंकि ऐसे देश तकनीक रूप से पिछड़े होने पर व्यापार का क्षेत्र प्राथमिक वस्तुओं जैसे कृषि पदार्थ, कच्चा माल, खनिज पदार्थ आदि तक सीमित रहता है तकनीक विकास के लिए मशीनरी इत्यादि का आयात करने से पूँजीगत पदार्थो का मूल्य प्राथमित वस्तुओं की अपेक्षा अधिक होता है इसलिए अर्थव्यवस्था में असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है इस तरह के असन्तुलन अथवा घाटे के वित्त व्यवस्था के लिए राज्य की भूमिका ही देश को इस तरह की समस्या से उभार सकती है। इसके लिए राज्य सरकार आयात वस्तुओं पर कर लगा सकती है। निर्यात को बढ़ाने के लिए निर्यात करों में छुट तथा निर्यात प्रोत्साहन के लिए निर्यात उद्योगों को पूंजी पदार्थ, कच्चा माल अथवा अनेक सुविधाएँ देकर बढ़िया सस्ता माल का उत्पादन करवा सकती है जो निर्यात में सहायक हो सकते है। विदेशों के साथ समझौते द्वारा अपने माल की औद्योगिक मेंलो मे प्रदर्शनी में भाग लेकर भी निर्यात में सहायता कर सकती है। इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार द्वारा बाजार का विस्तार कर साधनों का सदुपयोग कर आय, निवेश तथा रोजगार को बढ़ाने मे सहायक होता है।

क्षेत्रीय असमानताओं में कमी
(Reduction in Regional Disparities)

अधिकतर देश इस तरह की समस्या से जुझते है। विकसित देश जैसे अमेरिका को भी इस समस्या से छुटकारा नहीं मिला। अल्पविकसित देशों में सन्तुलित विकास संभव नही हो पाता क्योंकि पूंजी का कमी सबसे बड़ा कारण है। इसलिए सरकार वर्तमान परिस्थितियों पर काबू करने के लिए किसी एक क्षेत्र मे अधिक निवेश तथा दूसरे मे कम निवेश करती है। जैसे खाद्याान्न की पूर्ति के लिए हरियाणा तथा पंजाब में हरित क्रान्ति लाई गई। परिणाम यह हुआ कि कृषि क्षेत्र में ये दोनों ही राज्यों से आगे है। इसलिए किसी एक राज्य का दूसरे राज्य से पिछड़ापन अर्थात् सभी राज्यों का समान रूप से विकास न होने पर क्षेत्रीय असमानता का समाना करना पड़ता है।

इस तरह की समस्या से उभरने के लिए राज्य ही अपनी भूमिका निभा सकता है। क्योंकि किसी पिछड़े क्षेत्र को विकसित करने के लिए पूंजी की आवश्यकता है लेकिन निजि व्यक्ति के पास न तो इतनी पूंजी की उपलब्धता है और न ही वह इस प्रकार के निवेश मे रूची लेता है।

भारतीय सरकार ने क्षेत्रीय असमानता दूर करने के लिए विभिन्न कार्यक्रम चलाए है। (1) पिछड़े क्षेत्रों में औद्योगिकरण (2) कृषि से सम्बन्धित इकाई तथा कृषि का विकास (3) यातायात, संचार व बैकिंग सुविधा प्रदान करना था (4) योजनाओं मे सहायता

के लिए फंड की स्थापना करना जो राज्यों को हस्तान्तित किए जा सके। (5) पिछड़े क्षेत्रों मे सरकारी क्षेत्रों की स्थापना (6) पिछड़े तथा अर्धविकसित क्षेत्रों के विकास के लिए मुख्य कार्यक्रम।

ऊपर लिखित अथवा ऊपर वर्णित राज्य की भूमिका देश के विकास के लिए बहुत आवश्यक है। लेकिन भूमिका के साथ यदि यह दखल-अंदाजी का रूप धारण करले तो यह विकास मे रूकावट भी बन सकती है। इसलिए पिछले कई दशकों मे इसकी भूमिका पर सवाल उठने लगे है। अध्ययन बताते है कि अल्पविकसित देशों में जहाँ राज्य की दखलअंदाजी कम थी वहाँ विकास तेजी से हुआ और जहाँ राज्य की दखलअंदाजी है वहाँ यह कुछ ही क्षेत्रों तक सीमित रह गया है। इसलिए जापान, दक्षिण कोरिया, सिंगापुर, हाँगकाँग ने बाकी अल्पविकसित देशों की बजाय अपने आप बेहतर साबित किया है। इसका कारण सरकार की खुली निति है। इसलिए सरकार की दखलअंदाजी नहीं बल्कि (Market Friendly) बाजार मित्र होनी चाहिए तभी सरकार आर्थिक विकास में भरपूर योगदान दे सकती है यह भी आवश्यक हैं कि दखलअंदाजी साधारण, पारदर्शिता तथा कानून के दायरे मे ंहोनी चाहिए।

सरकार को समय-समय निरीक्षण भी करते रहना चाहिए ओर घरेलू तथा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार मे अनुशासन में रखने के लिए भी सरकार की दखलअंदाजी सही है। क्योंकि यदि समय रहते इस पर काबु न रखा जाए तो यह स्थिति विस्फोटक तथा नियंत्रण से बाहर हो सकती है जैसे भारी रसायनिक उद्योग (कोरिया) को पता चला कि यह उद्योग बाजार अपनी क्षमता नहीं दिखा पाया और यह निति फेल होती जा रही है उसने इन उद्योगों से अपना हाथ खींच लिया।

UNIT-2

अध्याय-8

संतुलित व द्धि विकास

(The Theory of Balanced Growth)

संतुलित व द्धि को विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने अपने-अपने ढंग से प्रस्तुत किया है। कुछ मानते है अर्थव्यवस्था में समान रूप से निवेश, कुछ का मानना है कृषि तथा उद्योग का एक साथ विकास करना और कुछ का मत है पिछड़े क्षेत्रों में निवेश करना ताकि वह विकसित क्षेत्रों के साथ आ सकें। इसलिए संतुलित व द्धि में हम यह मानकर चलते हैं कि उपभोक्ता वस्तु उद्योगों तथा पूंजी उद्योग के बीच सामंजस्य हो तथा अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों मे एक साथ सामजंस्यपूर्ण विकास होना चाहिए ताकि सब क्षेत्र साथ-साथ बढ़े।

संतुलित व द्धि में यह आवश्यक है कि सरकार निश्चित योजना बनाकर सभी क्षेत्रों में एक साथ निवेश करे। यदि किसी एक क्षेत्र में निवेश करती है तो शुरू में यह अलाभदायक हो सकता है लेकिन सामूहिक रूप में यह लाभदायक सिद्ध होगा। इसका अभिप्राय है कि विकास का लाभ किसी व्यक्ति विशेष को न हो कर सामूहिक रूप से होना चाहिए। इसलिए यदि सरकार पिछड़े क्षेत्र में निवेश कर उसे विकसित क्षेत्र के साथ लाती है तो यह निवेश सामूहिक न होकर निजी है लेकिन यह अर्थव्यवस्था के लिए लाभ कारी होगा।

संतुलित व द्धि की आधारभूत विशेषता है कि विभिन्न उद्योगों में समान रूप से निवेश करना जिससे बाजार का आकार विकसित होगा तथा निवेश प्रोत्साहित होगा। इस सिद्धांत के महत्त्वपूर्ण चरण है रोजनस्टीन रोडान, रेगनार नकर्से तथा डब्लु० ए० लुइस। इन तीनों ने इस सिद्धांत का समर्थन किया है।

रोजनस्टीन रोडान प्रथम अर्थशास्त्री थे जिन्होंने 1943 में अपने लेख Problems of Industrialization of Eastern and South Eastern Europe में संतुलित व द्धि का प्रतिपादन किया। उनका मत था कि एक ही उद्योग में उन्नत उत्पादन के तरीकों का प्रयोग करने के बाद भी उद्योग फेल हो सकता है क्योंकि इसके अपने उत्पादन की खपत के लिए बाजार का छोटा आकार है। इसलिए आवश्यक है एक साथ विभिन्न उत्पादन करने वाले विभिन्न कारखानों की स्थापना करना। इससे रोजगार के साधन बढ़ेगें और लोगों की क्रयशक्ति एक दूसरे उद्योग को बड़ा बाजार प्रदान करेगी। क्योंकि क्रय करने की क्षमता उत्पादन करने की क्षमता है।

दूसरा व्याख्यान है कि उपभोक्ता वस्तुओं तथा सोसल ओवरहैड कैपिटल (सामाजिक उपरि पूँजी) में निवेश एक साथ करना। सोसल ओवरहैड कैपिटल (SOC) में निवेश इसलिए आवश्यक है क्योंकि बहुत से अल्पविकसित देशों में अपर्याप्त यातायात व संचार सुविधाएँ तथा अपर्याप्त विद्युत शक्ति है।

तीसरा मत है। एक साथ उपभोकता वस्तुओं, SOC तथा पूंजीगत वस्तुओं में निवेश। यह समझा जाता है कि यह सिद्धांत (मत) उद्योगीकरण को बढ़ाने में सम्पूर्ण है। इसके लिए पक्ष रखा गया है कि आर्थिक विकास के लिए आवश्यक है राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का भी उत्पादन के क्षेत्र तथा व्यापार के क्षेत्र में प्रवेश क्योंकि तकनीकी रूप से ये एक दूसरे पर निर्भर है। तथा हम इस तरह के उद्योगों को भी स्थापित कर सकते है जिनको अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से तकनीकी लाभ हो। इस प्रकार के निवेश से आर्थिक विकास के साथ-साथ अल्प विकसित देशों में प्रवर्तन को भी बढ़ावा मिलेगा।

चौथा मत है अर्थव्यवस्था के कृषि तथा उद्योग क्षेत्र की संतुलित व द्धि इन दोनों क्षेत्रों में व द्धि से यह फायदा होगा कि यह एक दूसरे को बाजार उपलब्ध कराने में सहायक होंगे। नकर्से ने भी इसी तरह के विचार दिए हैं। यदि कृषि क्षेत्र उद्योग क्षेत्र को

अतिरेक देने में असहायक हो तो उद्योग में बनाई गई मशीनरी की भी इस क्षेत्र में खपत कम होगी। इससे कृषि सुधार को भी धक्का लगेगा क्योंकि कृषि वस्तुओं के लिए बाजार की कमी की वजह अकृषि क्षेत्र का कम विकसित होना। इसलिए इन दोनों क्षेत्रों में से प्रत्येक को आगे बढ़ने की कोशिश करनी चाहिए। यदि एक क्षेत्र में धीरे विकास होता है तो दूसरा क्षेत्र भी प्रभावित होगा। इसको निम्नलिखित चित्र से प्रस्तुत किया है।

चित्र 1

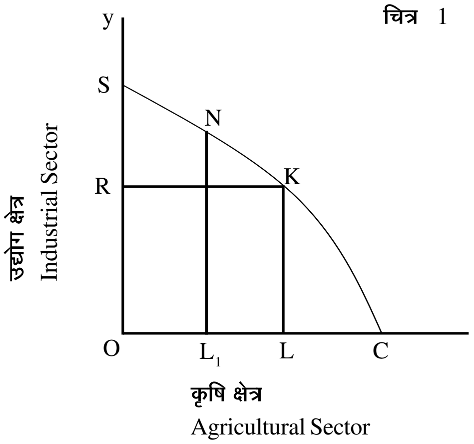

चित्र 1 में कृषि क्षेत्र को (Oaxis) क्षैतिज अक्ष पर व उद्योग क्षेत्र को (y axis) अनुलंब अक्ष पर दिखाया गया है। निवेश संभावना वक्र SC द्वारा व्यक्त किया गया है। K बिन्दु दर्शाता है कि यदि कृषि व उद्योग में समान रूप से निवेश करना हो तो यह OR औद्योगिक क्षेत्र में तथा OL कृषि क्षेत्र में होगा। A बिन्दु संतुलन का बिन्दु होगा इस कारण यदि संतुलन व द्धि की बात की जा रही है तो दोनों क्षेत्रों में समान रूप से निवेश होगा क्योंकि एक क्षेत्र में दूसरे क्षेत्र से अधिक निवेश नहीं किया जा सकता। चित्र में N बिन्दु में कृषि में निवेश की दर $OL_1 < NL_1$ उद्योग में निवेश की दर से है। इसका परिणाम कच्चे माल की लागतों में व द्धि होगी और अर्थव्यवस्था में स्फीति की स्थिति उत्पन्न होगी इसलिए संतुलन व द्धि में अपेक्षा की जाती है कि विभिन्न उपभोक्ता वस्तुओं तथा पूंजी उद्योगों के बीच संतुलन कायम रहना चाहिए।

बाजार के आकार को प्रभावित करने वाले तत्त्व
(Factors Affecting Market)

अल्पविकसित देशों में गरीबी के दुष्चक्र को तोड़ने के लिए बाजार के आकार को बढ़ाकर निवेश के दबाव को बढ़ाया जा सकता है। कुछ लोग विश्वास करते हैं कि मुद्रा की पूर्ति बढ़ाकर भी बाजार का आकार बढ़ाया जा सकता है। नर्कसे के अनुसार यह मत गलत है। उसने इस गलत मत का अल्पविकसित देशों में केन्ज के सिद्धान्त को लागू करके इस का कारण निकाला है क्योंकि अल्पविकसित देशों की समस्याएँ विकसित देशों से बिल्कुल भिन्न है। नकर्से ने कहा है कि केन्ज के मत में अल्पविकसित देशों में प्रभावी माँग की कमी नही होती है। दूसरे शब्दों में वास्तविक क्रय शक्ति उत्पादकता के निम्न स्तर से होती है जिसको केवल मुद्रा की पूर्ति को बढ़ाकर नहीं बढ़ाया जा सकता। दूसरे शब्दों में यदि बाजार का आकार बढ़ता है तो वस्तुओं की पूर्ति भी बढ़नी चाहिए। अल्पविकसित देशों में उत्पादन का स्तर निम्न होने से पूर्ति सीमित होती है क्योंकि पूंजी की कमी से इसको आसानी से बढ़ाया नहीं जा सकता।

जनसंख्या का आकार भी घरेलू बाजार को बढ़ाने में प्रभावी नहीं है। अधिक जनसंख्या वाले अल्पविकसित देशों में उत्पादकता के निम्न स्तर से बाजार का आकार छोटा होता है क्योंकि कम उत्पादकता के कारण प्रति व्यक्ति आय भी कम रहती है इससे अमीर विकसित देशों में जनसंख्या के दबाव के कम होने पर भी बाजार का आकार बड़ा होता है। क्योंकि ऊँची उत्पादकता से उनकी राष्ट्रीय आय अधिक होती है जिससे उनको उपभोग खर्च ऊँची, जनसंख्या दर वाले देशों से अधिक होता है। क्योंकि भारत में उत्पादकता के स्तर में कमी से 1998 में संयुक्त राज्य का सकल राष्ट्रीय उत्पाद भारत से तीन गुणा ज्यादा था।

कुल लोगों का गलत मत है कि यदि किसी देश का भौगोलिक क्षेत्र बड़ा है तो बाजार का आकार भी बड़ा होगा यह बात एड्म

स्मिथ ने अपने विश्लेषण में बाजार के आकार पर भौगोलिक क्षेत्र के प्रभाव में वर्णन किया है। यह तो तर्क बनता है कि जिस क्षेत्र में वस्तुओं का प्रयोग बढ़ेगा तो उससे संबंधित वस्तुएँ भी बढ़ेगी और इससे निवेश का दबाव भी बढ़ेगा। लेकिन भौगोलिक क्षेत्र को बाजार के आकार से जोड़ना या तुलना करना सही नहीं है। एक देश का क्षेत्र बड़ा होने पर भी बाजार का आकार छोटा हो सकता है। उदाहरण के तौर पर इंडोनेशया का भौगोलिक क्षेत्र जापान से पांच गुणा ज्यादा है और इसकी जनसंख्या भी 52 मिलियन ज्यादा है। यद्यपि इंडोनेशिया में उत्पादकता जापान से बहुत कम है। इंडोनेशिया में आधारभूत वस्तुओं तथा विलासता वस्तुओं की माँग सीमित है लेकिन जापान में क्षेत्र छोटा होने के बावजूद घरेलू बाजार काफी बड़ा है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि परिवहन लागतें और व्यापार रोध बाजार के आकार को संकुचित करते हैं। आधुनिक समय मे ये व्यापार गतिरोध बहुत से उत्पादों का अन्तर्राष्ट्रीय बाजार कम कर देते है। प्रशुल्क प्रतिबंध, विनिमय, नियंत्रण, आयात कोटा निर्धारण है। यातायात लागतें इत्यादि की वजह से वस्तुएँ अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में प्रवेश नहीं कर सकती। इससे निवेशक को प्रोत्साहन नहीं मिलता और पूंजी की प्रक्रिया कम हो जाती है। नकर्से कहता है कि आर्थीक तथा भौगोलिक अर्थ में बाजार का विस्तार करने के लिए सीमा-कस्टम यूनियन का निर्माण होना चाहिए जिससे प्रतिबंध हटने से बाजार का आकार विस्त त होगा। कस्टम डयूटी हटाने से कीमतों में गिरावट आएगी और इससे बहुत सी वस्तुओं की माँग बढ़ेगी। इससे विकासशील देश एक दूसरे के ग्राहक बन जाएँगे। घरेलू उतपाद में व द्धि होने पर विदेशी बाजार का विस्तार होगा। लेकिन यदि अन्य देशों द्वारा चलाए गए नियंत्रणों के कारण विदेशी व्यापार घट जाऐ तो सबसे अच्छा तरीका है धरेलू उपभोग के लिए उत्पादन का विस्तार करना चाहिए जिससे अर्थव्यवस्था में रोजगार तथा आय के साधन बढ़ें।

नकर्से के अनुसार बाजार का आकार उत्पादकता के स्तर पर निर्भर करता है। यदि इसको पूर्ण रूप से देखा जाए तो उत्पादन का आकार बाजार के आकार को निर्धारित नहीं करता बल्कि उसकी सीमितता के बारे में बताता है। बाजार के आकार के निर्धारण के लिए जनसंख्या का आकार तथा भौगोलिक आकार जरूरी नहीं बल्कि बढ़ती उत्पादकता तथा व्यापार पर लगे प्रतिबंध लगाना आवश्यक है।

उत्पादकता बढ़ाने के लिए पूंजी प्रधान तकनीक पर जोर दिया गया है। अल्पविकसित देश पूंजी प्रधान तकनीक को यदि श्रम प्रधान तकनीक से बदल लें तो उत्पादकता का स्तर बढ़ेगा। पश्चिमी देशों यू० अस० ए०, जर्मनी के ताजा अभ्यास बताते हैं कि पूंजी प्रधान तकनीकों का महत्त्व कम नहीं है बल्कि इनको प्रदान करने वाली पूंजी की कमी है। इसलिए पूंजी की कमी इनकी उपलब्धता को सीमित कर देती है।

बाजार का आकार, मुद्रा आय के स्थिर रहने पर, बढ़ने की क्षमता रखता है यदि कीमतों को कम किया जाए। यह निति तभी काम करेगी जब उत्पादकता तथा लोगों की वास्तविक आय बढ़े। बाजार का आकार तब भी बढ़ सकता है जब लोगों की मुद्रा आय बढ़ने पर कीमतें न बढ़े। लेकिन यह भी तभी संभव है जब उत्पादन कुशलता में व द्धि होने पर लोगों की वास्तविक आय बढ़े। नकर्से के अनुसार यह नियम अल्पविकसित देशों में ही लागू होता है। अल्पविकसित देशों में बचत की अधिकता होने पर विस्फीति खाई नही पनपती। उत्पादन अपनी माँग स्वयं निर्धारित करता है और बाजार का आकार उत्पादन के volume पर निर्भर करता है। अन्त में कह सकते हैं बाजार को केवल उत्पादकता में चारों ओर बढोतरी करके बढ़ा सकते हैं। क्रय करने की क्षमता का अभिप्रायः है उत्पादन करने की क्षमता।

संतुलित व द्धि की आवश्यकता
(The Need of Balanced Growth)

रोजनस्टीन रोडान का मुख्य विचार था कि प्रायः सामाजिक सीमांत उत्पाद (Social Marginal Product) का निवेश उसके नीति सीमांत उत्पाद (Private Marginal Product) से भिन्न होता है, और जब उद्योगों के एक ग्रुप का उनकी SMPs के अनुसार इकट्ठा नियोजन किया जाता है तो अर्थव्यवस्था की व द्धि दर अधिक होती है यह इसलिए की एक उद्यमी निवेश के लिए PMP में ही रूचि रखता है और उसकी SMP का सही अंदाजा नहीं लगा सकता। उसका सारा लगाव PMP के निवेश तक संबंधित रहता है।

रोजनस्टीन रोडान ने इस तर्क को सिद्ध करने के लिए कुछ उदाहरण दिए हैं। इन उदाहरणों में यह बताने की कोशिश की गई है कि SMP भी PMP से ज्यादा हो सकती है। समाज के द ष्टिकोण से विभिन्न उद्योगों की पूरकता बहुत लाभदायक निवेश की ओर ले जाती है। रोजस्टीन रोडान ने इसे जूता उद्योग द्वारा वर्णित किया है। मान लो एक जूता फैक्टरी एक नए क्षेत्र

में प्रारम्भ की जाती हे। जिससे बेरोजगारों को अधिक मात्रा में रोजगार उपलब्ध कराया जाता है। इस फैक्टरी से सबसे बड़ी समस्या उसके उत्पादन की खपत से है। क्योंकि ये भी हो सकता है कि श्रमिक अपनी सारी आय जूतों पर खर्च न कर पाएँ इसलिए इसकी माँग में कमी हो सकती है। यद्यपि यदि निवेश एक साथ कई उद्योगों में किया जाए तो माँग की कमी नही होगी। विभिन्न उद्योगों में काम करने वाले व्यक्तियों की बढ़ी हुई आय सभी वस्तुओं के लिए पूर्ण बाजार उपलब्ध कराएगी। इसलिए वस्तुओं की बढ़ी हुई पूर्ति अपनी माँग स्वयं बनाएगी।

नकर्से SMP में PMP से बढ़ी निवेश की मात्रा से उत्पन्न होने वाली समस्याओं पर ध्यान नहीं देता। उसके अनुसार आर्थिक विकास में सबसे बड़ी रूकावट बाजार का छोटा आकार है और इस समस्या का निवारण है। उत्पादकता में चहुँमुखी व द्धि। उसका मत है कि बाजार का आकार बढ़ाने के लिए अल्पविकसित देशों में लम्बे स्तर पर निवेश कार्यक्रम चलाने चाहिए। बाजार का छोटा आकार निजी निवेश को प्रभावित करेगा।

नकर्से ने भी रोजनस्टीन रोडान का जूता फैक्ट्री का उदाहरण दिया है। यदि अल्पविकसित क्षेत्र में एक जूता फैक्ट्री स्थापित की जाए तो यह सफल नही होगी और बन्द हो जाएगी। जूता फैक्ट्री तभी सफल हो सकती है जब श्रमिक अपनी आय जूतों पर खर्च करें। यदि वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आय का छोटा भाग खर्च करते है तो यह फेल हो जाएगी। यद्यपि यदि अल्पविकसित देशों का विचार विभिन्न उद्योगों में एक साथ निवेश करने का है तो माँग की कमी नहीं होगी। W.A. Lewis ने संतुलन व द्धि की दो कारणों से वकालत की है। पहला कारण है यदि अर्थव्यवस्था का फैलाव हो तो अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के उत्पादन की संबंधित कीमतें बदलनी नहीं चाहिए। यह आवश्यक है यह भी आवश्यक है कि एक क्षेत्र के विकास से दूसरे क्षेत्र का विकास बाधित न हो। दूसरा मत है विकास कार्यक्रमों में अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों की व द्धि साथ-साथ हो तथा उद्योग तथा कृषि के बीच और घरेलू उपभोग के लिए उत्पादन तथा निर्यात के लिए उत्पादन के बीच संतुलन रहे।

निष्कर्ष के तौर पर संतुलित व द्धि में निम्नलिखित तथ्य उभर कर आते है।

1. संतुलन व द्धि से सभी क्षेत्रों में समान रूप से व द्धि नहीं हो सकती है जैसे कुछ उद्योग दुसरे उद्यागों से हमेशा आगे रहेंगे। संतुलन व द्धि की माँग है सभी उद्योगों में एक जैसा विकास हो जिससे विभिन्न क्षेत्रों के उत्पादन अपना बाजार पाने में सक्षम होंगे जिससे उद्योग में न तो अतिरेक होगा और न ही कमी होगी।

2. संतुलित व द्धि केवल उद्योग क्षेत्र में ज्यादा निवेश नहीं बल्कि कृषि क्षेत्र में भी बराबर का निवेश जिससे कृषि तथा उद्योग क्षेत्र में सामानांतर विकास हो।

3. संतुलित व द्धि सिद्धांत अर्थव्यवस्था के घरेलू व विदेशी क्षेत्र में सामंजस्य की वकालत करता है।

संतुलित व द्धि की प्राप्ति कैसे
(How can Balanced Growth be Achieved)

यदि अर्थव्यवस्था विकास प्रक्रिया में संतुलन बनाए रखने के लिए कीमत प्रलोभन पर निर्धारित रहती हैं तो एक नियेजित अर्थव्यवस्था में राज्य की दखलअंदाजी से ही संभव हो सकता है। यदि कुछ देश संतुलित व द्धि के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कीमत प्रलोभन देते हैं तो व द्धि की दर में न कमी होगी न व द्धि बल्कि अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में संतुलन की स्थिति धीरे होगी। इससे तकनीकी समस्या उभरेगी और जनसंख्या के दबाव की खपत करना मुश्किल होगा।

नकर्से का विचार है कि अल्पविकसित देशों के पास संतुलित व द्धि का पालन करने की बजाय कोई चुनाव नहीं बचता। विकास की पूर्ति के लिए सरकार पर निर्भर करता है कि वह निजी क्षेत्र पर विश्वास करे या अपने आप अर्थव्यवस्था का नियोजन करे। यह मसला अर्थशास्त्रियों का नहीं हैं बल्कि सरकार का है। अर्थशास्त्री के लिए यही कहना बहुत है कि निवेश को विभिन्न उद्योगों मे या क्षेत्रों में किया जाए जिससे वे अपने उत्पाद के लिए बाजार दे सकें। यद्यपि अर्थशास्त्रीयों में आम सहमति है कि निजी निवेश संतुलन व द्धि से परे है। यह तभी संभव है जब सरकार दखल करे। चाहे वह अपने आप हो या निजी क्षेत्र के सहयोग से हो। कुछ अर्थशास्त्रियों का मानना है कि यदि निजी क्षेत्र संतुलित व द्धि के दायित्व को निभाने के लिए तैयार है तो सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र राज्य के हस्तक्षेप की माँग करता है। यदि राज्य हस्तक्षेप न करे या सहयोग न दे तो विकास बढ़ने पर आय की असमानता, धन तथा आर्थिक शक्तियाँ बढ़ेंगी।

संतुलित व द्धि के सिद्धांत की आलोचना
(Criticism of the Balanced Growth Theory)

1. **साधनों की उपलब्धता की कमी** (The Inadequacy of Resources): अल्पविकसित देशों में संतुलित व द्धि का सिद्धांत साधन जुटाने में असफल रहा। क्योंकि धन की कमी की वजह से अल्पविकसित देशों में साधनों की कमी है इसलिए कृषि तथा विभिन्न उद्योगों में एक साथ धन जुटाना संभव नहीं। साधनों की कमी को देखते हुए यह मुश्किल है कि इतनी लम्बे स्तर पर निवेश के कार्यक्रम सफल होगें।

2. **लागतों में व द्धि** (Rise in Costs): एक साथ विभिन्न क्षेत्रों में निवेश उनकी उत्पादन की मौद्रिक तथा वास्तविक लागत बढ़ा देगी। इस प्रकार कच्चे माल का अभाव, पूंजी की कमी, तकनीकी प्रभाव इन क्षेत्रों को अलाभदायक बना देगा।

3. **विकास के सिद्धांत के रूप में असफल** (Fails as theory of development): हर्षमैन के अनुसार विकास के सिद्धांत के रूप में संतुलिक व द्धि का सिद्धांत असफल है। विकास का अर्थ है एक तरह की अर्थव्यवस्था को दूसरी तरह की विकसित अर्थव्यवस्था में तबदील करना। परंतु संतुलित व द्धि के सिद्धांत में किसी नए, आत्म निर्भर आधुनिक उद्योग क्षेत्र को समान रूप से स्थिर व आत्मनिर्भर परम्परागत अर्थव्यवस्था पर थोंपना है। हर्षमैन के अनुसार यह विकास का पूर्ण दोहरा ढाँचा है। यह व द्धि नही है बल्कि किसी पुरानी चीज से नई चीज व नई चीज से किसी ऊँचे स्तर पर पहुँचना है।

4. **उद्योगों के बीच संबंध प्रस्थापित नहीं** (Relationship between industry is not complementary): अल्पविकसित देशों में साधनों की कमी से उद्योगों के बीच प्रतियोगिता की स्थिति होती है न कि प्रस्थापित की क्योंकि पूंजी की कमी से ये एक दूसरे से स्पर्धा करते हैं। और समान साधनों को हथियाने के लिए संघर्ष करते हैं।

5. **अल्पविकसित देशों की क्षमता से बाहर** (Beyond the capabilities of underdeveloped countries): संतुलित व द्धि का सिद्धांत अधिकतर उत्पादकता के स्तर पर निर्भर करता है क्योंकि यह बाजार के आकार को प्रभावित करती है। अल्पविकसित देशों में कुशलता की कमी, उद्यमी की योग्यताहीनता संतुलित व द्धि में रूकावट है। इन देशों में उत्पादकता का स्तर भी नीचा होता है। एक साथ विकास के लिए प्रारम्भिक मोर्चो पर साधनों का अभाव होता है। यदि किसी देश के पास साधनों की पर्याप्त मात्रा है तो वह शुरू में ही अल्पविकसित नहीं होगा इसलिए साधनों की कमी से अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में संतुलित व द्धि का सपना संजोना अधूरे सपने की तरह दिखाई देता है।

अध्याय-9

असंतुलित व द्धि का सिद्धांत

(The Theory of Unbalance Growth)

असंतुलित व द्धि का सिद्धांत का अभिप्राय सभी क्षेत्रों में एक साथ निवेश न करके कुछ क्षेत्रों में निवेश करना है। अल्पविकसित देशों मे चुने हुए क्षेत्र में निवेश करके व द्धि की जा सकती है। उनसे उत्पन्न होने वाली व द्धि से अन्य क्षेत्रों का भी विकास होगा। यदि एक बार निवेश किया जाता है तो नया असन्तुलन पैदा होगा जिसको संतुलित निवेश की आवश्यकता होगी और यह क्रम लगातार चलता रहेगा। इसलिए संतुलित स्थिति में व द्धि न होकर यह असंतुलन स्थिति में संभव है। यदि एक क्षेत्र विकास में आगे बढ़ता है तो दूसरा भी उसको पकड़ने की कोशिश करता है। यह इस तथ्य को दर्शाता है कि विकास एक असंतुलित प्रक्रिया है और अर्थव्यवस्था में संपूर्ण व द्धि का उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता क्योंकि ये निवेश से कुछ क्षेत्रों में अधिक व द्धि से नई असंतुलन की स्थिति उत्पन्न होगी। यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहेगी जिसका कोई अंत नहीं है। यह प्रक्रिया तीव्र आर्थिक विकास पर अपना दबाव बनाएगी। विभिन्न अर्थशास्त्रीयों ने अपने-अपने विचार प्रस्तुत किए है। लेकिन हर्षमैन ने असंतुलित व द्धि के बारे में पूर्ण रूप से व्याख्या की है। अब हम इसका पूर्ण रूप से वर्णन करेंगे।

हर्षमैन की कूटनीति
(Hirschman's Strategy)

हर्षमैन ने असंतुलित व द्धि के सिद्धांत का प्रतिपादन किया है। उनके अनुसार किसी अल्पविकसित देश में आर्थिक व द्धि लाने के लिए पहले से बनाई गई कूटनीति के अनुसार जानबुझकर असंतुलन लाया जाए। उसके मतानुसार यदि कोई अर्थव्यवस्था आगे बढ़ते है तो यह विकास निति का कार्य है कि असंतुलन, चिन्ताएँ, इत्यादि को अर्थव्यवस्था में बनाए रखना चाहिए। विभिन्न क्षेत्रों में असमान विकास से तीव्र विकास होगा अथवा उसकी गति तेज होगी। हर्षमैन के अनुसार अर्थव्यवस्था के कुशलतापूर्वक चुने गए उद्योगों में निवेश करने से निवेश के नए अवसर प्राप्त होंगे। और इससे आर्थिक व द्धि के नए रास्ते खुलेंगें इसलिए अल्पविकसित देशों की विकास नीति इन्हीं तथ्यों पर आधरित होनी चाहिए।

1. सामाजिक ऊपरी पूंजी/ Social Overhead Capital
2. प्रत्यक्ष उत्पादन क्रियाएँ/Directly Productive Activity

1. **सामाजिक ऊपरी पूंजी (Social Overhead Capital (SOC)** में वे आधारभूत सेवाएँ शामिल होती है जिनके बिना प्राथमिक, द्वितीय तथा त तीय उत्पादक क्रियाएँ नहीं चलती। शिक्षा, स्वास्थ्य, बिजली, पानी, परिवहन, संचार इत्यादि पर होने वाला निवेश SOC में शमिल किया जाता है। SOC में निवेश बाह्यय मित-व्ययिताओं का निर्माण करती है, जबकी (Directly Productive Acitvity (DPA) मितव्ययताओं को प्राप्त करती है। SOC में प्राप्त होने वाली सेवाओं का आयात नहीं किया जा सकता SOC की कम व अधिक क्षमता से विकास प्रभावितः हर्षमैन ने असंतुलिन व द्धि को दो माध्यम से वर्णित किया है (1) SOC की कमी से विकास (2) SOC की अधिक क्षमता से विकास। SOC में कम निवेश का मतलब है DPA में पहले निवेश करना इसलिए SOC के अभाव के कारण उत्पादन लागतें बढ़ जाएगी। कुछ समय पश्चात् राजनैतिक दबाव SOC में भी निवेश को प्रभावित कर सकते हैं। लाभ आशाओं से SOC से DPA में तथा राजनैतिक दबाव DPA से SOC में निवेश क्रम चलाते हैं। SOC में ज्यादा निवेश से यातायात, विद्युत आदि सेवाओं की लागत घटाएगा और DPA में निवेश प्रोत्साहित होगा।

मोटे तौर पर यदि DPA की उत्पादन लागत बढ़ेगी तो अर्थव्यवस्था में SOC की कमी होर्गी इस स्थिति को चित्र द्वारा वर्णित किया गया है। चित्र 1 में SOC को क्षैतिज अक्ष पर तथा DPA को अनुलम्ब अक्ष पर मापा गया है। DPA उत्पादन को उत्पादित करने की कुल लागत vertical axis पर दिखाई है।

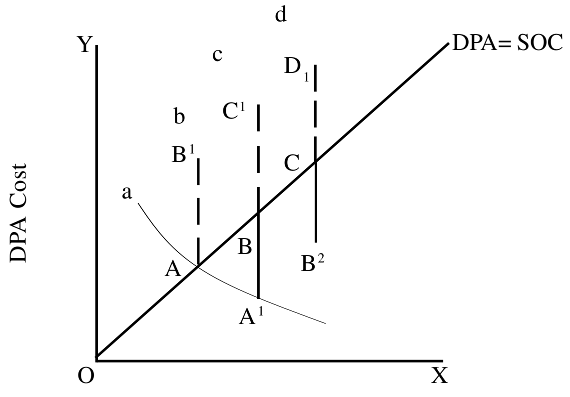

Fig. 1

वक्र a, b, c, सम मात्रा वक्र है जो DPA और SO C की विभिन्न मात्राओं को प्रकट करती है जो किसी एक बिन्दु पर कुल राष्ट्रीय उत्पाद की मात्रा देगें। जब हम अधिक उच्चे वक्र पर जाते हैं तो इसका मतलब है कुल राष्ट्रीय उत्पाद भी बढ़ रहा है। जहाँ पर DPA व SOC Vertical axis को छुते है वहाँ संतुलन व द्धि को प्रकट करता है अथवा DPA व SOC की बराबर मात्रा का प्रयोग।

हर्षमैन के अनुसार SOC तथा DPA में एक साथ विस्तार नहीं किया जा सकता यदि SOC की अतिरिक्त क्षमता के द्वारा विकास अपनाया जाए तो अर्थव्यवस्था AA^1BB^1C का पालन करेगी जब अर्थव्यवस्था में SOC A से A^1 तक व द्धि करती है तो DPA निवेश B^1 तक बढ़ता जाता है। तक तक की संतुलन B पर दोबारा स्थापित नहीं हो जाता। जहाँ पर सारी अर्थव्यवस्था उत्पादन से पहले से अधिक ऊँचे स्तर पर है। इसलिए उत्पादन का अधिक ऊँचा स्तर सरकार को प्रेरित करता है कि वह SOC में अधिक निवेश करे।

यदि दूसरी तरफ SOC में न्यून्तम निवेश की दर को अपनाया जाए तो अर्थव्यवस्था $AB^1 BC^1C$ के साथ चलती है तो हम DPA को B^1 तक बढ़ाते रहेंगे। इससे उत्पादन लागतों में व द्धि होगी और DPA उत्पादक SOC सुविधाओं के साथ लागत कम करने की कोशिश करेंगे। आर्थिक और राजनैतिक दबाव से SOC में निवेश B तक बढ़ जाएगा। फिर हम DPA को C^1 तक बढाएँगे यह SOC में निवेश करने के लिए और दबाव बढ़ाएगा जब तक संतुलन दोबारा c तक न पहुँचे और यह क्रम चलता रहेगा।

विकास के दोनों मार्ग अर्थव्यवस्था में प्रलोभन और दबाव दोनों बनाते हैं लेकिन उनकी क्षमता का आंकलन उद्यमी की क्षमता और SOC में निवेश के लिए सार्वजनिक दबाव से किया जाएगा। SOC में निवेश की अधिक क्षमता DPA निवेशक को भी निवेश करने के लिए आकर्षित करेगी यदि DPA को SOC से आगे बढ़ने की अनुमति दी जाए तो SOC के लिए दबाव बढ़ेगा। हर्षमैन के अनुसार अल्पविकसित क्षेत्र (देशों) में SOC व DPA का संतुलन होना मुश्किल है।

हर्षमैन तर्क देता है कि SOC की कमी से विकास केवल कुछ ही अल्पविकसित देशों के पिछड़े क्षेत्रों में संभव है इन क्षेत्रों मे विकास की संभावनाएँ नहीं होती हैं। अल्पविकसित देश के उन्नत क्षेत्रों में SOC की सुविधाओं से विकास के नए आयाम शुरू होंगे क्योंकि काफी उद्यमी हमेशा अपनी लागत घटाने तथा आय में सुधार करने को तत्पर रहते हैं।

अग्रानुबंधन और पश्चातनुबंधन अनुबंधक
(Backward and Forward Linkages)

Forward Linkages (FL) का अभिप्राय उत्पादन की आगामी अवस्थाओं में निवेश को प्रोत्साहन। Backward Linkages (BL)

का अभिप्राय उत्पादन की प्रारंम्भिक अवस्थाओं में निवेश साधारणतयः हर एक प्रोजेक्ट में (FL) तथा (BL) होते हैं। निवेश उन्हीं प्रोजेक्ट में करना चाहिए जिनमें कुल प्रभाव ज्यादा हो। प्रोजेक्ट के कुल प्रभाव एक देश से दूसरे में भिन्न होते हैं और इसके बारे में आगत निर्गत सूची (Input-output table) का अध्ययन करके ज्ञान ले सकते हैं अथवा पता लगा सकते हैं। हर्षमैन का कहना है कि अधिकतम संयुक्त अनुबंधक प्राप्तांक (Combined Linkages Score) वाला उद्योग लोहे तथा इस्पात का है। इस उद्योग को अधिक महत्त्व देने में अल्पविकसित देश बिल्कुल मुर्ख तथा पूर्णतया प्रतिष्ठा प्रतियोजित (Prestige Motivated) नहीं है। परन्तु उसका आगे कहना है कि स्पष्ट रूप से केवल, इसलिए कि इस्पात उद्योग अनुबंधन को अधिक बनाता है। हर जगह लोहा उद्योग से विकास संभव नहीं क्योंकि अल्पविकसित देशों में अनुबंधन का अभाव होता है।

अधिकतर अल्पविकसित देश कृषि प्रधान देश हैं और कृषि में प्राथमित तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। इस तरह की कृषि में BL नहीं है। FL भी कमजोर होते हैं क्योंकि कृषि का अधिकतर उत्पादन उपभोग के लिए या निर्यात के लिए किया जाता है। इसलिए अल्पविकसित देशों में कृषि में अनुबंध प्रभाव कमजोर तथा उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए अनुबंध प्रभाव मजबूत होते हैं।

पश्चानुबंधन प्रभाव तथा अन्तिम उद्योग

हर्षमैन के अनुसार अन्तिम उद्योगों को पहले लगाया जाए। औद्योगिक वस्तुओं का निर्माण करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि अल्पविकसित देश उत्पादन की सभी अवस्थाएँ एक साथ प्रारम्भ करे बल्कि इन वस्तुओं को अन्तिम रूप देने के लिए विदेश से प्लांट आयात कर सकती है। ये अन्तिम अवस्था वाले उद्योग आयात परिव ति उद्योग (Import Enclave Industries) भी कहलाते हैं। ये निर्यात प्रव त्ति वाले उद्योगों से बिल्कुल भिन्न है। इस तरह के उद्योगों में FL को उत्पन्न करने के लिए कड़ा मुकाबला करना पड़ता है। परन्तु आयात परिव त्ति उद्योगो में विस्तार से BL की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। द्वितीय क्षेत्र प्रथम क्षेत्र पर तथा त तीय क्षेत्र से द्वितीय क्षेत्र पर आने के लिए BL महत्त्वपूर्ण है। BL किसी देश में अन्तिम अवस्था उद्योगों का इकट्ठा परिणाम् है। ये अल्पविकसित अर्थव्यवस्था के लिए अधिक महत्त्व रखते हैं। माँग में व द्धि FL को उत्पन्न करती है। इसलिए जिन वस्तुओं का आयात कम होता था माँग इतनी बढ़ जाए कि इन वस्तुओं का उत्पादन देश में करना लाभदायक हो सकता है। इसलिए तब तक आयात करना चाहिए जब तक हम उद्यागों को जो अल्पविकसित देशों में पनप रहे पूर्ण संरक्षण न दे दें। इसके लिए कर छूट आदि सुविधाएँ है। हर्ष का मत है कि अल्पविकसित देशों में निर्यातों के द्वारा किए गए योगदान को उचित महत्त्व नही मिलता है। लेकिन आयात प्रतिस्थापन्न तथा निर्यात प्रोत्साहन के बीच कोई विकल्प नहीं है। एक को प्राप्त करने के लिए दूसरा ही एकमात्र सहारा है। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में निर्यात प्रोत्साहन के लिए विशेष प्रबन्ध करने चाहिए। इसलिए दोनों के बीच समायोजन की स्थिति संभव हो सकेगी।

अल्पविकसित व द्धि सिद्धांत का समीक्षात्मक मूल्यांकन
(Critical Appraisal of Unbalanced Growth Theory)

अल्पविकसित देशों में साधनों की कमी की वजह से असंतुलित व द्धि का सिद्धांत आकर्षित करता है। अल्पविकसित देशों में साधनों की कमी तथा उद्यमी की अकुशलता से संतुलित व द्धि संरचना नहीं अपनाई जाती। इसलिए व्यवहारिक तौर पर असंतुलिक व द्धि सिद्धांत ही सही संरचना है। लेकिन इसके बावजूद असंतुलित व द्धि का सिद्धांत कमियों से भरा हुआ है जिसका हम आलोचनात्मक वर्णन करेंगे।

1. असंतुलन व द्धि की बनावट तथा रचना पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। हर्षमैन का कहना है कि असन्तुलन से अर्थव्यवस्था में विकास होता है इसलिए यह बनाकर रखना चाहिए। लेकिन असंतुलन कितना, किस समय का अर्थव्यवस्था के कौन से हिस्से मे हो यह वर्णन नहीं किया है।

2. हर्षमैन ने कहा है कि अनुबंधन प्रभाव को आंकड़ों द्वारा देख सकते है। लेकिन अल्पविकसित यह समस्या ज्यों की त्यों रह जाती है क्योंकि अर्थव्यवस्था में हो सकता है एक दो दशक तक सामाजिक सुविधाएँ या SOC पूर्ण रूप से विकसित ना हुई हो।

3. असंतुलित व द्धि सिद्धांत ने कृषि क्षेत्र की तरफ पूर्ण ध्यान नहीं दिया है। यद्यपि अधिक जनसंख्या व कृषि आधारित

अल्पविकसित देशों में कृषि को नजरअंदाज करना आत्म हत्या करने जैसा है। देश में कृषक वस्तुओं की कमी उद्योग के लिए खतरा बन सकती है। जब तक कृषि क्षेत्र में आय नहीं बढ़ती है तो औद्योगिक वस्तुओं का बाजार सीमित रहेगा।

4. असंतुलित व द्धि सिद्धांत उन्हीं देशों में उपयोगी है जहाँ अर्थव्यवस्था पर राज्य का पूर्ण नियन्त्रण है। उदाहरण के तौर पर समाजवादी देशों ने इस सिद्धांत का सफलतापूर्वक अनुकरण किया। समाजवादी देशों में विकास की प्रारम्भिक अवस्था में उपभोग स्तर ज्यों का त्यों बना रहता है। और उपभोग वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाने का अर्थव्यवस्था पर कोई दबाव नहीं रहता। ऐसी स्थिति में राज्य के पास पूंजीगत वस्तु उद्योग में निवेश करने के लिए काफी अतिरेक है। यद्यपि मिश्रित अर्थव्यवस्था में इसकी (असंतुलित व द्धि सिद्धांत) लाभदायकता कम है। इसका कारण है उत्पादन तरकीब पर राज्य का नियंत्रण सीमित होना है। इसलिए यह असंतुलन को बनाए रखने के लिए सही प्रकार का असंतुलन पैदा करने की स्थिति में नहीं है। इस स्थिति पर काबू करने के लिये बाजार की स्थिति भी कमजोर हैं इससे अर्थव्यवस्था के कुछ क्षेत्रों मे गहन रूकावट पैदा होती है जो आर्थिक विकास को प्रभावित करती है। इस संदर्भ में भारत का उदाहरण दे सकते हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना में बड़े उद्योगों को पनपने का सिद्धांत लागू किया गया। इस सिद्धांत को लागू करने से शक्ति पर गहन रूकावट पैदा हो गई और इससे देश में विद्युत संकट पैदा हो गया।

5. इस सिद्धांत में स्फीतीकार दबावों की भी उत्पत्ति होती है। कृषि क्षेत्र में वस्तुओं की कमी से उनकी कीमतों में व द्धि होगी। साथ-साथ विभिन्न औद्योगिक उत्पादित वस्तुओं की कमी से इनकी कीमतें भी बढ़ेंगी इनकी वजह से अर्थव्यवस्था पर स्फीतीकारी दबाव बढ़ेंगे। यह सब असंतुलित व द्धि का परिणाम है। अल्पविकसित देशों में कीमतों पर नियन्त्रण रखना कठिन हो जाता है। क्योंकि सरकारें मौद्रिक तथा राजकोषीय तरीकों को प्रभावशाली ढंग से काम में लाने में असफल अथव असमर्थ होती है।

लेकिन इन आलोचनाओं के बावजूद अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में असंतुलित व द्धि सिद्धांत उपयुक्त हैं भारत जैसे देश में अथवा एक अल्पविकसित देश में यह एक नई तकनीक मानी जाने लगी है। एक अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में संसाधनों के अभाव को ध्यान में रखते हुए, असंतुलित व द्धि को ध्यान में रखकर अथवा अपनाते हुए सबसे पहले SOC को विकसित किया जाए जो आगे DPA में निवेश को प्रोत्साहित करेगी तब अर्थव्यवस्था संतुलित व द्धि की तरफ अग्रसर होगी। भारत जैसे अल्पविकसित देशों में जब तक विद्युत, सिंचाई, मानवशक्ति, परिवहन आदि SOC का जब तक विकास नहीं किया जाता। कृषि, वाणिज्य तथा उद्योग का विकास रूक जाता है। वास्तव में रूस का विकास भी इसी प्रकार हुआ था।

अध्याय-10

बड़े धक्के का सिद्धांत

(The Theory of Big Push)

बड़ा धक्का सिद्धांत का मुख्य मंत्र है कि अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में पिछड़ेपन की स्थिति से उभरने के लिए तथा आर्थिक विकास के रास्ते पर चलने के लिए बहुत अधिक मात्रा में निवेश की जरूरत है। बड़ा धक्का सिद्धांत प्रो० पाल० एन० रोजेनस्टीन रोंदान के नाम से संबंधित है। उसने M.I.T. अध्ययन से अपने तर्क पर बल देने के लिए एक साद श्य (Analogy) प्रस्तुत किया है। उसका मत है कि यदि विकास कार्यक्रम को सफल बनाना है तो संसाधनों को एक न्यूनतम स्तर कार्यक्रम में लगाना होगा। किसी देश की व द्धि की आत्मनिर्भरता की अवस्था में लाना ठीक ऐसा ही है जैसा हवाई जहाज को धरती से हवा में उड़ाना। भूमि एक ऐसी क्रांतिक गति होती है, जिसे वायुवाहित बनने के लिए धरती पर ही पार करना पड़ता है।

तीन प्रकार की अविभाज्यताएँ

रोजनस्टीनरोदान के अनुसार अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में तीन तरह की अविभाज्यताओं से बाहर निकलने के लिए बड़ा धक्का सिद्धांत की आवश्यकता है ये तीन अविभाज्यताएँ हैं (1) उत्पादन फलन में अविभाज्यता (2) माँग की अविभाज्यता (3) बचतों की पूर्ति में अविभाज्यता।

1. **उत्पादन फलन में अविभाज्यताएँ (Indivisibilities in Production Function):** रोजनस्टीन रोदान के अनुसार आगतों, प्रक्रिया या निर्गतों की अविभाज्यताओं से बढ़ते प्रतिफल प्राप्त होते हैं। यद्यपि यह एक बड़ी समस्या नही है क्योकि अल्पविकसित देशों में भी विभिन्न उद्योगों में एक निश्चित स्तर स्थापित कर सकते हैं। लेकिन जब यह बात SOC पर आती है तो यह बिल्कुल भिन्न हैं। SOC में निवेश का अभिप्राय: है इन सभी आधारभूत उद्योगों में निवेश जैसे विद्युत, यातायात व संचार जो अप्रत्यक्ष रूप से उत्पादक है और जिनकों पूरा करने की अवधि लम्बी होती है। इनका आयात नहीं हो सकता। इनमें कुछ समय तक अप्रयुक्त क्षमता रहेगी। अल्पविकसत देशों को इसमें 30-40% लगाना पड़ेगा। इसलिए इसमें निवेश DPA से पहले होना चाहिए।

   रोजस्टीनरोदान के अनुसार (SOC) Social Over Head Capital (सामाजिक ऊपरी पूंजी) को चार अविभाज्याताएँ विशिष्टता प्रदान करती हैं प्रथम यह काल में अप्रतिव त्य (Irreversible) होती है, इसलिए यह अन्य अप्रत्यक्ष उत्पादक निवेशों से पहले हो। दूसरे इसमें एक निश्चित न्यूनतम टिकाऊपन होता है। कम टिकाऊपन तकनीकी तौर पर असंभव है इस कारण से इसे गठीला बनाता है। तीसरे इसकी गर्भावधि लम्बी होती है, चौथी एक निश्चित न्यूनतम अह्यस्य उद्योग मिश्रण इस अंत से बाहर निकलने का रास्ता है। इन अविभाज्यताओं की वजह से और इन सामाजिक ऊपरी पूंजी के आयात न होने की वजह (आयात नही हो सकती) से सामाजिक ऊपरी पूंजी में उच्च प्रारम्भिक निवेश किया जाए।

2. **माँग की अविभाज्यता (Indivisibility of Demand):** रोजनस्टीन ने इस संबंध में अपने विचार इस तरह से व्यक्त किए हैं। अल्पविकसित देशों में क्रय शक्ति की कमी व प्रति व्यक्ति आय की कमी से बाजार का आकार छोटा रहता है। उसका तर्क है कि एक अकेला उद्योग उत्पादन के विशिष्ट तरीके अपनाने के बावजूद भी अपनी वस्तुओं के लिए माँग जुटाने में असफल रहता है क्योंकि उसके उत्पादन (निर्गत) के लिए बाजार का छोटा होना है। इसलिए जरूरत है एक साथ विभिन्न उद्योगों की स्थापना करना ताकि इसमें काम करने वाले मजदूर एक दूसरे के उत्पादन के उपभोक्ता बन कर एक दूसरे के उत्पादन को खरीद सकें। इस प्रकार बड़ा धक्का सिद्धांत बाजार का आकार बढ़ाने

के लिए आवश्यक है और इससे कोई भी उत्पादन बगैर बिका नहीं रहेगा। इसके लिए रोजनस्टीन रोदान ने जूता फैक्ट्री का उदाहरण दिया है। यदि इस फैक्ट्री में बेरोजगार श्रमिक लगाए जाए तो इनकी अतिरिक्त आय में व द्धि होगी यदि ये अपनी सारी आय जूतों पर खर्च करते हैं जिनका वे निर्माण करते हैं तो माँग रहेगी और उद्योग सफल होगा। लेकिन वे अपनी सारी आय जूतों पर खर्च नही कर सकते क्योंकि अपनी आय में से उनको और भी आवश्यकताएँ पूरी करनी हैं। इससे माँग नही होगी और उद्योग फेल हो जाएगा।

दूसरा उदाहरण इसी उदाहरण को बदल कर दिया गया है। एक उद्योग स्थापित करने की बजाय सौ फैक्ट्रियाँ को लगाकर उसमें एक हजार मजदूर लगाए जाए जो विविध प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन करते है और उन वस्तुओं की खरीद के लिए अपनी आय खर्च करते हैं। नए उत्पादक एक दूसरे के ग्राहक बनेंगे और अपनी वस्तुओं के लिए बाजार बना लेगें। इसलिए अल्पविकसित देशों में आर्थिक विकास की प्रक्रिया को जारी रखने के लिए विभिन्न उद्योगों में बड़ा धक्का की आवश्यकता है। एक उद्योग या फैक्ट्री इस प्रक्रिया को जारी नही रख सकती।

3. **बचतों की पूर्ति में अविभाज्यता** (Indivisibility in Supply of Savings): विभिन्न उद्योगों में निवेश के उच्च न्यून्तम आकार के लिए बचतों की आवश्कता है। अल्पविकसित देशों में जहाँ आय का स्तर नीचा होता है इसको प्राप्त करना मुश्किल है। इस कठिनाई को पार करने के लिए आवश्यक है कि जब निवेश में व द्धि होने के कारण आय बढ़े, बचत की औसत दर की अपेक्षा बचत की सीमांत दर बहुत ही अधिक हो। परन्तु किसी भी देश में बचत की पिछली औसत दर से बचत की सीमांत दर कभी अधिक नहीं रही।

अविभाज्यता और बाह्य मितव्ययिताएँ
(Indivisibility and External Economies)

बाह्य मितव्ययिताओं को (Pecuniary Economies) भी कहते हैं जो कीमत स्तर से प्रवेश करती है। इसका अभिप्राय उद्योग में उत्पादन की कीमत करके B उद्योग में भेजना जो इसको आगत के रूप या उत्पादन के एक साधन के रूप में प्रयोग करती है। इससे B उद्योग में निवेश बढ़ेगा और B उद्योग में फैलाव भी होगा यह फैलाव A उद्योग के उत्पादन की माँग B उद्योग में बढ़ जाएगी जिससे A उद्योग में लाभ व उत्पादन भी बढ़ेगा।

बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता की अवस्था में केवल एक ही कीमत होने से हर एक व्यक्ति को एक दूसरे व्यक्तिक मितव्ययिता के फैसले के बारे में पता रहता है। यद्यपि, पूर्ण प्रतियोगिता की अवस्था को अल्पविकसित देश प्राप्त नहीं कर पाते और इन देशों की मितव्ययिताएँ एक दूसरे से भिन्न व विकेन्द्रित हैं इसलिए एक कीमत प्रणाली इस अवस्था को नियंत्रण करने में असफल रहती है। यदि यह कुछ करना भी चाहे तो यह केवल यही बता सकती है कि है, नहीं है, यह होगी। अल्पविकसित देशों में कीमतें वर्तमान उत्पादन के साथ तो समन्वय कर सकती हैं। लेकिन वे वर्तमान या भविष्य में होने वाले निवेश के बारे में पूर्ण रूप से बता नहीं पाती। इन सब कारणों से अल्पविकसित देशों में केन्द्रीय निवेश योजना बनानी चाहिए जिससे विभिन्न उद्योगों में एक साथ निवेश हो सके। क्योंकि अल्पविकसित देशों में निवेश बढ़ने से कीमत प्रभावित होती है। इससे Pecuniary बाहरी मितव्ययिताएँ बढ़ेगी जिससे निजी व सामाजिक लाभ में अन्तर बढ़ेगा।

बाहरी अर्थव्यवस्था के विभिन्न उद्योगों की विस्थापक के रूप में आने से बाजार का आकार बढ़ेगा। जो लोग विभिन्न उद्योगों में काम कर रहे हैं वे एक दूसरे के ग्राहक बन जाएँगे। इससे मितव्ययिताओं को पनपने का मौका मिलेगा। दूसरे बाहरी मितव्ययिताओं से कुशल व प्रशिक्षित मजदूरों की संख्या बढ़ेगी जिससे औद्योगिक कार्यक्रम बढ़ाने में बड़ा सहारा मिलेगा। यदि दीर्घकाल में बाहरी मितव्ययिताओं के लिए कुशल श्रमिक न मिले तो (या उपलब्ध न हों तो) यह उद्योग कार्यक्रम के लिए बड़ी रूकावट बन सकती है। एक या दो उद्योगों के स्थापित करने से बाहरी मितव्ययिताएँ नही पनपेंगी और श्रमिकों को प्रशिक्षण लेकर कुशलता प्राप्त करने का मौका नहीं मिलेगा।

राज्य की भूमिका
(Role of State)

बड़ा धक्का सिद्धांत में राज्य की भी अहम् भूमिका है। औद्योगिक कार्यक्रमों में निवेश का स्तर निजी क्षेत्र की पहुँच से बाहर है। निजी निवेशक लाभ अर्जित करने वाली इकाइयों में निवेश करता है और लाभ DPA में निवेश करने पर अधिक प्राप्त होते

हैं। यद्यपि बड़ा धक्का सिद्धांत SOC की महत्ता के बारे में अच्छी तरह जानता है और विद्युत, यातायात, संचार व दूसरे आधारभूत उद्योगों में निवेश करने की भूमिका निभाता है। इन सभी सेवाओं में निवेश Lumply (गठीला) व दीर्घकालीन हैं इसलिए इस क्षेत्र को बनाने का दायित्व भी राज्य द्वारा पूरा किया जाता है। अल्पविकसित देशों में SOC में निवेश करना बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह क्षेत्र काफी पिछड़ा रहता है। ऐसे क्षेत्रों में निवेश करने का खतरा सिर्फ सरकार ही ले सकती है। इसलिए बड़ा धक्का सिद्धांत यह भूमिका राज्य को सोंपती है।

बड़ा धक्का सिद्धांत का समीक्षात्मक मूल्यांकन
(Critical Evaluation of The Big Push Theory)

1. **साधनों की उपलब्धता में कमी** **(The Inadequacy of Resources)**: सबसे बड़ी आलोचना यह है कि अल्पविकसित देशों में साधनों की कमी के कारण ही इस सिद्धांत का फेल होना है एक साथ कई उद्योगों की स्थापना तथा SOC में निवेश जो दीर्घकालीन है अल्प विकसित देश इन समस्याओं के साथ साधनों की कमी से अपने आप को फिट नहीं रख पाते।

2. **कृषि क्षेत्र की उपेक्षा** **(Neglect of Agricultural Sector)**: बड़ा धक्का सिद्धांत औद्योगिकरण तक सीमित है। कृषि का कहीं भी उल्लेख नहीं किया। कृषि प्रधान तथा अतिरेक श्रम वाले क्षेत्रों कृषि को नकार कर आर्थिक विकास संभव नहीं है। यदि इस तरह से तर्क दिया जाए तो यह गलत नहीं होगा कि कृषि क्षेत्र में बड़ा धक्का सिद्धांत की आवश्यकता है। कृषि क्षेत्र में सिंचाई सुविधाएँ, आधुनिक तकनीक का आरम्भ, अच्छे बीज आदि पर भारी निवेश तथा किसानों को जागरूक करके औद्योगिक वस्तुओं को बाजार प्रदान कर इस क्षेत्र को बढ़ाया जा सकता है। यदि कृषि पर ध्यान न दिया जाए तो यह औद्योगिक क्षेत्र के लिए अल्पकाल तथा दीर्घकाल में बड़ी रूकावट बन सकती है। अल्पकाल में भोजन सम्बन्धी वस्तुएँ प्राप्त करने तथा दीर्घाकाल में बाजार का आकार छोटा होने पर नए उद्योग प्रभावित होगें।

3. **स्फीतिकारी दबाव उत्पन्न होते हैं** **(Generate Inflationary Pressure)**: इस सिद्धांत में कृषि को कोई महत्त्व नही दिया गया है, खाद्यान्न की कमी से खाद्यान्न वस्तुओं की कीमतें बढ़ेगी। SOC में निवेश करने से प्रतिफल मिलने में काफी समय लगेगा और माँग में एक दम व द्धि होगी। ऐसी अवस्था पूर्ति में धीरे से तथा माँग में तेजी से व द्धि होने पर कुछ समय बाद और कीमतों में व द्धि होगी। इससे अल्पविकसित क्षेत्रों में गरीबी बढ़ेगी तथा यह भी हो सकता है कि कुछ प्रोजेक्ट बंद करने पड़े।

4. **तकनीकों की महत्त्वता को नकारना** **(Neglect of the Importance of Techniques)**: बड़ा धक्का सिद्धांत तकनीक की बजाय पूंजी निर्माण के बारे में ज्यादा उत्साहित हैं उसका मानना है कि पूंजी निर्माण से अपने आप तकनीक का विकास होगा। लेकिन वर्तमान समय में उत्पादन प्रक्रिया विकास तकनीकों पर ज्यादा निर्भर करती है और प्रत्यक्ष पूंजी निर्माण पर कम निर्भर करती है। यह ऐतिहासिक द ष्टि से भी सही नहीं दिखई देता। यह मात्र वर्तमान समय में उत्पादन बढ़ाने का एक नुस्खा भर है। ऐतिहासिक द ष्टि से देखा जाए तो जब SOC में ज्यादा निवेश किया गया है तो उस देश की अर्थव्यवस्था स्थिर तथा प्रति व्यक्ति आय नीची रही है। दो दशकों से विकसित देशों की प्रगति भी इस बात को साबित नहीं कर पाई है। कोई भी देश अकेले औद्योगिकरण से प्रगति नहीं कर सकता है। जैसा कि बड़ा धक्का सिद्धांत की प्रकृति दर्शाती है।

5. **अविभाज्यताओं पर अधिक जोर** **(Too Much Emphasis on Indivisibilities)**: Celso Furtado ने तर्क देते हुए यह सलाह दी है कि निवेश एक निश्चित स्तर पर प्रभावित होना चाहिए। बड़ा धक्का सिद्धांत ने माँग तथा पूर्ति दोनों पर अविभाज्यता की प्रक्रिया पर होने वाली समस्याओं पर ज्यादा जोर दिया है। लेकिन यह सिद्धांत सामाजिक सुधारों पर ध्यान नहीं देता है यदि कोई अर्थव्यवस्था (स्थिर अर्थव्यवस्था) अपने साधनों तथा प्रलोभन से अपने आप को विकसित करना चाहे। क्योंकि इस तरह की अर्थव्यवस्था में सामाजिक सुधारों का बहुत महत्त्व है। इन सब व्यवस्थाओं के लिए जो एक अर्थव्यवस्था को विकास के पथ पर ले जाती है कोई महत्त्व नहीं दिया है।

6. **मिश्रित अर्थव्यवस्था में कठिनाईयां (Difficulties in Mixed Economy):** बहुत से अल्पविकसित देशों में मिश्रित अर्थव्यवस्था का तरीका अपनाया जाता है। जिनमें दोनों निजी व सार्वजनिक क्षेत्र शामिल है। यदि ये दोनों क्षेत्र एक दूसरे के संस्थापक है तो कोई समस्या नहीं है और यदि इन दोनों में आपस में प्रतिस्पर्धा है तो बड़ा धक्का सिद्धांत को लागू करने में काफी कठिनाइयाँ होगी। इन दोनों के बीच शीत युद्ध शुरू हो जाएगा। सरकारी क्षेत्र अपनी योजनाओं को छुपा कर रखेगें ताकि कोई सट्टा नीति उनकी योजना को खत्म न कर दे। दूसरी तरफ निजी क्षेत्रों में अनिश्चितता की स्थिति उत्पन्न होगी क्योंकि उन्हें डर रहेगा हो सकता है सरकार भविषय में कोई कानून बदल दे या कानून बना दे जिससे निजी क्षेत्र को पनपने में कठिनाई हो। इस प्रकार की अवस्था अथवा असमंजस की स्थिति में बड़ा धक्का सिद्धांत मुश्किल से लागू होगा। Myint ने इस तर्क पर बड़ा धक्का सिद्धांत की आलोचना नही की है बल्कि कहा है कि बड़ा धक्का सिद्धांत पर आधारित औद्योगिकरण कार्यक्रम, विशेष तौर पर अल्पविकसित देशों में लागू करना मुश्किल है तथा इसमें काफी रूकावटों का सामना करना पड़ेगा।

अध्याय-11

क्रांतिक न्यूनतम प्रयत्न सिद्धांत

(Critical Minimum Efforts Thesis)

प्रोफेसर हार्वे लीबन्स्टीन ने इस सिद्धांत द्वारा यह प्रस्तुत किया है कि अल्पविकसित देशों में दरिद्रता का दुश्चक्र पाया जाता है जो प्रति व्यक्ति निम्न आय संतुलन स्थिति के इर्द गिर्द घुमता है। इस समस्या से बाहर निकलने का एक रास्ता है- क्रांतिक न्यून्तम प्रयत्न सिद्धांत। इस सिद्धांत के अनुसार यदि प्रति व्यक्ति आय के उस स्तर को बढ़ा दे जिस पर सतत् विकास कायम रहे। अर्थव्यवस्था के अन्दर (Ups-dowts) ऊपर-नीचे स्थिति में भी इस सिद्धांत की आवश्यकता है। नीचे का अभिप्राय है प्रति व्यक्ति आय का स्तर गिरना तथा ऊपर का अभिप्राय है प्रति व्यक्ति आय का स्तर बढ़ना यदि अर्थव्यवस्था में इस तरह ऊँच-नीच की अवस्था अधिक बढ़ जाती है तब इसको नियंत्रित करने के लिए इस सिद्धांत की आवश्यकता पड़ती है। उस समय क्रान्तिक न्यून्तम सिद्धांत की भूमिका अहम् है। जैसे हम पहले भी बता चुके है यदि प्रति व्यक्ति आय का स्तर इस तरह बढ़ा दिया जिससे अर्थव्यवस्था में सतत् विकास रहे। इसके साथ-साथ अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में यदि संतुलन की स्थिति बिगड़ जाती है, जो तत्त्व प्रति व्यक्ति आय को बढ़ाने में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं वे प्रति व्यक्ति आय को कम करने में भी एक जैसी प्रक्रिया रखते हैं। यदि आय कम होने की प्रक्रिया आय बढ़ने की प्रक्रिया से नीची रहे तो इसका अभिप्राय है क्रान्तिक न्यून्तम सिद्धांत काम कर रहा है। इस सिद्धांत में इसी बात पर जोर दिया गया है कि पिछड़ेपन की स्थिति (सतत् प्रक्रिया) ज्यादा विकसित सतत् प्रक्रिया की तरफ बढ़ना जहाँ हम सतत् व द्धि की आशा करते हैं जो कि अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक है लेकिन यह सम्पूर्ण अवस्था नही है क्योंकि अर्थव्यवस्था में प्रोत्साहित व द्धि होनी चाहिए जो क्रान्तिक न्यून्तम आकार से ज्यादा हो।

अल्पविकसित देश और क्रांन्तिक न्यून्तम सिद्धांत
(Underdeveloped Countries and Critical Minimum Effect)

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में यदि उपभोग वर्तमान उत्पादन से कम है तो साधनों की बढ़ोत्तरी से उत्पादन करने की क्षमता व द्धि होगी अथवा अर्थव्यवस्था में उत्पादन क्षमता बढ़ेगी। इससे उत्पादन में बढ़ोतरी होने से आय में व द्धि होगी। यद्यपि आय में व द्धि होने से जनंसख्या मे व द्धि तथा श्रम शक्ति में भी बढ़ोतरी होगी यह दो कारणों से बढ़ेगी (1) आय में व द्धि से उपभोग में व द्धि तथा म त्यु दर में कमी (2) कुछ अचानक बदलाव हो सकते हैं जिससे ज्ञान व द्धि, जन संसाधन या अन्य स्वास्थ्य व द्धि से म त्यु दर में कमी।

किसी भी सूरत में म त्यु दर कम होने से जनसंख्या का आकार बढ़ता है। प्रतिफल घटने के साथ-साथ श्रम में व द्धि तथा प्रति व्यक्ति आय भी गिरेगी। प्रति व्यक्ति आय तब तक गिरती रहेगी जब तक यह निर्वाह संतुलन स्तर तक न पहुँचे इस अवस्था को दर्शाने के लिए लिबन्स्टन ने चित्र 1 में इसका वर्णन किया है।

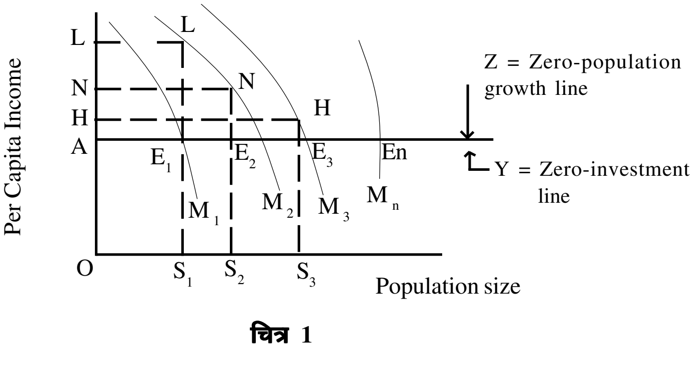

चित्र 1

इस चित्र में हम यह मान कर चलते हैं कि उत्पादन दो तत्त्वों पर निर्भर करता है-साधन व जनसंख्या आकार। जनसंख्या के आधार पर उत्पादन पर घटते प्रतिफल का नियम लागू होता है। जनसंख्या व द्धि तथा कुल निवेश की दर प्रति व्यक्ति आय के फलन हैं। A_1, E_1, E_2,...........En से खिंची गई रेखा जो (x axis)के समानान्तर है इस पर जनसंख्या व द्धि तथा निवेश दोनों शून्य है। चित्र में शुन्य जनसंख्या व द्धि रेखा प्रति व्यक्ति आय स्तर OA के साथ गुजरती है। यहाँ पर जनसंख्या व द्धि घनात्मक होगी। OA स्तर से नीचे जनसंख्या व द्धि ऋणात्मक होगी। OA प्रति व्यक्ति आय स्तर पर निवेश भी शून्य है। इसका अभिप्राय है प्रति व्यक्ति आय के स्तर पर पूंजीगत वस्तुएँ जो उत्पादित की जाती है पूंजी को परिवर्तित करने के लिए सम्पूर्ण है y रेखा से नीचे निवेश ऋणात्मक है तथा y रेखा से ऊपर निवेश धनात्मक है।

M_1 वक्र बताता है कि प्रति व्यक्ति उत्पादन साधनों की उपलब्धता तथा जनसंख्या आकार पर निर्भर करता है। E_1 प्रारम्भिक संतुलन बिन्दु है। यह मान लेते है कि प्रभावी निवेश साधनों को M_2 तक बढ़ा देता है, नई प्रति व्यक्ति आय जनसंख्या के साथ (OS_1 के साथ OL (LS_1) है। यदि इस बढ़ी हुई प्रति व्यक्ति आय से जनसंख्या में व द्धि होगी। परिणाम स्वरूप यदि जनसंख्या OS_2 तक बढ़ती है तो प्रति व्यक्ति आय OL से गिरकर ON पर पहुँच जाएगी। यदि आगे निवेश M_3 तक बढ़ता है तो जनसंख्या मे ओर व द्धि होगी और प्रति व्यक्ति आय OH तक गिरने से दोबारा अर्थव्यवस्था अपने पहले स्तर (अथवा पुरानी प्रति व्यक्ति आय स्तर OA पर वापिस आ जाएगी)। यह इस बात को प्रमाणित करता है कि बढ़ी हुई प्रति व्यक्ति आय से जनसंख्या में व द्धि होगी और इस व द्धि से अर्थव्यवस्था अपने पुराने संतुलन स्तर पर वापिस आ जाएगी (धकेलेगी)। इसलिए जनसंख्या व द्धि आय घटाने का कारण अथवा आय को कम करने का कारण बन जाती है। इसलिए यह चित्र इस बात की व्याख्या करता है कि जनसंख्या व द्धि आय को कम करने का एक बड़ा कारण है।

ऊपर वर्णित तथ्य केवल जनसंख्या व द्धि तथा निवेश के बीच में संबंध को प्रदर्शित करते हैं। अब हम यह मान कर सोचते हैं यदि शुन्य निवेश रेखा y शुन्य जनसंख्या व द्धि 2 से ऊपर जो चित्र (दो) में दिखाया गया है। इस चित्र में रेखा RR न्यून्तम आय रेखा को बताती है जो निर्वाह संव द्धि से ऊपर है। इसका अभिप्राय यदि आय कैसे भी OR से ऊपर पहुँचती है तो निर्वाह आय

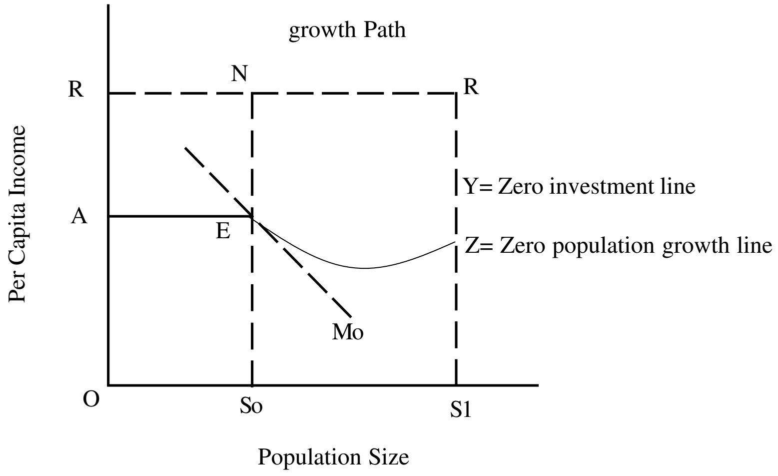

चित्र 2

में व द्धि होगी। पहली संतुलन स्थिति E बिन्दु पर है जहाँ जनसंख्या आकार O50 और प्रति व्यक्ति आय स्तर OA है। यह भी देखा जा सकता है कि यदि इसको औद्योगिक निवेश से बदल दिया जाए जो EYZ को दर्शाता है या इस क्षेत्र के अन्दर (EYRN) जो वापिस E संतुलन बिन्दु पर आने की अवस्था पैदा करता है। यदि पहली संतुलन स्थिति EYZ के बीच में है तो दोनों अनिवेश तथा जनसंख्या व द्धि घटती प्रति व्यक्ति आय की तरफ बढ़ेगें। अथवा प्रति व्यक्ति आय कम होगी। प्रति व्यक्ति आय E_2 रेखा से भी नीचे गिरनी चाहिए। E_2 से नीचे जनसंख्या में भी कमी होगी और तब तक अनिवेश होगा जब तक यह E पर वापिस न आ जाए। E बिन्दु पर निवेश, अनिवेश, जनसंख्या व द्धि या जनसंख्या कमी इत्यादि नहीं है। यदि प्रारम्भिक असंतुलन इस क्षेत्र EYNR के बीच है तो E बिन्दु पर कुछ प्रतिफल प्राप्त होगें तथा यह वापिस E पर पहुँचेगा। यह इसलिए क्योंकि इस बिन्दु

अध्याय-12
निम्न संतुलन पाश सिद्धांत
(The Low-level Equilibrium Trap)

रिचर्ड आर० नेलसन ने 1956 में निम्न संतुलन पाश सिद्धांत का प्रतिपादन किया। लिबंस्टन के क्रांन्तिक न्यून्तम प्रयत्न सिद्धान्त की तरह नेलसन का निम्न संतुलन पाश सिद्धांत भी माल्थस की विचारधारा पर आधारित है कि किसी देश की प्रति व्यक्ति आय के न्यूनतम जीवन निर्वाह स्तर से बढ़ जाने पर जनसंख्या में व द्धि होती है। इस न्यूनतम निर्वाह स्तर या निम्न सतत् संतुलन स्तर पर दोनों निवेश व बचत की दर भी कम होती है। इसलिए बढ़ी हुई जनसंख्या वापिस दोबारा बढ़ी हुई प्रति व्यक्ति आय को कम करके न्यूनतम निर्वाह स्तर पर ला देती है। इसलिए अर्थव्यवस्था निम्न संतुलन पाश सिद्धांत की पकड़ में आ जाती है। इस सिद्धांत से बाहर निकलने के लिए जनसंख्या में व द्धि दर की अपेक्षा निवेश दर में अधिक व द्धि करने की आवश्यकता है। नैल्सन की राय में चार ऐसी स्थिति है जो पाश करने में सहायक होती हैं। (1) प्रति व्यक्ति के आय स्तर तथा जनसंख्या व द्धि दर में ऊँचा सहसंबंध। (2) अतिरिक्त प्रति व्यक्ति आय में व द्धि करने के लिए प्रति व्यक्ति निवेश में लगाने की न्यून प्रव त्ति (3) Uncultivated arable land (अकृषि योग्य कृष्य भूमि) की कमी (दुर्लभता), (4) उत्पादन के Insufficient (अदक्ष) तरीके। नेलसन ने इस मॉडल को तीन सैटों (equations) के साथ प्रयोग किया है। (1) आय को निर्धारित करने वाला सैट, आय पूंजी संचय, जनसंख्या का आकार तथा तकनीकी स्तर पर निर्भर करती है। (2) शुद्ध निवेश पूंजी का अभिप्राय है (अथवा इसमें शामिल है)। पूंजी स्टॉक में बढ़ोतरी से हुई बचतें अथवा बचतों से निर्मित पूंजी कृषिगत भूमि का मात्रा में नई भूमि बढ़ोतरी। (3) यदि प्रति व्यक्ति आय कम है तो म त्यु दर में परिवर्तनों के कारण जनसंख्या व द्धि की दर में अल्पकालीन परिवर्तन होते है, प्रति व्यक्ति आय में परिवर्तन के कारण म त्यु दर में परिवर्तन होते है। यदि एकबार प्रति व्यक्ति आय जीवन निर्वाह जरूरतों से ऊपर पहुँच जाती है तो आगे प्रति व्यक्ति आय बढ़ने से म त्यु दर पर इसका प्रभाव न के बराबर होता है।

इन तीनों सैटों के संबंध से दिखाई देता है कि अल्पविकसित देश न्यून्तम पाश सिद्धांत की गिरफ्त में रहते है। जिसको रेखा-चित्र 1 में प्रस्तुत किया गया है। चित्र में (तीनों चित्रों (a), (b), (c) अक्ष axis पर प्रति व्यक्ति आय ली गई है। प्रतिव्यक्ति आय का अभिप्राय है जनसंख्या से राष्ट्रीय आय को भाग दिया गया है अथवा $\frac{\text{राष्ट्रीय आय}}{\text{जनसंख्या}}$ = y/p . y axis पर (a) चित्र में जनसंख्या में व द्धि दर (b) दर में प्रति व्यक्ति निवेश में व द्धि तथा (c) चित्र में जनसंख्या की व द्धि पर तथा कुल आय चित्र 1 में (a) क्षैतिज अक्ष s बिन्दु पर प्रति व्यक्ति आय का न्यूनतम जीवन स्तर निर्वाह स्तर है इस बिन्दु के बाई तरफ (प्रति व्यक्ति आय न्यूनतम निर्वाह स्तर से कम) जनसंख्या घट रही है। जब प्रति व्यक्ति आय न्यूनतम जीवन निर्वाह स्तर से ज्यादा (जो S के दाई तरफ स्थित है) होने पर जनसंख्या भी बढ़ती है जब तक यह एक उच्च भौतिक सीमा तक न पहुँच जाए (K बिन्दु पर दिखाई गई है।)

जनसंख्या व द्धि ऊपरी भौतिक सीमा K बिन्दु तक बढ़ेगी उसके बाद यह कम अथवा गिरनी शुरू होगी। यह इसलिए गिरनी शुरू हो जाती है क्योंकि ऊँचे प्रति व्यक्ति आय स्तर पर लोग अपने जीवन स्तर को ऊँचा रखने के लिए जागरूक होंगे और छोटा परिवार प्रणाली को अपनाएंगें।

PP^1 वक्र विभिन्न आय स्तर पर जनसंख्या व द्धि मार्ग को दर्शाता है।

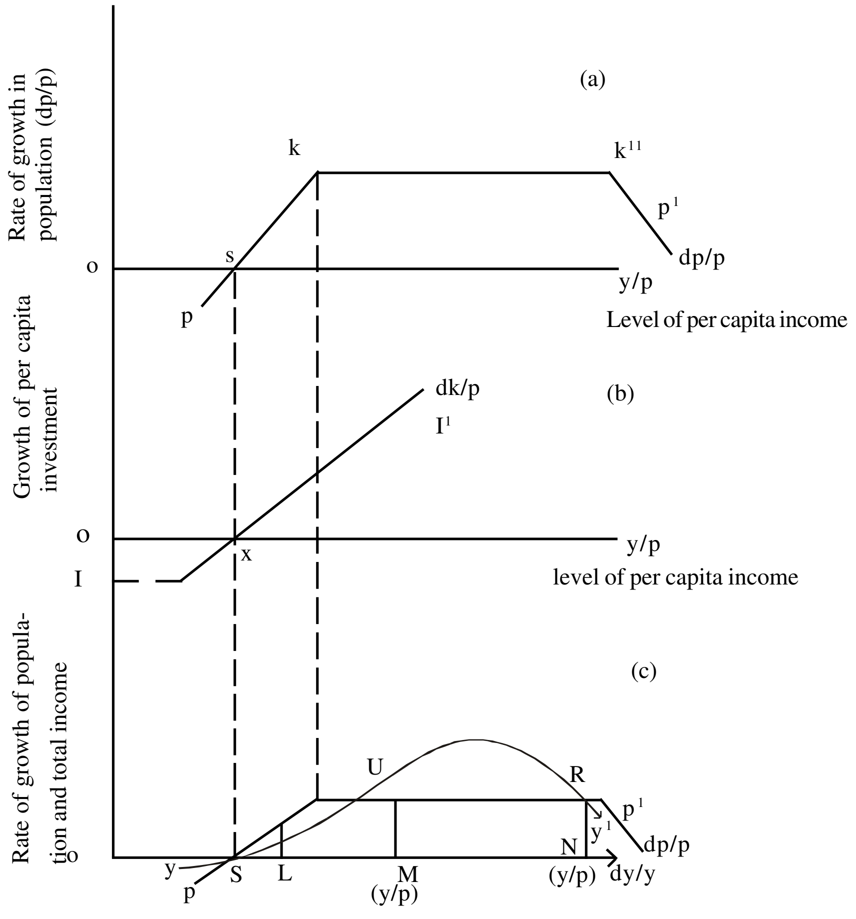

चित्र 1

चित्र (b) में X बिन्दु शून्य बचत आय के स्तर को दर्शाता है। इसका मतलब सब आय उपभोग पर खर्च, यहाँ पर निवेश भी शून्य है क्योंकि बचत शून्य है (अर्थात् यह वह स्थिति है जहाँ उपभोग आय से ज्यादा है, लोग मूल पूंजी पर निर्वाह करते हैं यद्यपि यदि हम X बिन्दु की दाई तरफ बढ़ते है। तो प्रति व्यक्ति आय शून्य बचत दर से बढ़ती है। इसलिए निवेश वक्र II[1] बढ़कर अपनी अपनी सीमा प्राप्त करेगा लेकिन इसकी ऊपरी सीमा नहीं होती है। यदि हम X बिन्दु के ऊपर दाई तरफ बढ़ते है तो बढ़ी हुई कुल आय का हिस्सा बचाकर निवेश में परिवर्तित होगा। (k बिन्दु के पीछे की स्थिति)

साधारण तौर पर यह मान कर चलते हैं कि प्रति व्यक्ति आय का न्यूनतम निर्वाह स्तर S प्रति व्यक्ति आय के शून्य बचत स्तर X के बराबर है जो चित्र (c) में दिखाया है। (यह आवश्यक नहीं है दोनों बिन्दु एक दूसरे से टकराए) चित्र में S बिन्दु निम्न संतुलन स्तर को दिखाता है। यह शून्य व द्धि दर पर जनसंख्या व द्धि वक्र PP[1] और आय व द्धि वक्र YY[1] एक दूसरे को काटते हैं।

निम्न (न्यून) संतुलन स्तर से आरम्भ करते हुए प्रति व्यक्ति आय (SL) में निम्न बढ़ोतरी स्थिर रखने में सक्षम नहीं है। अथवा प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोतरी करने के इसका अभिप्राय है (SL) बिन्दु पर प्रति व्यक्ति आय स्वयं स्थिर या बढ़ नहीं पाती। इसका कारण है L बिन्दु पर जनसंख्या व द्धि दर कुल आय में व द्धि दर से ज्यादा। प्रति व्यक्ति आय अपने आप न्यूनतम संतुलन स्तर OS पर वापिस गिर जाएगी। यह स्थिति M बिन्दु के बाई तरफ के सभी बिन्दुओं पर होगी, जहाँ पर कुल आय में व द्धि की अपेक्षा जनसंख्या व द्धि ज्यादा है। यदि प्रति व्यक्ति आय में लगातार उछाल न होने पर यदि SM बिन्दु से ज्यादा उछाल लाती है तो वह अर्थव्यवस्था न्यूनतम पाश सिद्धान्त से बाहर निकल सकती है क्योंकि वहाँ पर कुल आय में व द्धि दर जनसंख्या व द्धि दर से ज्यादा है। यदि UM (जनसंख्या रूकावट) 3 प्रतिशत है, नेलसन का सिद्धांत इस बात की वकालत करता है कि यदि देश निम्न संतुलन पाश से बाहर निकालना (इस बैरियर को तोड़ना) चाहती है तो कुल आय में व द्धि दर 3 प्रतिशत प्रति वर्ष से ज्यादा होनी चाहिए। यह केवल तभी संभव है जब लिबंस्टन का न्यूनतम सिद्धांत जो प्रति व्यक्ति आय के स्तर को SM से ज्यादा धकेले (बढ़ाए)। इसलिए लिंबस्टन तथा नेलसन के सिद्धांत में समानता है।

समीक्षात्मक मूल्यांकन
(A Critical Appraisal)

आर्थिक क्षेत्र में निम्न संतुलन पाश सिद्धांत और गरीबी का दुष्चक्र आर्थिक क्षेत्र में काफी महत्त्व रखते हैं। और इन अवस्थाओं से बाहर निकलने के लिए 'बड़ा धक्का सिद्धांत', 'क्रांन्तिक न्यून्तम सिद्धांत' इत्यादि का काफी महत्त्व है। लिबंस्टन का कहना है यदि अल्पविकसित अर्थव्यवस्थाएँ निम्न संतुलन स्तर से बाहर निकलना चाहती है तो उन्हें निवेश कार्यक्रम इस तरह से संचालित करने चाहिए जिससे प्रति व्यक्ति आय जनसंख्या अवरूध को तोड़ सके। यद्यपि एच० मिन्ट ने अल्पविकसित देशों में इस सिद्धांत को लागू करने में दो महत्त्वपूर्ण कठिनाईयां बताई हैं।

1. यह हमेंशा संभव नहीं है कि प्रति व्यक्ति आय स्तर और जनसंख्या की व द्धि दर व कुल आय की व द्धि दर के बीच संकुचित फलन संबंध बनाया जाए। अधिकतर अल्पविकसित देशों में जनसंख्या व द्धि दर अथवा म त्यु दर कम होने का कारण हैं सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार, भूकम्प, महामारी पर नियंत्रण जिसका प्रति व्यक्ति आय व द्धि से संबंध नहीं है।

2. प्रति व्यक्ति आय स्तर और कुल आय में व द्धि दर के बीच क्रियात्मक संबंध भी स्पष्ट नहीं है। प्रति व्यक्ति आय स्तर और बचत व निवेश की दर में संबंध विभिन्न कारणों पर निर्भर करता है जैसे आय वितरण का तरीका वित्तिय संस्थाओं की बचतों को आकर्षित करने के लिए प्रभावी कदम। निवेश व उससे होने वाले उत्पादन के बीच उत्पन्न संबंध को भी सतत् पूंजी-उत्पान रेस्सो (Ratio) से भी नहीं दिखा सकते अथवा आँक नहीं सकते, यह निर्भर करता है कि कैसे उत्पादन संगठनों में सुधार हो सकता है और कैसे 3 प्रतिशत जनसंख्या व द्धि के पश्चात् धटते प्रतिफल को रोकना ये सभी बातें प्रतिव्यक्ति आय या जनसंख्या व द्धि में होने वाले बढ़ोतरी तथा दोनो के घनात्मक संबंध को आंक सकती है।

3. चित्र (c) में जो समय तत्व दिखाया गया है उससे भी असंमजय दिखाई देते हैं। मिन्ट का तर्क हैं कि आय तथा जनसंख्या व द्धि में समयरहित क्रियात्मक सम्बंध नहीं होना चाहिए, बल्कि समय प्रक्रिया के साथ हो। चित्र 1 (c) में दो चक्रों को काटते दिखाया है जो S और R बिन्दु पर काटते हैं। ये दोनों बिन्दु सतत् तथ असतत् सन्तुलन प्रकट करते हे। यह प्रक्रिया व्यापार चक्र सिद्धांत के तहत् विकसित देशों में होने वाली लधु-आर्थिक क्रियाओं को दर्शाती है। इसलिए लधु आर्थिक क्रियाओं को हम केवल बहुत अधिक विकसित देशों में ही लागू कर सकते हैं। अल्पविकसित देशों में इस तरह की प्रक्रिया दीर्घकाल में संभव है अथवा लाभदायक होती है।

   मिन्ट ने इस पर महत्त्वपूर्ण तर्क दिए हैं। (1) प्रति व्यक्ति आय में S से L से थोड़ी व द्धि वापिस S संतुलन बिन्दु पर आएगी यदि वक्र को समयरहित और उल्टे संबंध में दिखाया जाए। यदि S से L तक जाने में समय तत्त्व लिया जाए तो यह स्थापन्न स्थिर अथवा पक्का होगा। यह पहले की तरह की स्थिति नहीं है और एक बार अर्थव्यवस्था L पर पहुँचती है तो यह S पर वापिस नहीं आएगी। एक बार यदि इस तरह के प्रभाव दिखाई देते हैं दीर्घकालीन क्रांन्तिम न्यून्तम प्रयत्न कमजोर होगें। दूसरे नेलसन का सिद्धांत इस तर्क को भी वर्णित करने में असफल रहा है कि जनसंख्या में 3 प्रतिशत की व द्धि कितने लम्बे समय तक जारी रहेगी। क्योंकि यदि अर्थव्यवस्था में बचत व निवेश का अनुपात 10 व 12 प्रतिशत है अथवा इससे ऊपर है तो कुल आय में 3 प्रतिशत से ऊपर की व द्धि संभव हो सकती है।

अध्याय-13

जोन रॉबिन्सन का आर्थिक व द्धि सिद्धांत

(Joan Robinson's Model of Economic Growth)

श्रीमति जोन रॉबिन्सन ने अपनी पुस्तक "The Accumulation of Capital" में 1956 में इस सिद्धांत का वर्णन किया है। इस पुस्तक में पूंजीवादी नियमों पर आधारित आर्थिक व द्धि को सरल ढंग से प्रस्तुत किया है। इस मॉडल का गणितज्ञ विभाग अथवा कार्य मूल रूप से कुरिहारा के काम से लिया गया है। मॉडल की विशेषताएँ (Assumptions of the Model) यह निम्नलिखित विशेषताओं पर आधारित है।

1. अर्थव्यवस्था बंद अर्थव्यवस्था है। आर्थिक क्रियाओं में सरकार की कोई भूमिका नहीं।
2. उत्पादन करने वाले दो साधन है। पूंजी व श्रम और सारा उत्पादन उद्यमी तथा मजदूरी करने वालों के बीच वितरित किया गया है।
3. श्रमिकों का अपनी सारी मजदूरी आय उपभोग पर खर्च करना, लाभ अर्जित करने वाले सभी लाभ तथा अपनी बचत को निवेश करते हैं।
4. दिए हुए उत्पादन को उत्पादित करने के लिए पूंजी व श्रम निश्चित अनुपात में लगाना, बाद में वास्तविकता को देखते हुए रॉबिन्सन ने बाद में इस अनुपात में छूट दी।
5. कीमत स्तर में परिवर्तन नहीं होता।
6. तकनीकी प्रगति तटस्थ।

मॉडल का ढाँचा
(The Structure of Model)

राष्ट्रीय आय के वितरण को उद्यमी तथा श्रमिक के बीच इस प्रकार व्यक्त किया है।

$$PY = WN + \cap\ PK\ 1 \qquad \text{(i)}$$

जहाँ Y= राष्ट्रीय उत्पादन, N=लगाए गए श्रमिकों की संख्या, K=पूँजी यन्त्रों की (प्रयोग मे लाए गए) संख्या, P=उत्पादन की औसत कीमत व पूंजी यंत्रों की औसत कीमत, W= वास्तविक मजदूरी $\cap$ = सकल लाभ दर (जिसमें ब्याज दर भी शामिल है) दोनों तरफ से equation को भाग (विभाजित) करके (औसत कीमत सूचकांक P से विभाजित किया गया है) वास्तविक वितरण स्थिति प्राप्त कर सकते है।

$$Y = \frac{w}{p} N + \cap\ K \qquad (2)$$

इससे लाभ को निम्नलिखित से प्राप्त कर सकते हैं।

$$\Pi = \frac{Y - \frac{W}{P}.N}{K}$$

$$=\frac{\frac{Y}{N}-\frac{W}{P}}{K/N}$$

ऊपर दिए गए समीकरण में यदि Y/N=e तथा $K/N = \theta$ (थीटा को मानने से तथा इसको प्रस्थापित करने से निम्न प्राप्त करते हैं।

(3)

यह समीकरण बताता है कि लाभ दर श्रम उत्पादकता के तकनीकी संबंध (e), वास्तविक मजदूरी दर (w/p) और पूंजी श्रम अनुपात (θ)। दूसरे शब्दों में लाभ दर को सीधी तौर पर पूंजी पर कुल प्रतिफल की दर पर निर्भर (e – w/p) और उल्टे तौर पर पूंजी सक्षमता की दर ( ) पर निर्भर है। यदि आय स्थिर है तो मजदूरी दर कम होगी अथवा आय दर बढ़ती है तो मजदूरी दर स्थिर होगी जिससे लाभ दर (P) बढ़ेगी। लाभ दर तब भी बढ़ सकती है जबकि पूंजी श्रम अनुपात ( ) गिर जाए। इस तरह उद्यमी अपने लाभों को अधिकतम करते हैं।

विभिन्न गणना में अधिकतम की पहली शर्त है कि First Derivative शून्य होना चाहिए। वर्तमान स्थिति में उद्यमी अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकता है जब उत्पादन फलन

(4)

से संबंधित हो

Y=F(N,K) (5)

अब हम व्यय स्थिति को भी देखते है। राष्ट्रीय आय के व्यय पक्ष में राष्ट्रीय आय उपभोग व्यय जमा निवेश व्यय के बराबर रहती है, सन्तुलन की

Y=C+I : S=I (6)

अवस्था में S=I (बचत = निवेश)

मान्यता 3 के तहत मजदूरी कमाने वाले उपभोग तथा बचत उद्यमी के लाभ से प्राप्त होती है, इसको इस प्रकार दिखाया गया है।

$$C = C_n = \frac{W}{P}.N \qquad (7)$$

$$S = S_k = \cap\ k \qquad (8)$$

C_n = मजदूरी आय से उपभोग

S_k = लाभ आय से बचत

समीकरण (6) मे कुल निवेश का अभिप्राय है वास्तविक पूंजी में व द्धि

$$I = \Delta K \qquad (9)$$

S तथा I की कीमत को (8) तथा (9) से (6) में प्रस्थापना करते हुए हम प्राप्त करते हैं।

(10)

समीकरण (10) को दोनों तरफ से K द्वारा विभाजित करते हुए हम प्राप्त करते हैं।

$$\frac{DK}{K} = \frac{\cap K}{K} = \cap$$

Π **की कीमत को समीकरण (3) से प्रस्थापित करके हम प्राप्त करते हैं।**

$$\frac{DK}{K} = \cap = \frac{l - w/p}{\theta} \qquad (11)$$

$$\frac{\Delta K}{K} = \text{पूंजी में व द्धि दर}$$

L–w/p = पूंजी का कुल प्रतिफल और θ पूंजी श्रम अनुपात, समीकरण (11) बताते है। कि पूंजी की व द्धि दर तभी संभव है तब पूंजी के कुल प्रतिफल श्रम पूंजी अनुपात की अपेक्षा ज्यादा हों। रिकार्डो के अनुसार जब तकनीकी में तटस्था रहे (L and सतत् रहे) वास्तविक मजदूरी गिरने से पूंजी प्रक्रिया बढ़ेगी और वास्तविक मजदूरी दर को कमजोर करेगी। जोन रॉबिन्सन ने रिकार्डो की तरह इस मत को वर्णित किया है। रॉबिन्सन के विचार की सबसे महत्त्वपूर्ण बात है-पूंजी की व द्धि दर लाभ दर ( ) पर निर्भर करती है तथा इसी से निर्धारित होती है।

स्वर्ण युग
(The Golden Age)

जोन रॉबिन्सन के अनुसार स्वर्ण युग का अभिप्राय है श्रम का पूर्ण रोजगार तथा पूंजी का पूर्ण प्रयोग। दूसरे शब्दों में जब तकनीकी तटस्थ है और उत्पादन के काल ढाँचे मे परिवर्तन के बिना अर्थव्यवस्था धीरे-धीरे बढ़ रही हो। प्रयोगिता मूल मंत्र स्वतंत्र रूप से कार्य कर रहे हों, जनसंख्या स्थिर अनुपात से बढ़ रही हो और समस्त उपलब्ध श्रम के लिए उत्पादन क्षमता की पूर्ति करने के लिए पूंजी प्रक्रिया तेजी से बढ़ रही हो तो लाभों की दर स्थिर होती है, और प्रति व्यक्ति उत्पादन के साथ वास्तविक मजदूरी स्तर बढ़ रहा हो तब अर्थव्यवस्था में अन्तर्विरोध नहीं रहते हैं। कुल उत्पादन (वार्षिक) तथा पूंजी संचय एक साथ बढ़ते है। श्रम शक्तियों की व द्धि दर तथा प्रति व्यक्ति उत्पादन व द्धि दर की चक्रव द्धि स्थिर अनुपातिक दर से कुल उत्पादन तथा पूंजी संचय में एक साथ व द्धि होती है। इसी अवस्था को स्वर्ण युग का नाम दिया है।

आर० हैरोड के शब्दों में स्वर्ण युग वह है जहाँ प्राकृतिक, अभिण्ट (Warranty) तथा राष्ट्रीय आय की वास्तविक व द्धि दर एक दूसर के बराबर हैं। यदि अर्थव्यवस्था स्वर्ण युग के मार्ग से हट जाए तो कुछ ताकतें पुनः संतुलन स्थिति लाने का प्रयत्न करती है। मान लीजिए जनसंख्या व द्धि दर पूंजी व द्धि दर से ज्यादा है।

$$\frac{\Delta N}{N} > \frac{\Delta K}{K}$$

यह अवस्था अधिक अल्प रोजगार लाती है। यह अवस्था अधिकतर अल्पविकसित देशों में पाई जाती है। सतत् (तटस्थ) तकनीक होते हुए अधिक श्रम मुद्रा मजदूरी (w) घटा देगी और यदि कीमत स्तर (p) स्थिर रहे तो वास्तविक मजदूरी (w/p)को कम कर देगी। यदि ऐसी अवस्था है तो लाभ दर बढ़ेगी और पूंजी की व द्धि दर को जनसंख्या स्तर तक बढ़ा देगी। ऐसी अवस्था में पूंजी की व द्धि दर बढ़ेगी ताकि बढ़ी हुई (सतत्) जनसंख्या के बीच संतुलन स्थापित कर सके अथवा उसको सतत् अवस्था में ला सके $\Delta K/K = \Delta N/N$ । यद्यपि, वास्तविक मजदूरी आगे न गिरे क्योंकि मौद्रिक मजदूरी rigid हो जाए या कीमत स्तर या मौद्रिक मजदूरी में समान रूप से गिरावट हो, संतुलन पुनः स्थापित नहीं हो सकेगा और अल्प रोजगार कायम रहेगा।

दूसरी अवस्था $\frac{\Delta K}{K} > \frac{\Delta K}{N}$ में जनसंख्या व द्धि की अपेक्षा पूंजी प्रक्रिया अधिक तेजी से बढ़े। यह अवस्था विकसित देशों में देखने को मिलती है। इसमें स्वर्ण युग अवस्था में वापिस आने की संभावना रहती है। क्योंकि यदि वास्तविक मजदूरी दर rigid है, श्रम उत्पादकता में परिवर्तन (l) या श्रम पूंजी अनुपात (θ) लाभ की दर बढ़ाने की क्षमता तथा इससे पूंजी की व द्धि दर बढ़े जो समीकरण (11) में दिखाया गया है। कुरिहारा के अनुसार यह वह स्थिति है जहाँ जे० रॉबिन्सन का मॉडल अपने आधार

से परे है। और रिकार्डो की बजाय शुम्पीटर की तरह दिखाई देता है। यदि हम उत्पादन फलन जो समीकरण (5) में दिया गया है उसकी तरफ ध्यान दे तो हम देख सकते हैं कि यदि यह ऊपर की तरफ चला जाए मतलब यदि श्रम उत्पादकता (Y/N=l), समान श्रम-पूंजी अनुपात (K/N=) पर बढ़े या यदि आखिरी अनुपात पहले की बराबर कीमत पर कम हो जाए।

अब हम अपना ध्यान समीकरण (11) की तरफ करते है। इसमें कहा गया है कि यदि श्रम उत्पादकता (e), वास्तविक मजदूरीदर (w/p) से अधिक तेजी से बढ़े और ( ) तटस्थ रहे तो पूंजी व द्धि दर बढ़ेगी। फिर भी यदि w/p और l में कोई परिवर्तन न हो और केवल श्रम-पूंजी अनुपात ( ) गिरेगी, पूंजी व द्धि दोबारा बढ़ सकती है। यह समस्या केवल तब उत्पन्न होगी जब दी हुई वास्तविक मजदूरी दर (w/p) पर श्रम उत्पादकता (l) में अनुपातिक कमी श्रम-पूंजी अनुपात ( ) से कम हो अथवा ( ) से ज्यादा गिरावट हो तो ऐसी अवस्था में पूंजी की व द्धि पर बढ़ने की बजाय कम होगी।

रॉबिन्सन मॉडल तथा हैरोड डोमार मॉडल में संबंध (Relationship between Robinson's Model and Harrod Domar Model

समीकरण (2) को लेते हुए और समीकरण (3) को दोबारा बनाते हुए इस प्रकार लिख सकते हैं।

(13)

राष्ट्रीय आय में लाभ का हिस्सा इस प्रकार है

$$\frac{Y - \frac{W}{P}N}{Y}$$ जबकि Y/K = पूंजी

उत्पादकता इसलिए लाभ दर पूंजी उत्पादकता का उत्पादन है (जो डोमार के मॉडल मे σ इस चिन्ह से दर्शाया गया है) ओर राष्ट्रीय आय में लाभ हिस्सा

θ

देखें (समीकरण 8)

∩

इसलिए $$\frac{Y - \frac{W}{P}N}{Y} = \frac{\cap K}{Y} = \frac{S}{Y} = S$$

जो डोमार मे इस तरह दिया गया है

$$\frac{\Delta K}{K} = \cap = \sigma S$$

$b = {}^{I}\!/_{\sigma}$, जो हम Harrod समीकरण में देखते हैं

$$\frac{\Delta K}{K} = \cap = \frac{S}{b} \qquad (14)$$

श्रीमति जोन रॉबिन्सन ने हैरोड डोमार की तरह बराबर परिणाम दिए हैं। यद्यपि दोनों में महत्त्वपूर्ण अन्तर है। रॉबिन्सन में पूंजी प्रक्रिया लाभ मजदूरी दर पर ($\cap$ और W/P) पर निर्भर करती है, साथ में श्रम उत्पादकता (l) पर भी निर्भर करती है जिससे उसका सिद्धांत वास्तविक मार्केट अर्थव्यवस्था के नजदीक दिखाई देता है। इसके विपरीत हैरोड ने केन्जियन व्यवस्था को अपनाते हुए कहा है पूंजी प्रक्रिया बचत अनुपात (राष्ट्रीय आय से संबंधित है न कि अकेले लाभ आय से) और पूंजी उत्पादकता पर निर्भर करती है जो पूंजीवादी तथा समाजवादी दोनों अर्थव्यवस्थाओं में है। दूसरा अंतर है हैरोड डोमार ने पूंजी प्रक्रिया को पूंजी के साथ जोड़ा है जबकि रॉबिन्सन का सिद्धांत श्रम से जुड़ा हुआ है।

जोन रॉबिन्सन ने कहा है कि कोई भी पूंजीवादी जब तक श्रम की कीमत कम न करे (वास्तविक मजदूरी दर) साथ-साथ पूंजी

की कीमत (लाभ दर) व श्रम उत्पादकता, तो वह पनप नहीं सकता। इसका अभिप्राय श्रम की कीमत को पूंजी की कीमत तक व श्रम उत्पादकता तक कम न करे तो।

रॉबिन्सन के विचार से यदि कोई अल्पविकसित अर्थव्यवस्था पूंजीवादी व्यवस्था न अपनाकर, मिश्रित अर्थव्यवस्था अपनाती है जहाँ मौद्रिक व वित्तिय नितीयाँ अर्थव्यवस्था को ऊपर उठाने के लिए प्रयोग की जाती है तभी यह विचार पूर्ण रूप से लागू हो सकता है या फलदायक हो सकता है और इससे निवेश व द्धि भी होगी।

समीक्षात्मक मूल्यांकन
(A Critical Appraisal)

1. **बंद अर्थव्यवस्था** (Closed Economy): जोन रॉबिन्सन का मॉडल बन्द अर्थव्यवस्था को वर्णित करता है लेकिन विकसित देशों में बन्द की बजाय खुली अर्थव्यवस्था होती है इनकी विकास दर को बढाने के लिए विदेशी व्यापार की अहम् भूमिका है।

2. **उत्पादन के स्थिर गुणांक बेकार की बात** (Irrelevancy of Fixed Co-efficients of Production): रॉबिन्सन यह मानती हैं कि उत्पादन की दी हुई मात्रा में उत्पादित करने के लिए श्रम व पूंजी स्थिर अनुपातों में लगाए जाते हैं लेकिन एक बदलती अर्थव्यवस्था में उत्पादन के गुणांक स्थिर नहीं रहते बल्कि समय के अनुसार परिवर्तित होते है और पूंजी व श्रम एक दूसरे के साथ बदलते रहते हैं।

3. **उत्पादन के केवल दो साधन** (Only Two Factors of Production): रॉबिन्सन ने उत्पादन में पूंजी व श्रम का प्रयोग किया है तथा संस्थागत साधनों की उपेक्षा की है। लेकिन किसी भी अर्थव्यवस्था में सामाजिक, राजनैतिक तथा संस्थागत साधनों का महत्त्वपूर्ण स्थान है और ये उत्पादन व द्धि और विकास को बदलने की क्षमता रखते हैं।

4. **स्थिर कीमत स्तर** (Constant Price Level): स्थिर कीमत स्तर की मान्यता अवास्तविक है। जब अर्थव्यवस्था में प्रगति हो रही है तो निवेश व द्धि होती है तथा पूर्ति को माँग में व द्धि की अपेक्षा बढ़ाया नहीं जा सकता। इसलिए कीमत व द्धि होती है। इसलिए निवेश में व द्धि के साथ कीमत व द्धि अनिवार्य है।

अध्याय-14

वितरण का कालडर मॉडल

(Kaldor Model of Distribution)

कालडर मॉडल विकास प्रक्रिया में बचत आय को परिवर्तनशील बनाने का एक प्रयास है। कालडर के अनुसार इस सिद्धांत का उद्देश्य (आर्थिक विकास सिद्धांत) है कि गैर आर्थिक तत्त्वों की प्रकृति को देखना जो उस दर का निर्धारण करते हैं जिस पर अर्थव्यवस्था का उत्पादन स्तर बढ़ रहा है और योगदान करते समय इस तरह के प्रश्न समझने में मदद मिलती है कि क्यों कुछ समाज (देश) दूसरों की अपेक्षा तेजी से बढ़ते हैं अथवा उन्नति करते हैं।

मॉडल की विशेषताएँ
(Assumptions of the Model)

प्रो० कालडोर का मॉडल निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित है।

1. एक प्रगतिशील अर्थव्यवस्था में उत्पादन का स्तर प्रभावी माँग से नहीं बल्कि साधनों की उपलब्धता से सीमित होगा। इसलिए मॉडल केन्जीयन की तरह पूर्ण रोजगार मान कर चलता है जिसमें कुल आय दी हुई है।
2. पूंजीपतियों की अपेक्षा मजदूरों की सीमांत उपभोग प्रव त्ति ज्यादा होती है जिसके कारण (परिणामस्वरूप) पूंजीपतियों की अपेक्षा मजदूरों की सीमांत बचत प्रव त्ति थोड़ी होती है।
3. कालडर ने उत्पादन में श्रम व पूँजी में आपस में परिवर्तन तथा दूसरी तरफ तकनीकी परिवर्तन व आविष्कार के बाद श्रम व पूंजी का योगदान। उसके अनुसार जब अर्थव्यवस्था में तकनीकी परिवर्तन या उसको लागू करने की प्रक्रिया धीरे है तो पूंजी प्रक्रिया की दर भी धीरे होगी। इसलिए उत्पादन फलन तटस्थ तकनीक या ज्ञान के साथ तथा उत्पादन फलन मे तबदीली बदलती तकनीक व ज्ञान के साथ इन दोनों के बीच कालडर ने अन्तर दिखाया है। कालडर ने इस अंतर के बावजूद पूंजी व द्धि व उत्पादकता के बीच एक संबंध दिखाया गया है जो दोनों तत्त्वों को प्रभावित करता है, जिसको चित्र 1 में दर्शाया गया है, चित्र में तकनीकी प्रगति फलन का आकार TT^1 से दिखाया गया है। यदि Ct तथा Qt प्रति श्रमिक पूंजी व प्रति श्रमिक वार्षिक उत्पादन t समय पर दिखाते है तो $\frac{1}{c^t} , \frac{dc}{dt}$ (horizonal अक्ष पर मापे गए) प्रति श्रमिक पूंजी मे वार्षिक प्रतिशत व द्धि दर्शाता है और $\frac{1}{Qt} \cdot \frac{do}{dt}$ (vertical अक्ष पर मापा गया) प्रति व्यक्ति

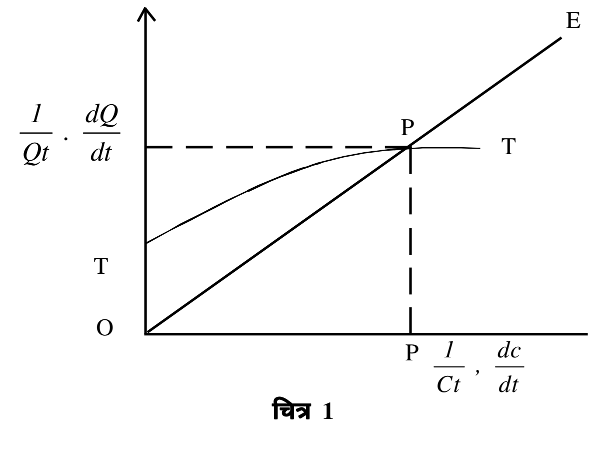

चित्र 1

उत्पादन में वार्षिक प्रतिशत व द्धि मापेगा। OE रेखा पर स्थित बिन्दु पूंजी व उत्पादन में समान प्रतिशत व द्धि दर बताते हैं। TT^1 वक्र वह OE रेखा एक दूसरे को P बिन्दु पर काटते हैं। जब पूंजी प्रक्रिया दर इस दर से कम है उत्पादन में प्रतिशत व द्धि दर पूंजी (पूंजी उत्पादन अनुपात घटने पर) में व द्धि को बढ़ाएगी। P दीर्धकालिन संतुलन बिन्दु और OP दीर्घकाल व द्धि दर संतुलन बिन्दु है। इसका कारण है कि जब पूंजी प्रक्रिया की दर OP से कम है, तो यह ऊपर (वढ़ेगा) चढ़ेगा तथा समय के साथ नए निवेश से लाभ की दर बढ़ेगी। विपरित दिशा में पूंजी में व द्धि धीरे होगी और लाभ की दर में गिरावट आएगी। यह तभी संभव है जब पूंजी व उत्पादन एक दर (समान दर) से बढ़ते है और पूंजी उत्पादन अनुपात सतत् है तो समय के साथ लाभ की दर भी सतत् होगी। इस स्थिति में तकनीकी उन्नति का असर Neutral (बेअसर) होगा। TT^1 वक्र के ऊपर बढ़ने पर नई तकनीकी अविष्कार होगें तथा पूंजी उत्पादन अनुपात में गिरावट आएगी। TT^1 वक्र के नीचे की तरफ जाने से पूंजी उत्पादन अनुपात बढ़ेगा और नए अविष्कार श्रम बचत करने वाले होंगे।

4. मौद्रिक नीति की भूमिका दीर्घकालीन है जो बताती है कि ब्याज की दर उधार लेने वालों की जोखिम पर निर्भर करती है। और निवेश पर लाभ की दर पर निर्भर करता है।

5. राष्ट्रीय व उत्पादन को दो भागों में बाँटा है- मजदूरी और लाभ (W और P)

6. कॉलडर ने तकनीकी अविष्कार से होने वाले प्रभाव जो लाभ व मजदूरी में परिवर्तन लाते हैं को नजर अंदाज किया है। उनका मानना है कि तकनीकी अविष्कार पूंजीगत वस्तुओं व श्रम की कीमत पर निर्भर करते हैं ना कि लाभ की मात्रा पर। इसलिए इस मॉडल में तकनीकों का चुनाव विभिन्न प्रकार के पूंजीगत वस्तुओं की संबंधित कीमत पर निर्भर करता है।

मॉडल की कार्यप्रणाली
(Working of the Model)

$\beta > \alpha > \beta > 0$ इसमें कालडर ने दो बातें ली हैं (1) सतत् कार्यवाहक जनसंख्या, (2) जनसंख्य व द्धि की आज्ञा।

1. कॉलडर का मानना है कि कुल वास्तविक आय में व द्धि दर YT और प्रति व्यक्ति उत्पादन में व द्धि दर OT दोनों समान रूप से एक दूसरे के बराबर हैं। इसको आरम्भ करने के लिए उसने तीन फलन लिए है-बचत फलन, निवेश फलन व तकनीकी उन्नति फलन। Yt, Kt, Pt, St, और It का अभिप्रायः वास्तविक आय, पूँजी, लाभ, बचत और निवेश t समय पर।

St= It=Kt+1-Kt

बचत फलन = $St = \alpha Pt + \beta(Yt - Pt)$

Pt = aggregate Profit (कुल लाभ) (लाभों का जोड़)

Yt–Pt = मजदूरी

α =एल्फा =बीटा	Constant

निवेश फलन का अभिप्राय है किसी भी समय में निवेश संबंधित फैसले पूंजी संचय को कायम रखने के लिए तथा लाभ व पूंजी दर में परिवर्तन से बदलते हैं।

पूंजी संचय t समय पर पिछले वर्ष के उत्पादन, पिछली पूंजी पर लाभ की दर को आपस में गुणा कर दिया जाए तो यह पूंजी संचय होगा। इन सभी फलन को चित्र 2 द्वारा प्रदर्शित किया गया है। लाभ = P/Y जो X अक्ष पर मापे गए है, बचत और निवेश जो आय का अनुपात (S/Y, I/Y) Y अक्ष पर मापे गए है। वक्र SS^1 बचत को प्रदर्शित करता है तथा वक्र II^1 निवेश को दिखाता है। दोनों वक्रों को काटने वाला बिन्दु G लाभ व निवेश के स्तर का अल्पकालीन

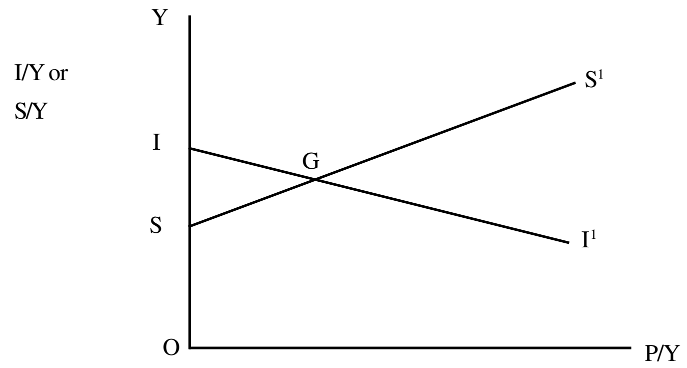

चित्र 2

संतुलन दिखाता है। यदि आय में लाभ का हिस्सा कम है तो निवेश बढ़ेगा (बचतों की उपलब्धता के साथ)। इस अवस्था में लागतों की अपेक्षा कीमतें बढ़ेगी जब तक कीमतों से होने वाले प्रभावों को खत्म न किया जाए। संतुलन में तटस्थ का मतलब है SS^1 वक्र का स्लोप II^1 वक्र के स्लोप को बढ़ा दे। लाभ निर्वाह मजदूरी देने के बाद बचने वाले अतिरेक से ज्यादा नही होना चाहिए।

कालडर का मानना है कि निवेश तब तक सन्तुलन अवस्था तक न पहुँच सके वह अवस्था सतत् अवस्था व द्धि होगी। जिसको चित्र 3 में दिखाया गया है।

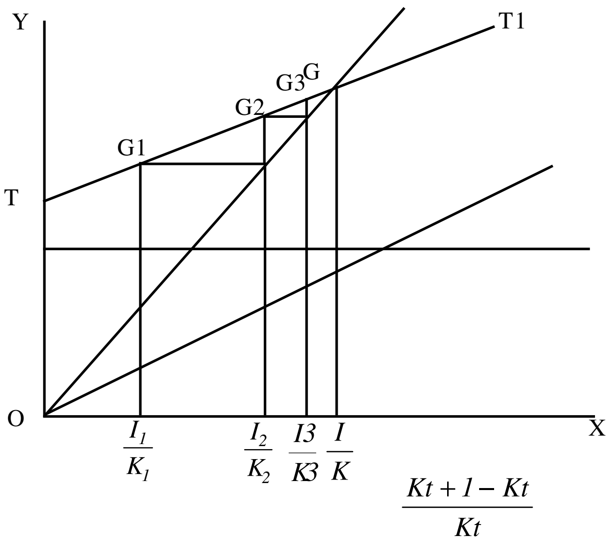

चित्र 3

पूंजी की समान व द्धि X अक्ष पर आय की समान (Proportionate) व द्धि Y अक्ष पर दिखाई गई है। बिन्दु G1, G2, G3 इत्यादि आय में व द्धि दर को दर्शाते हैं। प्रारम्भिक स्थिति से शुरू करते हैं निवेश की दर जब तक बढ़ती रहेगी तब तक यह G बिन्दु तक पहुँच पाए। G पर आय की व द्धि दर तथा पूंजी की व द्धि दर दोनों बराबर हैं।

2. **बढ़ती जनसंख्या (Expanding Population)**: माल्थस सिद्धांत को प्रयोग करते हुए, वे मानते है कि वास्तविक आय तेजी से बढ़ने के बावजूद भी जनसंख्या व द्धि अधिकतम निश्चित सीमा से ऊपर नहीं बढ़ सकती।

अधिकतम आय बढ़ने से कुछ समय पहले जनसंख्या में व द्धि हो सकती है। आय व द्धि पर जनसंख्या की व द्धि दर को नहीं आँका जा सकता अथवा निर्भर नही है। चित्र 4 में जनसंख्या व प्रति व्यक्ति आय (आय में व द्धि) को दर्शाया गया है। X अक्ष पर आय व द्धि $\left(\frac{1}{Y}\frac{dy}{dt}\right)$ और Y अक्ष पर जनसंख्या व द्धि को दिखाया गया है। छोटे-छोटे

बिन्दु (Dotted Curve) जनसंख्या व द्धि वक्र है। जब आय की व द्धि दर एक सीमा से अधिक हो जाती है तो जनसंख्या व द्धि वक्र भी (Horizontal) बन जाता है। इसलिए जनसंख्या में व द्धि एक निश्चित अधिकतम सीमा से अधिक नहीं हो सकती। तथा जनसंख्या व द्धि तकनीकी अविष्कार को भी नहीं रोक सकती। तकनीकी उन्नति फलन की आवश्यकता इसलिए है कि अर्थव्यवस्था में सतत् व द्धि संतुलन प्राप्त हो सके।

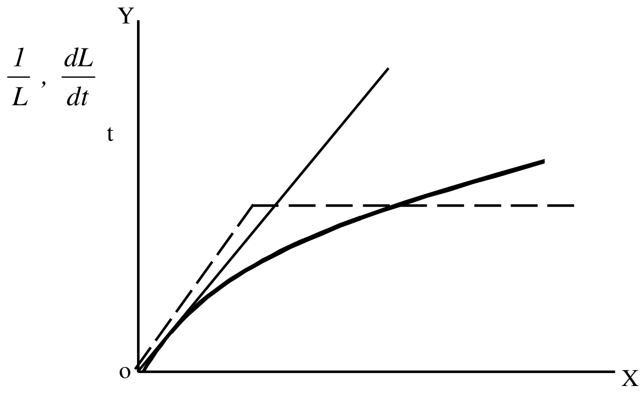

चित्र 4

आलोचनाएँ
(Criticism)

1. वितरण पर तकनीकी उन्नति के प्रभाव की उपेक्षा की गई है। मजदूरों की बचत शून्य नहीं हो सकती तथा तकनीकी प्रभाव उद्यमी का लाभ बढ़ाने मे मदद करते हैं।

$\frac{\lambda}{y} \cdot \frac{dy}{dt}$

2. पूर्ण रोजगार की धारणा पर आधारित होना अवास्तविकता दिखाई देती है क्योंकि पूर्ण रोजगार से नीचे आय के फलनात्मक वितरण को समझने में नाकाम रहा है।
3. कालडर अपने सिद्धांत में कीमतों को इस प्रकार लेता है जो लागत पूरी करती है। तकनीकी कारण से लागत में परिवर्तन हो सकता है तथा माँग से भी कीमतें प्रभावित होती हैं। इसलिए एक दूसरे को पूरक बनाना सही नहीं है।
4. इस सिद्धांत में मानव पूंजी को कहीं नही लिया गया है। इसमें बताया गया है कि I/y में व द्धि से राष्ट्रीय आय में लाभ का हिस्सा बढ़ता है तथा मजदूरी कम होती है। मजदूरी कम होने से श्रमिकों की हालत सोचनीय हो जाएगी जिससे अर्थव्यवस्था में वास्तविक आय तथा उत्पादन कम हो जाएगा।
5. इस सिद्धांत में उत्पादन में निवेश करने का मुख्य कारण लाभों का निवेश है और लाभों का कारण पूंजीपतियों को बताया है न कि श्रमिक भी इसमें योगदान देते है। ऐसी हालत में यह तर्क बेतुका दिखाई देता है क्योंकि ऐसी अवस्था में बचतों को प्रोत्साहन नहीं मिलेगा और न ही कोई बचत करेगा।

अध्याय-15

नवक्लासिक व द्धि का सिद्धांत – आर० एम० सोलो का मॉडल

(The Neo-Classical Theory of Growth — R.M. Solow's Model)

नवक्लासिकी मॉडलों में प्रोफेसर आर० एम० सोलो का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। सोलो की मान्यता है कि उत्पादन निश्चित अनुपात पर निर्भर करता है तथा उत्पादन में पूंजी के लिए श्रम की स्थापना संभव नहीं। लेकिन निश्चित अनुपात की मात्रा का प्रयोग अवास्तविक है क्योंकि उत्पादन के साथ साधन (तत्त्व) एक दूसरे से परिवर्तित (स्थापन्न) हो सकते हैं।

मॉडल की आधारभूत विशेषताएँ (मान्यताएँ)
(Basic Assumptions of the Model)

1. एक एकल संमिश्र वस्तु का उत्पादन होता है।
2. उत्पादन में केवल दो साधनों श्रम व पूंजी का प्रयोग किया जाता है।
3. सतत् प्रतिफल का पैमाना
4. श्रम व पूंजी का पूर्ण रोजगार
5. श्रम व पूँजी एक दूसरे से परिवर्तित हो सकते है।

दीर्घकालीन व द्धि का मॉडल
(A Model of Long-Run Growth)

सोलो सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में एक मात्र वस्तु का ही उत्पादन मानकर चलता है जिसमें उत्पादन की दर को Y (t) से संबोधित किया है। उत्पादन के एक हिस्से का उपभोग तथा बाकी की बचत कर निवेश किया जाता है। उत्पादन का जो हिस्सा बचत किया जाता है उसका सतत् S से संबोधन किया है। इसलिए बचत की दर है S Y(t) समुदाय के पूंजी संचय का नाम K(t) दिया गया है। पूंजी संचय की व द्धि दर से $\frac{dk}{dt}$ (K से संबंधित) निवेश प्राप्त होता है। इसलिए निवेश बचत के बराबर है जिससे निम्नलिखित आधारभूत समीकरण बनते हैं।

$$K = SY \qquad (1)$$

उत्पादन फलन

$$Y = F(K,L) \qquad (2)$$

हम उत्पादन के दो साधन मान कर चलते है पूंजी व श्रम समीकरण (2) को (1) मे परिवर्तित (मिलाते) हुए।

$$K = SF(K,L) \qquad (3)$$

जनसंख्या बहिर्जनित व द्धि के परिणामस्वरूप, श्रम शक्ति सतत् संबंधित दर n से बढ़ती है। तकनीकी परिवर्तन की अनुपस्थिति

में हैएड ने n को प्राकृतिक (Natural) व द्धि दर दिखाया है।

$$L(t) = Lo\ e^{nt} \qquad (4)$$

समीकरण (3) में L= कुल रोजगार, समीकरण (4) में L = श्रम की पूर्ति की उपलब्धता यदि L की कीमत को समीकरण (4) से समीकरण (3) में रखा जाए तो

$$K = SF\ (k, Le\ o^{nt}) \qquad (5)$$

यह आधारभूत समीकरण है जो पूंजी प्रक्रिया के मार्ग को निर्धारित करता है (K= पूंजी की परिवर्तित दर या निवेश) यदि उपलब्ध श्रम को रोजगार पर (खपत) की जाए तो यह रास्ता अपना सकते हैं। पैमाने के स्थिर प्रतिफल के दिए होने पर यदि पूंजी व श्रम तीव्रता से बढ़ते है, तब उत्पादन, रोजगार व बचत भी उसी अनुपात में बढ़ते हैं ऐसी स्थिति में संतुलित विकास होगा।

सोलो के अनुसार समीकरण (4) को पूर्ति वक्र भी कहा जा सकता है। यह कहता है कि श्रम शक्ति एक धाताकिय (Exponentially) रूप से बढ़ती हुई पूर्णतः बेलोचदार श्रम की माँग है। अथवा श्रम पूर्ति वक्र Y अक्ष के समानान्तर होगा। फिर वास्तविक मजदूरी दर को इस तरह से रखा जाएगा कि उपलब्ध श्रम को रोजगार पर लगाया जाए व मजदूरी दर उसी अनुसार काम करेगी (निर्धारित) होगी।

समीकरण (5) को पहले ही आधारभूत समीकरण का नाम दिया गया है। यह समीकरण (t) समय में पूंजी संचय के बारे मे बताता है जो उपलब्ध श्रम को पूर्ण रोजगार मे लगाएगा। एक हम पूंजी संचय व श्रम शक्ति के समय मार्ग (Time Path) को जान लेंगे तो हम उत्पादन फलन से वास्तविक उत्पादन का अनुपातिक मार्ग निर्धारित कर सकते हैं। वास्तविक मजदूरी दर का समय मार्ग सीमांत उत्पादकता समीकरण से निर्धारित होता है। इस प्रक्रिया को समीकरण (4) में देख सकते हैं। इसने (t) समय पर उपलब्ध श्रम पूर्ति दी गई है। इसलिए साधनों के प्रतिफल की Adjustment (आपसी समझ) श्रम व पूंजी रोजगार को पेश करेगी।

वर्तमान उत्पादन की दर प्राप्त करने के लिए समीकरण (2) के उत्पादन फलन का प्रयोग कर सकते है। फिर Propensity to Save (बचत की) से अंदाज लगा सकते हैं कि कुल (शुद्ध) उत्पादन का कितना हिस्सा बचत करना चाहिए तथा कितना हिस्सा निवेश करना चाहिए। इससे वर्तमान समय के दौरान कुल पूंजी प्रक्रिया के बारे में जान सकते हैं। भविष्य के बारे में पूंजी उपलब्धता की जानकारी, यह प्रक्रिया लगातार चलती रहेगी।

$$\frac{dk}{dt} = Lo^{ent} + nrLo^{ent}$$

व द्धि के संभव स्वरूप
(Possible Growth Patterns)

यह जानने के लिए कि क्या हमेशा कोई पूंजी संचय पथ (मार्ग) होता है या नहीं जो सतत् अवस्था की तरफ श्रम शक्ति में व द्धि के अनुरूप हो। इस उद्देश्य के लिए सोलों ने नया Variable (चर) को श्रम व पूंजी का अनुपात (K/L) के रूप में लिया है। यह आधारभूत समीकरण में एक नया परिवर्तन है।

$$K = rL = rLo^{ent}$$

यदि इसमें समय (t) के साथ लिया जाए तो

$$= \left(\frac{dr}{dt} + nr\right) Lo^{ent}$$

यदि इसको समीकरण (s) में विस्थापित (स्थानापन्न) किया जाए तो

$$= \left(\frac{dr}{dt} + nr\right) Lo^{ent} = SF\left(K, Lo^{ent}\right)$$

सतत् प्रतिफल के स्तर को मानते हुए उत्पादन फलन की दोनों तरफ Lo^{ent} से विभाजित कर सकते हैं।

$$\frac{dr}{dt} + nr = SF\left(\frac{k}{Lo^{ent}}, 1\right)$$

$$\therefore \frac{k}{Lo^{ent}} = r$$

$$= \frac{dr}{dt} = SF(r, I) - nr$$

Solow ने   और r को एक कहा है। इसलिए इस समीकरण को इस तरह लिख सकते हैं।

$$r = SF(r,I) - nr \qquad (6)$$

इस समीकरण में F(r,I) कुल उत्पादन वक्र है जो श्रम की इकाई प्रयोग करने पर पूंजी की r मात्रा में भी परिवर्तन लाता है। दूसरे शब्दों में यह प्रति श्रमिक उत्पादन देता है जो प्रति श्रमिक पूंजी का फलन है। समीकरण (6) बताता है पूंजी श्रम अनुपात में परिवर्तन दर दोनों का अन्तर है (श्रम व पूंजी) समीकरण (6) को सोलो ने निम्नलिख्तिा चित्र द्वारा प्रदर्शित किया है।

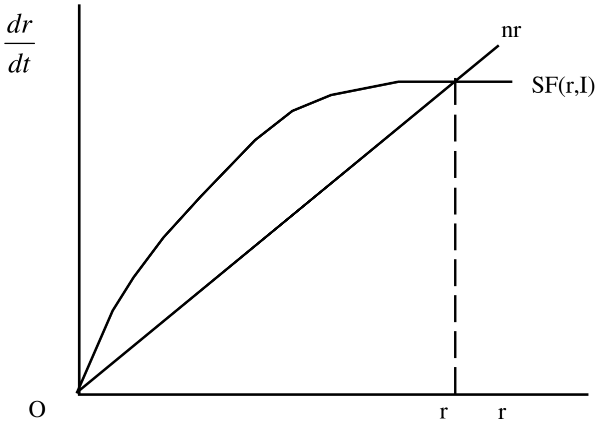

चित्र 1

इस चित्र में nr मूल बिन्दु से गुजरने वाली रेखा है। वक्र SF (r,I) इस ढंग से खींचा गया है कि पूंजी की धटती सीमांत उत्पादकता को व्यक्त करे। जिस बिन्दु पर nr=SF(r,I) इसका मतलब है r=0. इसका अभिप्राय है पूंजी, श्रम अनुपात स्थिर (Constant) अर्थात् पूंजी स्टाक अवश्य उसी दर से बढ़ेगा जिस दर से श्रम शक्ति या श्रम का प्रति श्रमिक उत्पादन स्थिर रहेगा। ऐसी स्थिति संतुलित विकास को प्रकट करती है।

अब यह देखते है कि यदि पूंजी श्रम अनुपात (r), r के बराबर नही है। यदि r > r है तो हम काटने वाले बिन्दु की दाई तरफ होंगे। यहाँ nr>SF(r,I) और समीकरण (6) से हम देख सकते हैं। कि r r की तरफ गिरेगा। दूसरी तरफ यदि हम काटने वाल बिन्दु की बाई तरफ है तो r>r चित्र दिखाता है कि जब nr<SF (r,I), i>o और r, r की तरफ बढ़ेगा। r दिखाता है कि इसमें दोनों तरफ (कोई तरफ भी हो) r की तरफ जाने की संभावना है। इसका अभिप्राय r की संतुलन कीमत सतत् है। प्रारम्भिक अवस्था है पूंजी श्रम के अनुपात की किसी भी कीमत पर, अर्थव्यवस्था प्राकृतिक दर पर सतत् सन्तुलित विकास की तरफ बढ़ेगी। यदि सन्तुलित अनुपात से प्रारम्भिक पूंजी संचय कम है तो सन्तुलन अवस्था आने से पहले श्रम की अपेक्षा उत्पादन व पूंजी अधिक तेजी से बढ़ेगे। यदि संतुलन की मत से प्रारम्भिक अनुपात ज्यादा है तो श्रम शक्ति की अपेक्षा उत्पादन व पूंजी धीरे बढ़ेगे। उत्पादन की व द्धि श्रम व पूंजी के साथ (बीच) मध्यस्थ का काम करती है।

अर्थव्यस्था में हम सतत् व द्धि के लिए पूंजी व उत्पादन के बीच स्थिर समझौता कर सकते हे। जिससे विभिन्न अवस्थाएँ पैदा

हो सकती हैं। जिसको चित्र 3 में दिखाया गया है। चित्र में तीन विभिन्न बिन्दु है। जो उत्पादकता वक्र को काटते है। R_1,R, और r_3 बिन्दु r_1, r_3 सतत् हैं लेकिन r_2 असतत् है। इसको समीकरण (6) से आँक सकते हैं। सबसे r1 को लेते हैं। यदि हम इस

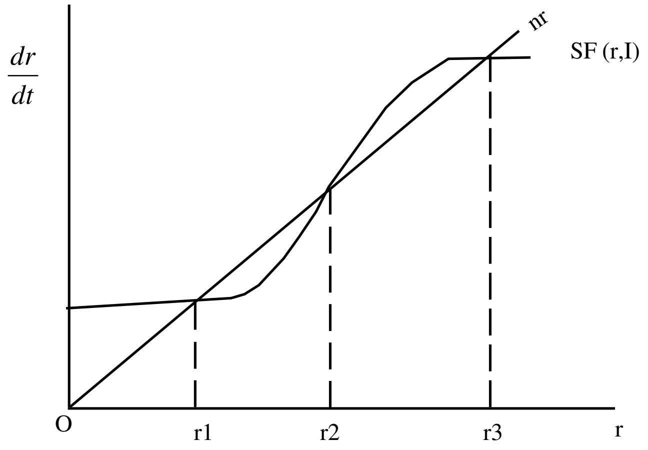

चित्र 2

बिन्दु की थोड़ा दाई तरफ बढ़ते हैं तो nr>SF(r,I), इसलिए कि r बताता है कि r घट रहा है इसलिए वापिस r1 पर आकर रूकेगा। यदि हम इस बिन्दु के थोड़ा बाएँ तरफ जाते हैं, SF (r,I)>nr, r, धनात्मक है बताता है कि r बढ़ रहा है और वापिस r1 पर आकर रूकेगा। इसलिए r1 की तरफ थोड़ी सी इधर उधर की तबदीली वापिस r1 पर ले आती है। इसलिए यह संतुलन बिन्दु है। यही अवस्था r3 की है। यद्यपि r2 के संबंध में स्थिति विपरित है समय के साथ कोई भी परिवर्तन हो सकता है इसलिए इसको असंतुलन बिन्दु का नाम दिया है। यदि हम थोड़ा सा r2 के दाएँ बढ़ते है तो SF (r,I)> nr समीकरण 6 r धनात्मक (बताता है कि r बढ़ता है)। इसलिए r2 से r3 की तरफ बढ़ने की प्रव त्ति है। यदि r2 के बाई तरफ थोड़ा सा बढ़ते है। nr>SF (r,I) इसलिए r ऋणात्मक है (बताता है r घटता है) इसलिए r1 की तरफ नीचे जाने की प्रव त्ति है। यह दर्शाता है कि r1, r3 सतत् संतुलन बिन्दु तथा r2 असतत् संतुलन बिन्दु है। इसलिए प्रारम्भिक पूंजी श्रम अनुपात पर सिस्टम में r1, r3 पर सतत् संतुलन होगा। जैसा दिखया गया है कि O और r2 के बीच कहीं पर भी प्रारम्भिक अवस्था में सतत् संतुलन r1 पर संबंधित संतुलित व द्धि संतुलन, प्रारम्भिक अनुपात पर r2 से ज्यादा r3 पर है।

चित्र 3 सभी संभावनाओं को दिखाने में समर्थ नहीं है। सोलो के अनुसार जब परिवर्ती समानुपातों तथा पैमाने के स्थिर प्रतिफलों की सामन्य परिस्थितियों में उत्पादन होता है। तो व द्धि की प्राकृतिक व अभिष्ट (warranty) दरों में कोई विरोध संभव नही है। कोई छुटी-धार संतुलन नहीं भी हो सकता। व्यवस्था श्रम शक्ति की व द्धि की किसी भी दी हुई दर से समायोजना कर सकती है और समानुपातिक विस्तार की अवस्था तक पहुँच सकती है।

अध्याय-16

तकनीकी परिवर्तन के मॉडल

(Models of Technical Change)

हैरॅड के मॉडल की छुरी-धार समस्या का समाधान हो सकता हैं और तकनीकी उन्नति की संभावनाओं को स्वीकारते हुए अभिष्ट (Warranty) पर व प्राकृतिक दर के बीच समानता भी लाई जा सकती है। तकनीकी अविष्कार श्रम व पूंजी की उत्पादकता को बढ़ाकर व द्धि दर व स्तर में व द्धि करने में सहायता करते हैं और साथ में उत्पादन की योग्यता में भी व द्धि करते है (अथवा सुधार लाते हैं) इसलिए इस मॉडल को तकनीकी उन्नति से जोड़ने से पहले आवश्यक है कि हिक्स की तटस्थता (Hick's Neutrality), हैरॅड तटस्थता के बारे में जानना।

तकनीकी उन्नति के विभिन्न प्रकार
(Forms of Technical Progress)

तकनीकी उन्नति व अविष्कार को तीन भागों में बाँटा है (1) तटस्थ, (2) श्रम बचत, (3) पूंजी बचत। इन तीनों अविष्कारों का हिक्स व हैरॅड ने अलग-अलग मतलब निकाला है। हिक्स ने इसका नाम स्थापन्न की सीमांत दर (श्रम व पूंजी के सीमांत उत्पाद का अनुपात), हैरॅड ने पूंजी उत्पाद अनुपात का नाम दिया है।

हिक्स् की अवधारणा
(Hick's Approach)

हिक्स के अनुसार तटस्थ तकनीकी उन्नति का अभिप्राय है जब यह उत्पादन के साधनों की सीमांत उत्पादकता को उसी अनुपात में बढ़ाता है। जब दो उत्पादन के साधन श्रम व पूंजी को उत्पादन पैदा करने में लगाया जाए तो हिक्स (तटस्थ अविष्कार) श्रम व पूंजी की सीमांत उत्पादकता को समान अनुपात में बढ़ाएंगे। हिक्स तटस्थ तकनीकी अविष्कार चित्र 1 मे दिखाया गया है जहाँ X अक्ष पर पूंजी श्रम अनुपात (प्रति व्यक्ति पूंजी) और Y अक्ष पर प्रति व्यक्ति उत्पादन दिखाया गया है। OF तकनीकी उन्नति से पहले का उत्पादन फलन जबकी OFI तकनीकी परितर्वन के बाद का उत्पादन फलन है। मजदूरी या श्रम की सीमांत

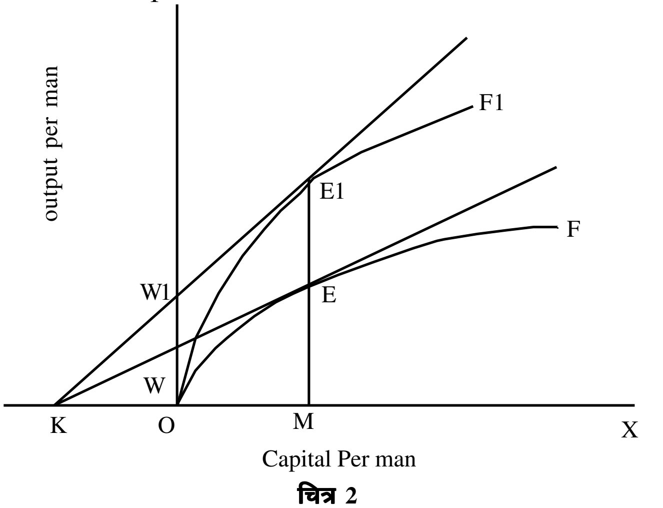

चित्र 2

उत्पादकता OW है, WE का slope पूंजी की सीमांत उत्पादकता बताता है। यदि पूंजी की सीमांत उत्पादकता का चिन्ह r दिया जाए तो $r = \frac{ow}{ok}$ wk का slope (ow/ok) पूंजी की ok सीमांत उत्पादकता (r) है। इसका मतलब ok=ow/r यद्यपि ok श्रम की सीमांत उत्पादकता (ow) और पूंजी की सीमांत उत्पादकता (r) के बीच के अनुपात को मापता है।

हिक्स की तटस्थ तकनीक उन्नति बताती है कि ME1 रेखा की तरह X अक्ष से निकलने वाली किसी क्षैतिज रेखा के सभी बिन्दुओं पर श्रम तथा पूंजी का सीमांत उत्पादन के बीच का OK अनुपात बराबर होना चाहिए। यदि तकनीकी परिवर्तन के बाद उत्पादन फलन ऊपर उठकर OFI तक पहुँचता है। फिर भी हिक्स का तटस्थ तकनीकी EI पर पहुँचने के लिए भी K से गुजरना चाहिए क्योंकि ऐसी स्थिति में भी श्रम का सीमांत उत्पादन अनुपात (ow1) से पूंजी का सीमांत उत्पादन अनुपात (r1) भी पहले अनुपात (श्रम का सीमांत उत्पादन (ow) से पूंजी का सीमांत उत्पादन (r) के बराबर होगा। इसलिए k से गुजरते हुए EI बिन्दु पर निम्नलिखित शर्ते संतुष्ट होगी।

OWi/ri = OW/r

यह बताता है कि दिए हुए उत्पादन फलन OF, F1 हिक्स का तटस्थ तकनीक अविष्कार ME1 क्षेतिज रेखा के साथ दिखाया गया है। इस तकनीक अविष्कार मे प्रति व्यक्ति उत्पादन EE1 तक बढ़ा है लेकिन पूंजीश्रम अनुपात OM पर तटस्थ है।

हिक्स के तटस्थ तकनीक अविष्कार को साधारण उत्पादन फलन से भी दिखा सकते हैं।

Y= F(K, L,T)

K= Capital

L=Labour

T=Time

तकनीक उन्नति को समय का बहिजर्नित फलन माना है। जब तकनीक उन्नति हिक्स तटस्थ है उत्पादन फलन इस तरह होगा।

Y=A(t) F(K,L)

A(t)= t का बढ़ता हुआ फलन। यह बताता है कि समान पूंजी-श्रम अनुपात पर आय वितरण परिवर्तित नही होता। तटस्थ तकनीक उन्नति से पूंजी बचतकारी तकनीक उन्नति तथा श्रम बचत तकनीक उन्नति का मतलब समझना आसान है। पूंजी-बचत तकनीक का अभिप्राय है कि पूंजी की सीमांत उत्पादकता की बजाय श्रम की सीमांत उत्पादकता का अधिक बढ़ना। इसके अन्तर्गत समान उत्पादन स्तर को श्रम की बजाय कम पूंजी से उत्पादित करना।

दूसरी तरफ श्रम-बचतकारी तकनीक में श्रम की सीमांत उत्पादकता की जगह पूंजी की सीमांत उत्पादकता को बढ़ाना अर्थात् समान उत्पादन का स्तर पैदा करने के लिये पूंजी की बजाय श्रम का कम प्रयोग।

हैरॅड की अवधारणा
(Harrod's Approach)

हैरॅड के अनुसार तटस्थ तकनीकी उन्नति में पूंजी की सीमांत उत्पादकता व पूंजी उत्पादक अनुपात तटस्थ रहते हैं। इसका अभिप्राय है कि यदि तकनीक उन्नति रहने पर लाभ की दर तटस्थ रहती है, इसलिए तकनीक उन्नति तटस्थ है (हैरॅड तटस्थ सिद्धांत) इसमें आवश्यक है कि पूंजी उत्पादन अनुपात तटस्थ रहना चाहिए।

इस तथ्य से श्रम-बचतकारी तकनीक तथा पूंजी-बचतकारी तकनीक को समझना आसान है। यदि तकनीक उन्नति में परिवर्तन के कारण, लाभ की दर स्थिर, लेकिन पूंजी उत्पादन पूंजी-बचतकारी है। दूसरी तरफ यदि लाभ की दर स्थिर, लेकिन पूंजी उत्पादन अनुपात बढ़े तो यह अविष्कार श्रम-बचतकारी है। हैरॅड तटस्था को चित्र 2 में दिखाया गया है वास्तविक उत्पादन फलन OF है और अर्थव्यवस्था प्रति व्यक्ति उत्पादन OY, के साथ E पर संतुलन में है। पूंजी उत्पादन अनुपात OM/OY_1 है। सीधी रेखा OE_1 जो E से गुजरती है, बताती है कि E_1 बिन्दु पर पूंजी-उत्पादन अनुपात OM_1 OY_2 , बिन्दु E पर पूंजी-उत्पादन अनुपात OM/OY_1 एक दूसरे के बराबर है।

अब यह मान कर चलते हैं कि तकनीकी परिवर्तन से उत्पादन फलन OF से OF_1 की तरफ बढ़ा है। नई संतुलन की अवस्था E_1 है। यहाँ पर पूंजी-उत्पादन अनुपात स्थिर है ($OM_1/OY_2=OM/OY_1$) हैरॅड की तटस्थता बताती है। कि E तथा E_1 बिन्दु पर लाभ की दर समान रहेगी।

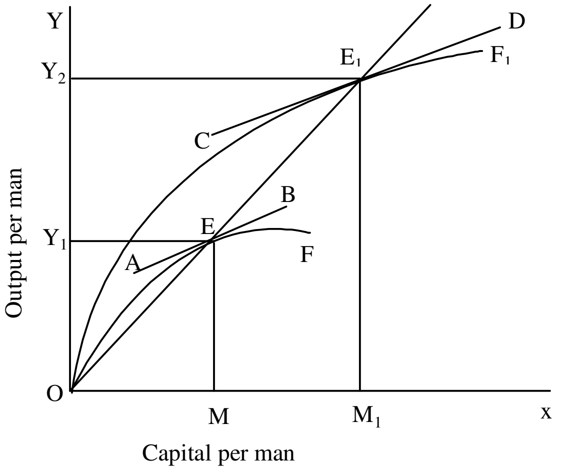

चित्रः 2

यह मान कर चलते है कि लाभ की दर, पूँजी की सीमांत उत्पादकता के बराबर होगी, इसका अभिप्राय है कि E और E_1 पर पूंजी की सीमांत उत्पादकता बराबर होगी। यह तभी संभव है जब (A B) व (C D) E तथा E_1 बिन्दु पर एक दूसरे के समानान्तर है। चित्र 2 हैरॅड की तटस्थता को दिखाती है। हैरॅड की तटस्था में, यदि रेखा OE_1 के साथ गुजरते है तो लाभ की दर स्थिर होनी चाहिए। कोई भी दूसरी रेखा जो इस तरह की शर्त (जरूरत) पूरा करती है तो हैरॅड की तटस्था दिखाती है। हैरॅड के तटस्थ तकनीक अविष्कार को इस तरह से दिखाया गया है।

$$Y=F(K,A,(t)L)$$

यहाँ भी A(t) समय का बढ़ता फलन है। लेकिन अब श्रम से संबंधित है न कि F(K,L)। कारण है कि हिक्स के तटस्थ तकनीक अविष्कार में श्रम व पूँजी दोनों एक अनुपात में बढ़ते हैं लेकिन हैरॅड के तटस्थ तकनीक अविष्कार में श्रम शक्ति की विशिष्टता में सुधार आता है (बढ़ती है) हर एक व्यक्ति पहले की अपेक्षा अधिक काम कर सकता है।

हैरॅड की तटस्था से तीन बातें उभर कर आती है (1) यह दिया गया है कि पूंजी उत्पादन अनुपात स्थिर तटस्थ अविष्कार श्रम तथा पूँजी के संबंध को प्रभावित नहीं करेंगे। लेकिन अब हर एक मशीन अधिक उत्पादन कर सकती है। यदि उत्पादन की कीमत बदलती नहीं है तो मशीन की कीमत तथा मशीन से उत्पादित होने वाली वस्तु की कीमत समान दर से बढ़ेंगी। इसका मतलब है कि तटस्थ तकनीक उन्नति के दौरान इन मशीनों को बनाने में लगे श्रमिकों की उत्पादकता तथा इन मशीनों को प्रयोग में लाने वाले श्रमिकों के उत्पादन में समान रूप से व द्धि होगी।

दूसरा प्रभाव है कि लाभ की दर स्थिर रहती है। हैरॅड की तटस्थता बताती है कि तटस्थ अविष्कार राष्ट्रीय आय के वितरण में मजदूरी व लाभ में कोई परिवर्तन नहीं होता। तीसरा प्रभाव है कि हैरॅड की तटस्थ तकनीक उन्नति, अपने आप को बनाए रखने के लिए सतत् व द्धि (Steady-State growth) को पनपने देती है। इसका कारण है कि हैरॅड की तटस्थ तकनीक उन्नति जनसंख्या से संबंधित है (जो प्राकृतिक व द्धि दर को अभिष्ट व द्धि दर तक Adjust करने के योग्य बनाती है)।

हैरॅड की तटस्थता हिक्स की तटस्थता तकनीक उन्नति की परिभाषा से अलग है। तथा उत्तम है। हैरॅड का सिद्धांत गत्यात्मक अवस्था में लागू होता है न कि स्थैतिक में। हैरॅड के तटस्थता तकनीक परिवर्तन में श्रम का सीधा संबंध नही है क्योंकि यह पूंजी तथा उत्पादन के संबंधों पर आधारित है। फिर भी पूँजी-श्रम अनुपात तथा उत्पादन श्रम अनुपात बिना तकनीक उन्नति के भी बदल सकते हैं। हिक्स तथा हैरॅड तटस्थता में पूंजी व श्रम के बीच स्थापन्न लोच इकाई के बराबर होती है।

Production Function Approach (उत्पादन फलन की अवधारणा)

यहाँ केवल आर्थिक व द्धि के साधनों का वर्णन करना सम्पूर्ण नहीं है बल्कि उत्पादन फलन सिद्धांत की व्याख्या करना है। उत्पादन फलन की साधारण परिभाषा में उत्पादन आगतों (Inputs) का फलन व उपलब्ध तकनीक को शामिल किया गया है।

O=F(K, L, T) (1)

K= पूँजी

L= श्रम,

T=तकनीक

कॉंब डगलस (Cobb-Douglas) में उत्पादन फलन इस प्रकार दिया गया है।

$$Ot = TtK_t^{\alpha} L_t^{\beta} \qquad (2)$$

Ot= वास्तविक उत्पादन t समय पर

Tt = तकनीक का सूचकांक (सूचक) या कुल उत्पादकता।

K = पूँजी का संचय का सूचक।

Lt = श्रम आगातों का सूचक।

α (एल्फा)= उत्पादन की प्रभावी लोच पूँजी के साथ।

(बीटा)= उत्पादन की प्रभावी लोच श्रम के साथ।

उत्पादन फलन को हिक्स व हैरॅड के तटस्थ तकनीक उन्नति में भी दिखाया गया है।

$$\beta = 1-\alpha$$

तकनीक उन्नति को शामिल करने के बाद $= e^{mt} K^{\alpha} L^{1-\alpha}$ $\alpha_1\beta =$

$$Y = e^{\lambda} k^{\alpha} L^{1-\alpha} \qquad \therefore \quad \lambda \not> 0$$

अब मान कर चलते हैं कि हैरेड की तटस्थ तकनिक अविष्कार m की दर से है।

$$Y = e^{\lambda} k^{\alpha} L^{1-\alpha} \qquad \therefore \quad \lambda \not> 0$$ जहाँ $\overline{L} = L^{emt} L$

कॉंब डगलस उत्पादन फलन में λ (लेमडा)= यदि हिक्स की तटस्थ तकनीकी उन्नति दर पर है तो लिख सकते हैं।

जहाँ $\overline{k} = e^{mt} k$ और

कॉंब डगलस उत्पादन फलन में $\lambda = m^7$

ऊपर विवरण बताता है कि कॉंब डगलस उत्पादन फलन में हिक्स, हैरॅड दोनों में तकनीकी उन्नति तटस्थ है।

हैरॅड तटस्थ तकनीक उन्नति का प्रभाव जनसंख्या में व द्धि के समान है। जिसको श्रम प्रधान तकनीक उन्नति भी कह सकते है। तीसरी तरह की तकनीक सोलो ने 1963 में अपनी पुस्तक 'Capital Theory and Rate of Returns' में वर्णन किया है। जिसको पूँजी संबंधित तकनीक उन्नति कह सकते है। जहाँ पर तकनीक उन्नति AC+1 के सूचक को L की बजाय K पर निश्चित किया गया है।

Y= F[A(t) K,L]

यह हैरॅड की तटस्थ तकनीक उन्नति के आइने की तरह है, और L और K को विपरीत दिशा मे बदलने की भी बराबर मान्यताएँ है। यद्यपि L/Y के स्थिर रहने पर आय वितरण और मजदूरी भी स्थिर है। पूँजीवादी मॉडल का अध्ययन करने के लिए पूँजी संबंधित तकनीक उन्नति प्रयोगकारी है। यद्यपि यह तटस्थ अवस्था का अध्ययन करने के लिए हैरॅड का तटस्थ सिद्धान्त को प्रयोग नही करता K/Y स्थिर है, वितरण स्थिर, सतत् अवस्था प्रक्रिया में सबसे महत्त्वपूर्ण है बचत फलन, जहाँ L/Y स्थिर है वहाँ पर पूँजी प्रधान तकनीक उन्नति सतत् व द्धि की विशेषता नहीं है। पूँजी प्रधान व श्रम प्रधान तकनीक वर्णन करने के बाद हिक्सा हैरॅड की परिभाषा को आसानी से समझ सकते है। उदाहरण के तौर पर दोनों श्रम व पूँजी की उपलब्धता के साथ उत्पादन फलन इस प्रकार है।

फिर हिक्स तटस्थता और हैरॅड तटस्थता . यदि तकनीक परिवर्तन का यदि दूसरे संबंधित हिस्सों पर देखाना चाहते हैं तो हैरॅड स्थिर पूँजी-उत्पादन अनुपात तथा हिक्स स्थिर पूँजी-श्रम अनुपात के बारे में बात करता है।
समीकरण (2)को दोनों तरफ (log) लेकर t से विभाजित (differentiate) कर सकते हैं।

या

याद रहे $\frac{d}{dx} \log x = \frac{1}{x}$ (3)

ऊपर वर्णित समीकरण में समय के अनुसार परिवर्तन है चरों की वार्षिक दर में परिवर्तन कर इस प्रकार लिखा जाता हैं

$$ro = rt + \alpha rk + \beta rL \qquad (4)$$

ro= समय के साथ उत्पादन की वार्षिक व द्धि दर

rt= कुल उत्पादकता की वार्षिक व द्धि दर

rk = पूँजी वार्षिक व द्धि दर

rL= श्रम की वार्षिक व द्धि दर

श्रम व पूँजी के साथ उत्पादन की संबंधित लोच (Partial elasticity of output with respect to labour and capital) उत्पादन की तकनीक का योगदान निरंतर है।

अध्याय-17

हैरॅड तथा डोमर का मॉडल

(The Harrod-Domar Model)

यह मॉडल उन्नत देशों के अनुभवों पर आधारित है। हैरॅड डोमर ने पहली बार केन्ज की लघु सतत् रोजगार सिद्धांत और दीर्घकालीन गत्यात्मक व द्धि के बीच अन्तर दिखाया है। दोनों ही राष्ट्रीय उत्पाद में सरल, अविरोधाभाष व द्धि के लिए शर्ते निर्धारित करने में रूचि रखते थे। यद्यपि उनके मॉडल सूक्ष्म विवरणों में विभिन्नता लिए हुए हैं। फिर भी एक ही निष्कर्ष पर पहुचंते हैं।

सतत् व द्धि की आवश्यक शर्तें

(The Conditions Required for Steady Growth)

दूसरे अर्थशास्त्रीयों की तरह जिन्होंने आर्थिक व द्धि की समस्याओं की तरफ ध्यान दिया है, हैरॅड व डोमर ने व द्धि प्रक्रिया में पूँजी प्रक्रिया को अधिक महत्त्व दिया है। परम्परावादी अर्थशास्त्रीयों ने अपना सारा ध्यान पूँजी प्रक्रिया की क्षमता पर दिया है क्योंकि माँग की उपलब्धता कोई समस्या नहीं है और माँग को अपने आप उत्पन्न होने वाली माना है। अथवा यह अपने आप उत्पन्न होती है। केन्ज ने अपना सारा ध्यान 1930 में होने वाली गिरावट (Depression) पर लगाया है। क्षमता को पूर्ण रूप से नकारते हुए माँग की अपूर्णता पर अपना सारा ध्यान केन्द्रीत किया है। हैरॅड व डोमर ने निवेश प्रक्रिया के दोनों पक्षों को लिया है। उसने पूँजी प्रक्रिया के दोहरे प्रभाव पर दबाव डाला है। एक तरफ निवेश (शुद्ध) आय बढ़ाता है और उत्पादन के लिए माँग पैदा करता है दूसरी तरफ शुद्ध निवेश माँग प्रभाव के साथ-साथ क्षमता प्रभाव भी डालता है। यदि एक ही समय में शुद्ध निवेश व शुद्ध बचत एक दूसरे के बराबर हैं तो बाजार से ज्यादा (अतिरेक) उत्पादन हटाने में माँग प्रभाव का कार्य करता है। इस प्रक्रिया में कुल माँग उत्पादन के बराबर होगी और वास्तविक आय स्तर व उत्पादन संतुलन प्राप्त करेंगे। इस पर केन्ज की आय सिद्धांत में कुछ नहीं कहा गया है। केन्ज के सिद्धांत में यह तो कहा है कि यदि आय तथा उत्पादन स्तर में संतुलन है तो ex ante investment व ex-ante saving एक दूसरे के बराबर होगें। केन्ज ने इस समय के निवेश का क्षमता पर क्या प्रभाव पड़ेगा, वर्णन नहीं किया। यद्यपि इस समय में कुल निवेश अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता को बढ़ाएगा जिससे उस समय के उत्पादन में भी व द्धि होगी। इस बढ़ी हुई क्षमता को पहले पूर्ण रूप से प्रयोग किया है। या नहीं इसके बारे में कोई वर्णन नहीं किया है। इससे यह साफ है। कि यदि बढ़ी हुई क्षमता का पूर्ण प्रयोग हुआ है तो इससे इस समय की कुल माँग दूसरे समय की माँग से अधिक होगी। यदि कुल निवेश लगातार बढ़ रहा है तो कुल माँग भी साथ-साथ बढ़ेगी। यदि ऐसा करने में असफल रहते है तो कुल निवेश से बढ़ने वाली उत्पादन क्षमता का पूर्ण प्रयोग नहीं होगा। कुल माँग बढ़ने के साथ कुल निवेश भी बढ़ना चाहिए, जो यह बताता है कि (निवेश) यह तभी बढ़ेगा जब कुल राष्ट्रीय आय में लगातार व द्धि हो।

इस तर्क को समझने में आसानी होगी यदि वास्तविक आय में परिवर्तन न होने पर भी निवेश के प्रभाव का आकलन किया जाए। निवेश से उत्पादन क्षमता में विस्तार होता है, लेकिन कुछ कारणों से हो सकता है कि वास्तविक आय न बढ़े। (1) नई उत्पन्न पूँजी उपयोग न हुई हो। (2) नई उत्पन्न पूँजी का भूत समय में खर्च की गई पूँजी के लिए प्रयोग (3) नई उत्पन्न पूँजी श्रम का स्थानापन्न कर दे। यदि पूँजी प्रक्रिया से लगातार वास्तविक राष्ट्रीय आय में व द्धि नहीं होती है तो इससे श्रम व पूँजी की पूर्ति में व द्धि होगी। इसलिए ऐसी अवस्था में जहाँ बढ़ती हुई पूँजीगत वस्तुएँ व श्रम शक्ति का उत्पादकीय तौर पर पूर्ण प्रयोग (उपयोग) न हो तो इसको (नियंत्रण) काबु करने के लिए देश की वास्तविक आय को बढ़ाने की आवश्यकता है।

डोमर के मॉडल की आर्थिक व द्धि
(Domar's Model of Economic Growth)

डोमर के मॉडल में सबसे पहले अर्थव्यवस्था के संतुलन की अवस्था का वर्णन किय है और फिर प्रश्न का उत्तर देने की कौशिश की हैं कि इस संतुलन को कैसे बनाए रखा जाए। डोमर के अनुसार एक अर्थव्यवस्था संतुलन में तब होगी जब उत्पादन क्षमता P राष्ट्रीय आय Y के बराबर हों। संतुलन अवस्था के बाद, अर्थव्यवस्था में वह व द्धि दर भी खोजनी चाहिए जिसमें अर्थव्यवस्था के फैलाव के साथ पूर्ण रोजगार की अवस्था लगातार निहित रहें।

डोमर ने इस मॉडल की निम्नलिखित विशेषताएँ दी हैं (1) आय का एक प्रारंभिक पूर्ण रोजगार संतुलन स्तर होता है। (2) बन्द अर्थव्यवस्था। किसी देश के साथ कोई व्यापार नहीं (3) सरकारी हस्तक्षेप नहीं (4) बचत व निवेश उसी समय की आय से संबंधित है। (5) दोनों बचत व निवेश हास से ऊपर अथवा शुद्ध बचत व निवेश (6) पूँजी वस्तुओं का मूल्यहास नहीं होता तथा उन्हें अनन्तजीवी मान लिया जाता हैं (7) औसत व सीमांत बचत प्रव त्ति बराबर हैं। (8) बचत प्रव त्ति स्थिर (9) पूँजी संचय से उत्पादन अनुपात स्थिर। डोमर ने अपना मॉडल अपने आप विकसित किया है और उसने केन्ज के सिद्धांत की सीमाओं की व्याख्या (Notice) की है। केन्ज के सिद्धांत ने व द्धि दर के संतुलन को बनाने वालों यन्त्रों का प्रयोग नहीं किया हैं केन्ज के मॉडल से व द्धि की समस्या बिल्कुल गायब हैं क्योंकि इसकी विशेषता है कि रोजगार राष्ट्रीय आय का फलन है। यह मान्यता लघु काल के लिए सही हो सकती है। लेकिन दीर्घकाल में इसके दूरगामी परिणाम दिखाई देंगे। केन्ज ने निवेश की दोहरी विशेषता को नहीं समझा जो व द्धि प्रक्रिया के लिए आवश्यक है। डोमर ने इसकी महत्त्वता का वर्णन किया है। यदि निवेश से दोनों उत्पादन क्षमता व आय बढ़ती है तो दोनों अवस्था में व द्धि दर में व द्धि उत्पन्न होगी इसको डोमर ने एक उदाहरण सहित समझाया हैं

सिद्धांत का पूर्ति पक्ष
(The Supply side of the System)

वार्षिक दर पर निवेश को I लिया है, नई निर्मित पूँजी की उत्पादन क्षमता S के बराबर $ में लिया है। उदाहरण के तौर पर, यदि एक डालर ($) उत्पादन के लिए 3 डालर पूँजी ली गई है, $S = \frac{1}{3}$ या 33.3 प्रतिशत प्रतिवर्ष। (S) सभी उद्योगों में एक जैसा नहीं रहेगा। एक डालर लगाने के बाद उत्पादन क्षमता हर वर्ष IS डालर हो जाएगी। लेकिन यह कहना मुश्किल है कि पूरी अर्थव्यवस्था में IS के बराबर (IS $ per year)। यह केवल छोटी मात्रा में बढ़ती है जिसे डोमर ने $I\sigma$ अब के नाम से दिया है। का वर्णन करते हैं। डोमर इसे निवेश की सामाजिक औसत उत्पादकता कहते है। साथ में यह भी कहा गया है कि इसे पूँजी की सीमांत उत्पादकता के साथ न जोड़ा जाए। वास्तव में इसका अभिप्राय पूरे देश की उत्पादकता से है न कि S के साथ नई योजनाओं में निवेश किए डालर के प्रति डालर उत्पादकता। यह चिन्ह राष्ट्रीय आय में व द्धि होने से संबंध न रखकर अर्थव्यवस्था की उत्पादकता से संबंध रखता है। इसमें ( ) व द्धि होने का अभिप्राय है कि अर्थव्यवस्था उत्पादन में तेजी से व द्धि करने की क्षमता रखती है। डोमर ने अपने सिद्धांत में को पूर्ति पक्ष में दिखाया है। यह उत्पादन में वह व द्धि है जिसे अर्थव्यवस्था उत्पादित कर सकती है।

सिद्धांत का माँग पक्ष
(The Demand side of the System)

डोमर ने माँग की व्याख्या केन्ज की गुणक प्रक्रिया से की है। इसमें उसने मुशिकल से कुछ जोड़ा है। मान लीजिए राष्ट्रीय आय में वार्षिक व द्धि होगी, वह निवेश में व द्धि की गुणा होगी मतलब $\Delta Y = \Delta I \frac{1}{\alpha}$ $\frac{1}{\alpha}$ = गुणांक।

संतुलन
(Equilibrium)

प्रगतिशील अर्थव्यवस्था में डोमर यह मान्यता मानकार चलता है कि यदि पूर्ण रोजगार बनाए रखते है तो राष्ट्रीय आय उत्पादन क्षमता के बराबर होनी चाहिए। यह स्थिति बनी रह सकती है यदि आय व क्षमता में एक जैसी व द्धि हो। डोमर ने इस समीकरण को इस प्रकार दिखाया है।

$$\Delta I \frac{1}{\alpha} = I\sigma$$

यदि दोनों तरफ गुणांक से गुणा किया जाए और I से विभाजित किया जाए तो यह समीकरण इस प्रकार होगा।

$$\frac{\Delta I}{I} = \alpha\sigma$$

इस संतुलन की बाई तरफ निवेश में संबंधित व द्धि के बारे में बताया गया है। इसलिए, यह साफ है कि पूर्ण रोजगार को बनाए रखने के लिए निवेश में वार्षिक व द्धि की दर $\alpha\sigma$ होनी चाहिए।

डोमर के अनुसार पूर्ण रोजगार को बनाए रखने के लिए आय व निवेश चक्रव द्धि ब्याज दर से बढ़े जो बचत की प्रव त्ति (Propensity) और निवेश की औसत उत्पादकता के बराबर है।

ऊपर कहा गया अथव वर्णित किया गया समीकरण भी वहीं शर्तें बताता है जो समय के साथ पूर्ण रोजगार को बनाए रखने के लिए चाहिए। हर दिन नया निवेश होना चाहिए। अर्थव्यवस्था लगातार बढ़नी (फैलनी) चाहिए।

हैरॅड का आर्थिक व द्धि मॉडल
(Harrod's Model of Economic Growth)

डोमर की तरह, हैरॅड ने भी सतत् व द्धि की संभावनाओं को तलाशने की कौशिश की है। वह संभावित मार्ग की प्रव त्ति के बारे में बताता है जिसके साथ अर्थव्यवस्था उन्नति कर सकती है। क्योंकि उन्नति का मार्ग सीधा नही है हैरॅड ने उन कठिनाईयों की तरफ भी इंगित किया है जो अर्थव्यवस्था के सतत् व द्धि प्रक्रिया में बाधा डालती हैं।

हैरॅउ का मॉडल व द्धि की तीन विभिन्न दरों पर आधारित है। प्रथम G द्वारा बचत वास्तविक व द्धि दर जिससे बचत अनुपात (S) तथा पूँजी उत्पादन अनुपात (C) निर्धारित करते हैं। दूसरे GW द्वारा व्यक्त अभीष्ट व द्धि दर। अभीष्ट व द्धि दर किसी अर्थव्यवस्था की आय की पूर्ण क्षमता व द्धि दर होती है। यदि अभीष्ट व द्धि दर प्राप्त होती है तो इसमें सभी समुदाय संतुष्ट $\frac{I}{\Delta Y}$ होगें तथा वे कम न ज्यादा उत्पादन करेंगे। तीसरा GN द्वारा प्राकृतिक व द्धि दर व्यक्त की है। इसे पूर्ण रोजगार दर तथा कल्याण इष्टतम भी कहा गया है।

वास्तविक व द्धि दर
(Actual Growth Rate)

हैरॅड का पहला समीकरण है GC=S, G = समय की दी हुई अवधि में वास्तविक व द्धि दर जो $\frac{\Delta Y}{Y}$ द्वारा व्यक्त की गई है, C=निवेश का आय में व द्धि से अनुपात के रूप में और के रूप में परिभाषित किया गया है और S=औसत बचत प्रव त्ति है अर्थात् S/Y। G के लिए $\frac{\Delta Y}{Y}$, C के लिए $\frac{I}{\Delta Y}$ और S के लिए $\frac{S}{Y}$ रखने के लिए ऊपर वाला समीकरण इस प्रकार बन सकता है।

$$\frac{\Delta y}{Y} \times \frac{I}{\Delta Y} = \frac{S}{Y}$$

या $\frac{I}{Y} = \frac{S}{Y}$

या = S=I

केन्ज की तरह हैरॅड भी बचत आय पर निर्भर करता है में विश्वास रखता है। लेकिन ऊपरी निवेश के बारे में उसकी धारणा अलग है। उसके अनुसार निवेश आय की व द्धि दर पर निर्भर करता है। जो त्वरण सिद्धांत के अलावा कुछ भी नहीं है।

अभीष्ट व द्धि दर
(Warranty Rate of Growth)

अभीष्ट व द्धि दर पर सभी उत्पादक संतुष्ट होगें। यह उन्नति की रेखा है। इस पर माँग इतनी ऊँची होती है कि जितने भे उत्पादन किया गया है सब बेच सकते हैं। ये उसी प्रतिशत व द्धि दर से लगातार उत्पादन करते रहेंगे। इस प्रकार यह सतत् व द्धि दर समीकरण है।

$$G_w \ C_r = S$$

GW = अभीष्ट व द्धि दर, C^r = अभीष्ट व द्धि दर को बनाए रखने के लिए पूँजी की आवश्यकता है अथवा मात्रा, S= जो तत्व पहले वर्जित किया गया पूर्ण रोजगार संतुलन व द्धि के लिए G (वास्तविक व द्धि दर), अभीष्ट व द्धि दर GW के बराबर होनी चाहिए जो अर्थव्यवस्था में सतत् उन्नति दे सकेगी और (वास्तविक) पूँजी वस्तुएँ, Cr (सतत् व द्धि के लिए आवश्यक पूँजी वस्तुएँ) बराबर होनी चाहिए। इस GW व द्धि आत्मधारित (Self-sustained) व द्धि की दर है तथा यदि अर्थव्यवस्था इस दर पर बढ़ती है तो यह संतुलन पथ पर चलेगी।

दीर्घकालीन असंतुलन
(Long Run Direquilibria)

यदि G और G^w बराबर नहीं है तो अर्थ-व्यवस्था असंतुलन में रहेगी। यदि GW से G बढ़ जाएगा तो C की कीमत CR से कम होगी तो अपर्याप्त वस्तुओं या उपकरणों के कारण कमियाँ उत्पन्न होंगी। ऐसी स्थिति दीर्घकालीन स्फीति लाती है। क्योंकि आय में व द्धि उससे अधिक दर में होती है। जितनी उत्पादकीय क्षमता में व द्धि होती है। दूसरे शब्दों में प्रभावी माँग कम होने से उत्पादन में गिरावट। यदि G, GW से कम है तो C>Cr इससे पूँजीगत वस्तुओं में कमी होगी। यह स्थिति दीर्घकालीन विस्फीति पैदा करेगी इसमें इच्छित निवेश बचत की अपेक्षा कम होगा। इससे उत्पादन, रोजगार और आय में कमी ओर दीर्घकालीन मंदी भी रहेगी।

हैरॅड का कहना है कि जब एक GW से G अलग हो जाता है तो यह संतुलन से दूर हो जाता है। यदि G>GW, इच्छित निवेश (Ex-ante- investment)> इच्छित बचत (ex-ante saving), इससे आगे फैलाव होगा। यदि दूसरी तरफ G<GW इच्छित निवेश इच्छित बचत से कम होगा। इससे निवेशक हतोत्साहित होगा तथा उत्पादन में व द्धि दर GW से नीचे रखेगा। यह आर्थिक व द्धि को निरूत्साहित करेगा।

प्राकृतिक व द्धि दर
(Natural Growth Rate)

इसको व द्धि की पूर्ण रोजगार दर अथवा व द्धि की सामान्य दर कहा गया है। हैरॅड के अनुसार यदि GW>Gn हो तो दीर्घकालीन गतिहीनता पैदा होती है ऐसी स्थिति में G>GW क्योंकि वास्तविक दर (G) पर उच्च सीमा प्राकृतिक दर (Gn) द्वारा लगाई जाती है। जब Gn>Gw है तो C>Gr और श्रम की कमी के कारण पूँजी पदार्थो का अधिक्य होता है। श्रम की कमी उत्पादन में व द्धि दर को GW से नीची रखती है। मशीनें बेकार हो जाती हैं और अतिरिक्त क्षमता नहीं पाई जाती है। इससे उत्पादन, निवेश, रोजगार व आय कम हो जाते हैं। इस प्रकार अर्थव्यवस्था मंदी की चपेट में आ जाती है। इसलिए हैरॅड ने कहा है हर अवस्था की अपनी समस्या या बुराई है।

मॉडलों की तुलना
(Comparison of the Models)

सबसे पहले देखते है इनकी समानता हैरॅड तथा डोमर दोनों ने अल्प-विकसित अर्थव्यवस्था सतत् व द्धि की जरूरतों के बारे में अध्ययन किया है। उन्होंने अधिक या कम एक जैसी मान्यताएँ ली हैं जो दूसरे मॉडलों से इनको अलग रखती हैं। दोनों मॉडलां में पूँजी को आर्थिक व द्धि की समस्या में अहम् माना है या केन्द्रित किया है। हैरॅड डोमर ने दी हुई पूँजी उत्पादन अनुपात पर बचत की औसत प्रव त्ति बचत की सीमांत प्रव त्ति के बराबर और बचत व निवेश की समानता व द्धि दर के संतुलन की शर्तों को संतुष्ट करती है।

Domar's Model

समानता
(Similarities)

$$\Delta I \frac{I}{\alpha} = I\sigma$$

$$\sigma = \frac{\Delta Y}{I} \text{ और } \alpha = \frac{\Delta S}{\Delta Y}$$

$$\therefore \ \Delta I \times \frac{I}{\frac{\Delta S}{\Delta Y}} = I \times \frac{\Delta Y}{I}$$

$$\textbf{or } \frac{\Delta Y \times \Delta I}{\Delta S} = \Delta Y$$

$$\Delta I \times \Delta Y = \Delta S \times \Delta Y$$

दोनों तरफ से विभाजित करते हुए

Harrod's Model

GC=S

$$\text{और } S = \frac{S}{Y}$$

$$= \frac{S}{Cr}, C = \frac{I}{\Delta Y}$$

$$\therefore \frac{\Delta Y}{Y} \times \frac{Y}{S} = \frac{\Delta Y}{I}$$

$$\text{or } \frac{\Delta Y}{S} = \frac{\Delta Y}{I}$$

$$\therefore S = I$$

हैरॅड के अनुसार यदि अर्थव्यवस्था अभिष्ट व द्धि दर से व द्धि करती है तो संतुलन की स्थिति होगी। डोमर की पूर्ण रोजगार व द्धि दर हैरॅड की अभिष्ट व द्धि दर के बराबर है।

हैरॅड की अभिष्ट व द्धि दर डोमर की $\alpha\sigma$ डोमर की हैरॅड की बचत (s) के बराबर है और डोमर की हैरॅड की Cr (के उल्टा) व्युत्क्रम (reciprocal) है। इसलिए दोनों की शर्तें आपस में मिलती हैं।

विभिन्नता
(Differences)

डोमर सीमांत पूंजी उत्पादकता तथा गुणाक के व्युत्क्रम (reciprocal) का प्रयोग करता है, हैरॅड सीमांत पूँजी उत्पादन तथा त्वरक (accelerator) का प्रयोग करता है। यह मानता है कि बचत आय का एक स्थिर हिस्सा है। डोमर निवेश की दोहरी प्रक्रिया पर बल देता है। परंतु हैरॅड आय के स्तर को व द्धि प्रक्रिया में सबसे महत्त्वपूर्ण मानता है हैरॅड बचत की माँग व पूर्ति को बराबर करता है हैरॅड निवेश की माँग व पूर्ति को।

डोमर का मॉडल एक व द्धि पर आधारित है (व द्धि दर= $\alpha\sigma$) लेकिन हैरॅड ने तीन व द्धि दरों का प्रयोग किया है; G(वास्तविक दर, GW (अभिष्ट दर) तथा Gn (प्राकृतिक दर)

हैरॅड व्यापार चक्र को व द्धि प्रक्रिया का अहम् हिस्सा है डोमर में नहीं। हैरॅड के मॉडल में उद्यमी के व्यवहार प्रक्रिया को मानता है कि यह निवेश प्रभावित करता है लेकिन इस तरह की कोई बात नहीं मानता।

हैरॅड-डोमर के सिद्धांत की समीक्षात्मक मूल्यांक
(Critical Evaluation of Harrod-Domar Model)

हैरॅड-डोमर का व द्धि सिद्धांत के क्षेत्र में योगदान के लिए हमेंशा याद किया जाएगा। लेकिन फिर भी इनके मॉडल की कुछ सीमाएँ हैं।

1. हैरॅड -डोमर का सिद्धांत पूँजी सिद्धांत की मान्यता पर आधारित है। दो उत्पादन के साधन-पूँजी व श्रम को स्थिर अनुपात में लिया जो अवास्तविक है। यदि श्रम व पूँजी विभिन्न दर पर बढ़ती है तो उन दोनों में से एक साधन का पूर्ण प्रयोग नही होगा।
2. पूँजी उत्पादन अनुपात व बचत प्रव त्ति स्थिर न रहकर परिवर्तित होते हैं। दीर्घकाल में दोनों बचत प्रव र्ति तथा पूँजी उत्पादन अनुपात में परिवर्तन होगा। खुद हैरॅड-डोमर ने भी इस बात को स्वीकार किया है कि इस समस्या का समाधान तथा चर के साथ संभव है
3. हैरॅड-डोमर ने तकनीक परिवर्तन के प्रभाव का कोई वर्णन नहीं किया जो वर्तमान समय की अहम् आवश्यकता है। क्योंकि तकनीकी परिवर्तन तेजी से बढ़ रहे हैं।
4. ब्याज दर स्थिर की मान्यता अवास्तविक तथा गैर-जरूरी है। यद्यपि निवेश संबंधित फैसले लेने से ब्याज की कोई भूमिका नहीं है लेकिन यह भी स्वीकार किया गया अति उत्पादन के दौरान ब्याज की दर में लोच से निवेश प्रभावित होगा तथ पूँजी की माँग बढ़ने से वस्तुओं की अधिक पूर्ति की समस्या का समाधान मिलेगा।
5. हैरॅड-डोमर के मॉडल में साधारण कीमत को स्थिर माना है लेकिन समय के साथ कीमत में परिवर्तन होता है क्या इन मॉडलों ने कीमत लोच में कोई रियायत दी है कीमत अस्थिर अवस्था को भी स्थिर कर सकती है।
6. हैरॅड-डोमर अपने सिद्धांत में एक ही प्रकार की वस्तु लेते हैं। इस बात की आलोचना की गई है कि वह उपभोक्ता वस्तुओं तथा पूँजीगत वस्तुओं में अंतर नही कर पाए।

अल्पविकसित देशों के लिए हैरॅडडोमर मॉडल की उपयोगिता (जरूरत)
(Relevance of the Harrod & Domar Models for Underdeveloped Countries)

प्रारम्भिक स्तर हैरॅड-डोमर मॉडल का प्रयोग विकसित देशों में द्वितीय युद्ध के बाद की स्थिति को काबू करने के लिए किया। लेकिन इनके लिए यह पूर्ण रूप से प्रयोग में नहीं हो पाया।

द्वितीय युद्ध के पश्चात एशिया, अफ्रीका में एक नई स्थिति जिसकी आशा नहीं की गई थी। उत्पन्त हो गई। आजादी मिलने के पश्चात् ये देश सतत् व द्धि के रास्ते पर चलना चाहते थे। अधिकतर देशों में तकनीक अभाव से अपनी अर्थव्यवस्था में एक सही व द्धि मॉडल को विकसित करने की क्षमता न होने पर उन्होंने पश्चिमी देशों की तरफ रूख किया। और इसके बदले उन्हें हैरॅड-डोमर का मॉडल प्राप्त हुआ। भारत ने भी पहली पंचवर्षीय योजना में इस मॉडल का प्रयोग किया। यद्यपि यह अल्प-विकसित देशों के लिए सही विकल्प साबित नही हो सका।

हर्षमैन ने इस मॉडल का समर्थन किया है। उसके कहा है कि डोमर का मॉडल किस दर पर व द्धि करनी चाहिए यह भी बताता है। हम कुछ साधारण गिनती से देख सकते हैं कि यह मॉडल अल्पविकसित अर्थव्यवस्था (देशों) में आर्थिक नियोजन बनाने में सहायक है। यह मान कर चलते हैं कि कुछ देश 4 प्रतिशत प्रतिवर्ष की व द्धि दर पर पूर्ण रोजगार की अवस्था प्राप्त कर सकते हैं। और इसको प्राप्त करने के पूँजी-उत्पादन अनुपात 3:1 इससे पूँजी की जरूरत के बारे में अंदाजा लगा सकते हैं।

डोमर के अनुसार

$\frac{\Delta Y}{Y} = 4$ प्रतिशत प्रति वर्ष and σ पूँजी-उत्पादन अनुपात का उल्टा (Reciprocal) 1:3, निवेश की दर की जरूरत होगी।

$$\frac{4}{100}\times 3=\alpha =12$$ प्रतिशत प्रतिवर्ष

हैरॅड ने यही परिणाम दिए हैं

हैरॅड के मॉडल में हम प्रयोग करते हैं

GW Cr = S

GW तथा Cr की कीमत को स्थापित करते हुए प्राप्त करते हैं।

$$\frac{4}{100}\times \frac{3}{I}=S=12$$ प्रतिशत प्रति वर्ष

इसका मतलब है कि दिए हुई पूँजी उत्पादन अनुपात 3:1 पर 4 प्रतिशत व द्धि दर के लिए बचत दर वार्षिक आय की 12 प्रतिशत होनी चाहिए।

यह साधारण गणना दिखाती है किसी देश में यदि GW और Capital-Output Ratio (पूँजी-उत्पादन अनुपात) दिए हुए हैं तो पूँजी की जरूरत के बारे में गणना कर सकते हैं लेकिन ऐसी अवस्था में निवेश का फैसला लेने वाले विरोध कर सकते हैं या फैसला कर सकते हैं कि इस व द्धि दर की देश को आवश्यकता है। यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है तो अल्पविकसित देशों वास्तविकता समझने में सहायता करने की बजाय रूकावट बन सकता है।

विकसित पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में बचत व निवेश एक दूसरे से स्वतन्त्र हैं। प्रतिव्यक्ति आय बचत की पूर्ति को निर्धारण करने का तरीका है। इस तरह के आर्थिक संगठनों में निवेश तथा बचत के बीच की समानता संतुलन निर्धारित करती है। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में स्थिति भिन्न है। बचत व निवेश एक दूसरे पर निर्भर करते हैं बचत, निवेश को निर्धारण करने का अहम् साधन है। क्योंकि आय बढ़ने पर जरूरी नहीं की बचत की दर भी बढ़े।

पूँजी-उत्पादन अनुपात का स्थिर होना विकसित देशों में संभव हो सकता है लेकिन अल्पविकसित देशों में क्षेत्रीय असमानता की वजह यह स्थिर न रहे।

हर्षमैन के मत से बचत प्रव त्ति तथा पूँजी-उत्पाद अनुपात विकसित देशों की बजाय अल्पविकसित देशों में कम महत्त्वपूर्ण हैं। यह इस बात का उल्लेख नहीं कर सका कि किस तरह का यन्त्र होना चाहिए तो अल्पविकसित अर्थव्यवस्था को विकास की तरफ ले जा सके।

अध्याय-18

नवक्लासिक के सिद्धांत की कैम्ब्रिज से आलोचना

(Cambridge Criticism of Neo-Classical Analysis of Growth)

1. कैम्बरीज अर्थशास्त्री मानते है कि कुल बचत अनुपात आय के वितरण पर निर्भर करता है। कॉलडर का मानना है कि बचत में मजदूरी की बजाय लाभ का ज्यादा हिस्सा है। दूसरी तरफ नव-परम्परावादी मानते है कि कुल बचत-अनुपात आय के वितरण से स्वतन्त्र है अथवा निर्भर नहीं है। अधिकतर नव-परम्परावादी अर्थशास्त्री साधारण बचत नियम को नहीं मानते उनका तर्क है कि कोई भी अपनी उपयोगिता बढ़ाने के लिए बचत करता है। इस बात के लिए दोनों विचारों के बीच बड़ा अंतर है। नवपरम्परावादीयों ने कहा है। सिद्धांत (आर्थिक सिद्धांत Rational Behaviour) से पनपता है कैम्ब्रिज अर्थशास्त्रीयों का मानना है कि अपूर्ण प्रतियोगिता तथा अनिश्चितता की अवस्था मे निजी व्यक्ति इतने सक्षम नहीं होते की नियम का प्रयोग करें। इसलिए सबसे महत्त्वूपर्ण है क्रियात्मक व्यवहारिक मॉडल बनाया जाए जिसमें निजी व्यक्ति नियम के अनुसार व्यवहार करे और इससे लाभ का कुछ हिस्सा बचत बने।
2. कैम्ब्रिज अर्थशास्त्रीयों ने नवपरम्परावादी अर्थशास्त्रीयों के उत्पादन फलन का विरोध किया है। उन्होंने कुल पूँजी (Capital Aggregate) तत्त्व का विरोध किया है। पूँजी में विभिन्न प्रकार की मशीनें शमिल है। जिसमें उनकी अपनी श्रम व कच्चे माल की जरूरत और हर एक मशीन विभिन्न वस्तुएँ उत्पादित करने के लिए प्रयोग की जाती हैं। इसलिए ऐसा कोई रास्ता नहीं है जिसमे इन मशीनों को जोड़ा (Aggregate) जाए। साधारण तौर पर अधिकतर नव परम्परावादी मानने के लिए तैयार हो जाए कि इस मशीनों को इकट्ठा कैसे जोड़ा जाए। सोलो के अनुसार सम्पूर्ण उत्पादन फलन अर्थव्यवस्था के ऊपर लागू करना न्यायपूर्ण नहीं है क्योंकि उन्होंने खुद कहा है कि $Q=t\,(L,C)$ का अभिप्राय है कि C को एक भौतिक पूँजी वस्तु लिया है इसलिए यह संभव नहीं है कि एक ही तरह की पूँजी वस्तु मौजूद होगी इसलिए यह कहना आसान है कि एक ही तरह की भौतिक वस्तु मौजूद है। जिसको पूँजी मे मापा जाए या उपभोग कर लिया जाए।
3. कैम्ब्रिज मॉडल में निवेश निर्धारित करने का सिद्धांत केन्जियम प्रव त्ति का है अथवा इसको माना गया है। किसी समय निवेश का स्तर स्थिर है; इस समय मौद्रिक तथा राजकोषीय नीति में परिवर्तन से निवेश की लोच नकारात्मक रही हो (प्रभावहीन रही हो) निवेश का निर्धारिण वर्तमान संचय व उद्यमी की आधारभूत आशाओं पर निर्भर करता है। यह जानना (पता) लगाना मुश्किल है कि कैसे उद्यमी अपनी आशाओं को बनाते हैं और इसलिए निवेश का निर्धारण करना आसान नही है। जब यह प्रश्न स्थिर हो जाता है तो, कैम्ब्रिज के विचार से अर्थव्यवस्था आय में परिवर्तन करते हुए दीर्घकाल में पूर्ण रोजगार या पूर्ण रोजगार के नजदीक पहुँचेगी। श्रमिक पूँजीपतियों की अपेक्षा अपनी आय का ज्यादा हिस्सा का उपभोग करेंगे। यदि आय वितरण को श्रमिक के पक्ष में बदल दिए जाए तो, ऐसी अवस्था तभी संभव है जब निवेश मात्रा भी कम है। लेकिन सभी परिस्थितियों के मौजूद रहते हुए यदि निवेश ज्यादा हे तो पूर्ण रोजगार स्थापित हो सकता है। यह अवस्था कैम्ब्रिज के मॉडल में विभिन्न बचत प्रव त्तियों के महत्त्व के बारे में बताती है।
4. दोनों सिद्धांतों के बीच चौथा अंतर है निवेश फलन। नव-परम्परावादी मॉडल में यह तर्क नहीं है। दी हुई श्रम शक्ति पर उत्पादन स्तर में पूर्ण रोजगार स्थिति है। उत्पादन का (S) बचत है पूर्ण रोजगार स्थापित करने के लिए निवेश

की आवश्यकता रहती है। मौद्रिक तथा राजकोषीय नीति द्वारा सरकार निर्णय लेती है कि निवेश का यह स्तर स्थापित किया जाए।

5. उपरोक्त बातों से पता चलता है कि कैम्ब्रिज मॉडल में विभिन्न बचत प्रव त्तियों के साथ पूर्ण रोजगार आय के वितरण को निर्धारित करता है। उदाहरण के तौर पर कैम्ब्रिज के मॉडल में यदि श्रमिक सारी आय उपभोग पर खर्च करते हैं (बचत=शुन्य) जबकि पूँजीपति अपने लाभ का कुछ हिस्सा बचाते हैं, तो श्रम को पूर्ण रोजगार और श्रम सतत् अवस्था में n दर से बढ़ रही हैं और पूंजी भी n दर से बढ़ रही है। तकनीक का चुनाव-यदि कोई तकनीक उपलब्ध है तो उसका प्रयोग लागत कम करने तथा उसका चुनाव पूँजी का सीमांत उत्पादन तथा ब्याज की दर को बराबर करने के लिए किया जाएगा।

नवपरम्परावादी मॉडल में आय वितरण लधु तथा दीर्घकालीन संतुलन स्थापित (निर्धारित) करने में कोई भूमिका अदा नहीं करता। सोलो के मॉडल में दीर्घकालीन में बचत दर व द्धि दर से विभाजित करने के बाद पूँजी-उत्पादन अनुपात के बराबर होनी चाहिए। पूँजी-उत्पादन अनुपात= पूँजी का सीमांत उत्पाद तथा श्रम का सीमांत उत्पाद। यदि पूँजी उत्पाद अनुपात जयादा है, तो पूंजी का सीमांत उत्पादन कम व श्रम की अपेक्षा ज्यादा होगा। और साधन (तत्त्व) कीमत सीमांत उत्पादन के बराबर होगी। इस तरह से आय का वितरण निर्धारित होगा।

यह भी विचार-विमर्श का मुद्दा है कि सीमांत उत्पादन लाभ निर्धारित करता है या लाभ दर पूँजी की सीमांत उत्पादकत। को निर्धारित करते है। Stiglitz और Uzawa ने कहा है कि कैम्ब्रिज के मॉडल मे मजदूरी से कुछ बचत की गई है इसलिए वितरण व सीमांत उत्पादन साथ-साथ निर्धारित होंगे। नव-परम्परावादी में भी यही कहा गया है यदि मजदूरी से और लाभ से बचत की दर में थोड़ा अंतर है तो दोनों वितरण व सीमांत उत्पादन एक समय निर्धारित होंगें। कैम्ब्रिज अर्थशास्त्रीयों ने नव-परम्परावादी के वितरण सिद्धांत पर जो सीमांत उत्पादन पर निर्भर पर विरोध किया है क्योंकि सीमांत उत्पादन का तकनीक के साथ ध्यान में रखकर वर्णन नहीं किया। क्योंकि यदि कोई व्यक्ति एक मशीन या कुछ मशीनों के साथ काम कर रहा है तो यह व्याख्या करना महत्त्वपूर्ण है लेकिन यदि मशीनों की अधिकता है या अधिक तकनीक उपलब्ध है तो समस्या उत्पन्न नहीं होती।

UNIT-3

अध्याय-19
औद्योगिकरण और कृषि
(Industrilization and Agriculture)

अधिकतर पश्चिमी अर्थशास्त्री कृषि को अल्पविकास ओर उद्योग को विकास के साथ जोड़कर चलते हैं। यह एक तथ्य है कि अधिकतर अल्प-विकसित देश कृषि पर और विकसित देश औद्यगिकरण पर निर्भर करते हैं। अधिकतर राष्ट्रों का आर्थिक इतिहास बताता है कि आर्थिक विकास के साथ राष्ट्रीय आय में कृषि का भाग कम तथा उद्योगों का भाग बढ़ता है। इसलिए औद्योगिकरण को आर्थिक विकास का अहम् कारक माना है। अधिकतर अर्थशास्त्रियों का तर्क है कि यदि अल्पविकसित देश आर्थिक विकास के बारे गंभीर है तो इसे औद्योगिकरण के कार्यक्रम आरम्भ करने चाहिए।

आर्थिक विकास में कृषि की भूमिका
(Role of Agriculture in Economics Development)

औद्योगिकरण की इच्छा रखते हुए, बहुत (अधिकतर) अल्पविकसित देश कृषि पर निर्भर करते हैं। उदाहरण के तौर पर योजनाओं के 48 साल बाद भी, कृषि का 1988-89 में (1993-94) की कीमतों पर साधन लागत पर सकल घरेलु उत्पाद का 29.2 प्रतिशत का योगदान रहा। भारत में 1997 में कार्यशील जनसंख्या का 61 प्रतिशत कृषि में संलगन था। उस वर्ष पाकिस्तान में 48 प्रतिशत, चीन में 69 प्रतिशत और बंगलादेश में 59 प्रतिशत था, इसके विपरित, विकसित देशों में क्रियाशील जनसंख्या का प्रतिशत योगदान कृषि में बहुत कम है। 1997 में क्रियाशील जनसंख्या का कृषि में संलगन, जापान में 5 प्रतिशत, फ्रांस में 4 प्रतिशत था। यह अनुपात अमरीका और संयुक्त राष्ट्र में बहुत कम था, जो कृषि क्षेत्र क्रियाशील जनसंख्या केवल 2 प्रतिशत थी।

अत्यधिक जनसंख्या वाले अल्पविकसित देश जैसे भारत, पाकिस्तान, इंडोनेशिया, चीन इत्यादि का कृषि पर अधिक निर्भरता से आर्थिक विकास में कृषि का योगदान अपने आप में महत्त्वपूर्ण है। वास्तव में, अल्पविकसित अपनी इच्छा से ही कृषि को अनदेखा कर सकते हैं। कुछ समय पहले अर्थशास्त्री महसूस करते हैं विकास की समस्या आद्योगिकरण की समस्या है। इन्होंने तर्क दिया है कि जो अल्पविकसित देश अपने लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाना चाहते हैं, उनके लिए औद्योगिकरण ही प्रमुख आशा है। लेकिन अब स्थिति भिन्न है। अधिकतर देशों का अनुभव बताता है अत्यधिक जनसंख्या वाले अल्पविकसित देशों में कृषि विकास के बिना औद्योगिकरण वस्तुओं की खपत पूरी नहीं कर सकता। अधिकतर अल्पविकसित देश कृषि पर अधिक निर्भर करते हैं, धीरे-धीरे बढ़ने वाले कृषि क्षेत्र आर्थिक विकास में गंभीर रूकावट है। इससे आर्थिक व द्धि दर प्रभावी दर से कमी आएगी। इन देशों का अनुभव यह भी बताता है कि कृषि क्षेत्र के बावजूद औद्योगिकरण क्षेत्र भी तेज गति से रोजगार में व द्धि नहीं कर सका। यह दिखाता है कि औद्योगिकरण भी बेरोजगार की समस्या को खत्म नहीं कर पाया। इसलिए रोजगार की समस्या को खत्म नहीं कर पाया। इसलिए रोजगार की समस्या दूर करने के लिए केवल औद्योगिकरण पर ही निर्भर रहना उचित नहीं है।

अर्थशास्त्री, जिन्होंने औद्योगिकरण को आर्थिक विकास की समस्याओं को मसीहा के रूप में प्रस्तुत किया था, उनके अनुसार बड़े पैमाने पर शहरी औद्योगिकरण कार्यक्रम के लिए ग्रामीण श्रम को शहरी क्षेत्र में स्थानान्तरण करने से यह इसके लिए आधार तैयार करने में सहायक हो सकती है। इस तरह के कार्यक्रम जो ग्रामीण श्रम को शहरी में स्थानान्तरण की बात करते है उसमें काफी कमियाँ हैं- (1) बड़े पैमाने पर देश के एक क्षेत्र में बहुत बड़ा संरचनात्मक परिवर्तन है जिसको आसानी से लागू

नहीं किया जा सकता। अर्थशास्त्री जो इस तरह के हस्तांतरण के प्रति गंभीर है या इसकी वकालत करते हैं वे समय, कोशिश (प्रयत्न) और साधन जो नौकरी प्रदान करते हैं उसको Underestimate (अल्प-अंदाजा अथवा माप) करते हैं। (2) श्रम का स्थानान्तरण मजदूरी वस्तुओं खासतौर पर भोजन के साथ होना चाहिए। इसमें सबसे, बड़ी कठिनाई ये है कि जो लोग कृषि (ग्रामीण) पर निर्भर रहेंगे उनका उपयोग स्तर कम होगा तथा जो उद्योग में (शहरी क्षेत्र) में हस्तांतरित हो जाएँगे उनका उपयोग स्तर बढ़ जाएगा जिससे भोजन (खाद्यान्न) के बाजार अतिरेक में कमी आएगी। यदि इस तरह की स्थिति उत्पन्न होगी तो, नई औद्योगिकरण श्रय के लिए खाद्यान्न उपलब्ध नहीं होंगे। (3) जो अर्थशास्त्री ग्रामीण क्षेत्र से शहरी क्षेत्र में श्रम स्थानान्तरण की बात करते हैं। उनका मानना है कि कृषि में श्रम की सीमांत उत्पादकता शून्य है। यह विचार संदिग्ध है। क्योंकि जिन देशों में जनसंक्ष्या घनत्व ज्यादा है। इसका मतलब यह नहीं है कि श्रम की सीमांत उत्पादकता शून्य हो सकती है। ऐसे हालात में, ग्रामीण क्षेत्र से शहरी क्षेत्र में जनसंख्या स्थानान्तरण से कृषि उत्पादन प्रभावित होगा, जिससे खाद्याान्न उत्पादन में कमी आएगी। अन्त में जो ग्रामीण श्रम शहरों में स्थानान्तिरत होती है, वह सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओं का सामना करती है। ग ह-सुविध् ााएँ पूर्ण रूप से उपलब्ध न होने पर यह (Slums) में रहते जहाँ रहने की हालत (रहने के साधन) अमानवीय काम कम होते हैं। जिससे इस तरह के माहौल में स्वास्थ्य संबंधित बिमारियों का सामना करना पड़ता है। हस्तांतरित (Migrant) लोग आमतौर पर शहरों में अकेले आते हैं जहाँ वे नए माहौल में अपने आप Adjust करने में कठिनाई महसूस करते हैं और इस स्थानान्तरण की वजह से उनका परिवार भी परेशान रहता है। चिन्ताएँ व परेशानियाँ शहरों में तेज भागती जिन्दगी से जीवन में कुंठा तथा बहुत सी सामाजिक बुराईयां जगह ले लेती है।

कृषि की आर्थिक विकास प्रक्रिया में कई (विभिन्न) कारणों से सहायता
(Agriculture Helps the Process of Economics Development in Various Ways)

1. **बढ़ी हुई जनसंख्या के लिए खाद्यान्न अतिरेक की उपलब्धता (Provision of Food Surplus to the expanding Population)** :- अल्पविकसित देशों में जनसंख्या का अधिक दबाव तथा इसके बढ़ने से खाद्यान्न की माँग लगातार बढ़ रही है। इन देशों में उपलब्ध खाद्यान्न उपभोग कम है तथा प्रति व्यक्ति आय में थोड़ी सी व द्धि होने पर खाद्यान्न की माँग तेजी से बढ़ती है। (दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि अल्प विकसित देशों में खाद्यान्न के लिए मांग की आय लोच ज्यादा है)। खाद्याान्न (भोजन) के लिए माँग में वार्षिक व द्धि पर क्यों बताया गया है, D = P +mg जहाँ P और g जनसंख्या व द्धि दर और प्रति व्यक्ति आय, m को कृषि पदार्थों के लिए (उत्पादों के लिए) माँग की आय लोच के रूप में दिखाया है। यदि m व g की तुलना विकसित देशों के साथ की जाए तो ये दोनों अल्पविकसित देशों में ज्यादा तथा विकसित देशों में कम है। अल्पविकसित देशों में P 1.5 प्रतिशत से 3 प्रतिशत के बीच रहती है। यह दिखाता है कि केवल इसी तत्व (Factor) पर अथवा इसके प्रभाव से ही खाद्यान्न (भोजन) की माँग बढ़ती है। अल्पविकसित देशों में जनसंख्या व द्धि का कारण म त्यु दर में कमी होना भी है। (इसका कारण सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार चिकित्सा क्षेत्र में उन्नति और दवाइयों की उपलब्धता) अल्प विकसित देशों में खाद्याान्न के लिए माँग की आय लोच 0.6 या इससे ज्यादा (इसका अभिप्राय 60 प्रतिशत या इससे ज्यादा आय का बढ़ा हुआ हिस्सा केवल खाद्याान्न के उपभोग पर खर्च जबकि विकसित देशों में यह 0.2 से 0.3 के बीच है।)

   यह बताता है कि जब तक कृषि खाद्यान्न की बाजार अतिरेक बढ़ाने के योग्य नहीं है तो, इसका संकट पैदा हो जाएगा। बहुत से अल्पविकसित देश इन समस्याओं से जूझ रहे हैं और इसकी पूर्ति के लिए खाद्यान्न का काफी मात्रा में आयात करने को मजबूर है। इस प्रकार के आय भुगतान संतुलन की कठिनाई पैदा करते हैं जिससे विदेश विनिमय का गंभीर संकट पैदा होता है। इस समस्या को देखते इस देश पूँजीगत वस्तुओं व मशीनरी का आयात में कटौती करते हैं जो औद्योगिक विकास की प्रक्रिया को प्रभावित करती है।

   अल्पविकसित देश खाद्याान्न का आयात करते हैं। विकसित देशों से उनकों राजनीतिक हस्तक्षेप भी सहन करना पड़ता है। उदाहरण के तौर पर भारत ने पी॰एल॰ 480 के तहत अमरीका से खाद्यान्न का भारी मात्रा में आयात किया था। इस खाद्यान्न सहायता से अमरीका ने भारत को कई अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक मुद्दों, जैसे अमरीका का वियतनामा के प्रति गुस्सा आदि के लिए भारत पर दबाव डालकर एक राजनैतिक हथियार के रूप में प्रयोग किया। जब भारत ने मना कर दिया तो, पी॰एल॰ 480 को वापिस ले लिया। दूसरा, खाद्यान्न के आयात पर निर्भर रहने से कृषि प्रगति के प्रोत्साहन भी कमजोर पड़ते हैं।

2. **पूँजी निर्माण में योगदान** (Contribution to Capital Formation) – पूँजी निर्माण का विकास में अहम् योगदान है। जब तक पूँजी निर्माण का सम्पूर्ण स्तर नहीं बढ़ेगा आर्थिक विकास संभव नहीं है या इसे प्राप्त नहीं किया जा सकता। अल्पविकसित देशों में कृषि को सबसे बड़ा उद्योग माना जाता है। यह पूँजी निर्माण की दर को बढ़ाने के लिए अहम् योगदान कर सकती है। यदि यह ऐसा करने में असफल रहती है तो इससे आर्थिक विकास बाधित होगा। यही कारण था कम्यूनिस्ट देश जैसे सोवियत यूनियन व चीन ने अतिरिक्त निवेश के लिए कृषि को अहम् (अतिरेक उत्पादन को स्थान दिया उदाहरण के तौर पर सोवियत यूनियन ने कृषि अतिरेक को कम कीमत पर लेकर औद्योगिक विकास के लिए प्रयोग किया। चीन ने कृषि अत्यधिक निवेश अतिरेक व अत्यधिक श्रम निकालकर औद्योगिक विकास के लिए प्रयोग किया। वर्तमान स्थिति में, इस तरह का कदम वह भी एक प्रजातंत्र देश में ग्रामीण समुदाय को संगठित करना आसान नहीं है। हाँलाकि इस तरह का कार्य मुश्किल है। कृषि से अतिरेक निकालने के लिए विभिन्न नीतियाँ बनाई जा सकती है। (1) कृषि से अकृषि क्षेत्रों में श्रम व पूँजी का हस्तांतरण (2) कृषि के ऊपर कर लगाना जिससे सरकार से भार कम होकर कृषि पर पड़े (3) व्यापार शर्तें कृषि के विरूद्ध जैसे- कृषि उत्पादों की कीमत नियंत्रण, कर या विभिन्न विनिमय दर प्रयोग करना, जो कृषि के विरूद्ध पक्षपात करेगी। यद्यपि अल्पविकसित देशों में इस तरह की नीतियाँ लागू करना मुश्किल है। इसलिए कृषि अतिरेक उपलब्ध करने का मतलब है कृषि उत्पादकता में व द्धि।

3. **बढ़ी हुई जनसंख्या के लिए उत्पादित रोजगार प्रदान करना** (Providing Productive Employment for Growing Population) - अत्यधिक जनसंख्या वाले देश जैसे भारत में केवल कृषि क्षेत्र ही बढ़ी हुई जनसंख्या को रोजगार प्रदान कर सकता है। यह स्पष्ट है कि इन देशों में औद्योगिक विकास की प्रक्रिया इतना रोजगार प्रदान नहीं कर सकती क्योंकि इन देशों में रोजगार की व द्धि दर बहुत कम है (थोड़ी है)। इसके बावजूद बनावटी क्षेत्र (Manufacturing Sector) भी इतना छोटा है कि इस ओर कोई योगदान नहीं कर सकता। इसलिए अल्पविकसित देशों में ग्रामीण लोगों जो अधिक मात्रा में हैं उनका रोजगार का साधन केवल कृषि क्षेत्र में ही मिल सकता है। श्रम को सीधे तौर पर खेतों में या घरेलु और लघु उद्योगों में रोजगार प्रदान किया जा सकता है। Off Season के दौरान (जब श्रम कृषि क्षेत्र में संलग्न न हो), इन देशों की सरकार बड़े स्तर पर सार्वजनिक कार्यों को करवाने के बारे में सोच सकती है जिससे रोजगार में व द्धि के साथ-साथ लोगों की आर्थिक स्थिति में भी सुधार हो, उदाहरण के तौर पर सड़क निर्माण, स्कूल भवन, सिंचाई नहरे, कुएँ, ग ह और सामुदायिक केन्द्र आदि आरम्भ कर सकते हैं।

4. **उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध करना** (Providing Raw Material to Industries) - कृषि क्षेत्र उद्योगों को राष्ट्रीय उत्पाद के लिए कच्चा माल प्रदान करती है। चीनी उद्योग, जूट उद्योग, सूती कपड़ा उद्योग, वनस्पति उद्योग कुछ उदाहरण हैं जो अपने विकास के लिए कृषि पर निर्भर हैं। साथ-साथ खाद्यान प्रक्रिया उद्योग भी कृषि पर निर्भर करते हैं। इसलिए, जब तक कृषि विकसित नहीं होगी, ये उद्योग पिछड़े रहेंगे।

5. **औद्योगिक उत्पादों के लिए बाजार** (Market For Industrial Products) - अल्पविकसित देशों की अधिकतर जनसंख्या गाँव में निवास करती हैं, इसलिए ग्रामीण उपभोग बढ़ाने से औद्योगिक विकास के लिए एक बहुत बड़ी सहायता है। इस बिन्दु पर नकर्से ने भी तर्क दिया है। "सबसे बड़ी समस्या है कि देश में मशीनीकरण उत्पादों के लिए उपयुक्त मात्रा में बाजार उपलब्ध नहीं है क्योंकि जनसंख्या का अधिकतर भाग गरीब है, क्रय शक्ति कम है और वे आय कम होने की वजह से उद्योग उत्पाद खरीदने में असमर्थ है। पहले से खरीदी हुई वस्तुओं में कुछ और नया जोड़ने में भी असमर्थ है तो वास्तिविक क्रय शक्ति क्रम क्षेत्र में उत्पादकता का कम होना है। इसलिए यदि कृषि क्षेत्र में उत्पादन या उत्पादकता को बढ़ाने के लिए कदम उठाएँ तो औद्योगिक अत्पादों की माँग बढ़ेगी और ओद्यौगिक विकास की प्रक्रिया को बढ़ावा मिलेगा। दूसरी तरफ, यदि केवल ओद्यौगिक क्षेत्र को या इसके विकास को महत्त्व दिया जाए और कृषि का पूर्ण रूप से नकार दिया जाए तो माँग की कमी ओद्यौगिक क्षेत्र की व द्धि में रूकावट बनेगी।

6. **उद्योगों का श्रय की पूर्ति के लिए आश्वासन** (Ensuring Supply of Labour to Industry) - कृषि श्रम की पूर्ति के लिए आश्वस्त करके, औद्योगिक विकास को बढ़ाने में योगदान देती है। उद्योगों का विकास तथा दूसरा कोई भी क्षेत्र का फैलाव कृषि क्षेत्र से श्रम की उपलब्धता पर निर्भर करता है क्योंकि श्रम की पूर्ति के लिए दूसरा कोई साधन उपलब्ध नहीं है। नितियों को मिलाकर यदि कोई नीति अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में अपनाई जाए तो कृषि में विकास अथवा उत्पादकता बढ़ाने के लिए बहुत संभावना है। यदि कृषि उत्पादकता में व द्धि होती तो देश में

जनसंख्या को खाद्यान्न उपलब्ध करने के लिए कम लोगों की आवश्यकता होगी तथा इससे फालतू (Extra) श्रम औद्योगिक क्षेत्र में काम करने के लिए स्थान्नतरित हो सकती है। गाँव से शहरों की तरफ जनसंख्या का स्थानान्तर होने पर श्रम की सीमांत उत्पादकता पढ़ेगी, इससे अर्थव्यवस्था में श्रम साधनों का वितरण सही रूप से होगा।

7. **देश के लिए विदेशी विनिमय कमाना (प्राप्त करना) (Earning Forign Exchange for Country)** - अधिकतर अल्पविकसित देश प्राथमिक उत्पादनों का निर्यात करते हैं जो कुल निर्यात का 60 से 70 प्रतिशत है। इसलिए ओद्यौगिक विकास के लिए पूँजीगत वस्तुएँ व मशीनरी का आयात कृषि क्षेत्र के निर्यात से होने वाली आय पर निर्भर करता है। यदि कृषि क्षेत्र में कृषि वस्तुओं के निर्यात को बढ़ाने में असफल रहने से भुगतान संतुलन में घाटा होने से विदेशी विनिमय कर समस्या उत्पन्न होगी। यद्यपि प्राथमिक वस्तुओं की अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में कीमत कम होने पर इनसे प्राप्त होने वाली आय काफी कम है। इस कारण की वजह अल्पविकसित देश जैसे, भारत बनी हुई वस्तुओं का निर्यात बढ़ाने के उपाय करते हैं जो कि योजनाओं के प्रारम्भिक समय में इस तरह के संरक्षित उपाय किये गए है। इसलिए हम कह सकते हैं कि एक अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में कृषि को अहम् स्थान देकर अथवा उसका विकास करके ओद्यौगिक उन्नति के लिए भी रास्ते खोल सकते हैं।

आर्थिक विकास में उद्योग की भूमिका
(Role of Industry in Economic Development)

ओद्यौगिकरए को दो विभिन्न शब्दों में विभाजित किया गया है। संकुचित अर्थ में इसका अभिप्राय है उत्पादन के साधनों के उत्पादन की स्थापना तथा विकास। विशाल तौर पर इसका अभिप्राय है औद्योगिकरण Revolution को पूरा करना तथा अर्थव्यवस्था को उत्पादन के ओद्यौगिकरण तरीकों पर स्थानान्त्रित करना। यदि इस अभिप्राय को दोनो को साथ लिया जाए तो ओद्यौगिकरण का अभिप्राय है उत्पादन के साधनों का उत्पादन के लिए बड़े उद्योगों की स्थापना करना और जब समुचित ओद्यौगिकरण क्षमता बन जाए जो सम्पर्क अर्थव्यवस्थाओं उत्पादन के औद्योगिक तरीकों पर हस्तान्तरण किया जाए। इन दोनों अर्थों का मतलब है ओद्यौगिकरण की प्रारम्भिक व आखिरी सीढ़ी। औद्योगिकरण का पहला विचार जो आर्थिक विकास से संबंधित है उसका जन्म रूस में हुआ। Shitokov के अनुसार जब सोवियत संघ ने ओद्यौगिकरण की प्रक्रिया आरंभ की तो उसमें ओद्यौगिक क्षमता जैसे कुछ हल्के व भारी उद्योग, यातायात व संचार, कुशल श्रमिक व तकनीकि ज्ञान शामिल थे। इसके विपरित, अल्पविकसित देशों में वर्तमान समय में इनकी स्थिति भिन्न है । उनमें से अधिकतर छोटी और उनके घरेलु बाजार भी सीमित है। इसके साथ उनके सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र भी पिछड़े हैं और बड़े पैमाने पर ओद्योगिकरण कार्यक्रम के लिए उपयुक्त नहीं है। इस संदर्भ में ओद्योगिकरण की अर्थपूर्ण परिभाषा इस प्रकार दी गई है- ओद्यौगिकरण आर्थिक विकास का एक तरीका है जिसमें साधनों का बड़ा हिस्सा तकनीकि ज्ञान को सही (सम्पूर्ण) करने के लिए प्रयोग किया जाता है राष्ट्रीय उद्योगों को विकेन्द्रित कर अर्थव्यवस्था के लिए ऊँची व द्धि दर प्राप्त करने के लिए योग्य बनाना और सामाजिक व आर्थिक पिछड़पन को काबू करना अथवा नियंत्रित करना। शायद अल्पविकसित देशों के विचार से यही उपयुक्त परिभाषा है और ओद्योगिकरण की भूमिका सामाजिक व आर्थिक ढाँचे में परिवर्तन करने के लिए योगदान कर सके ।

ऊपर वर्णित परिभाषा, साफतौर पर ओद्यौगिकरण की महत्वता के बारे में वर्णन करती है। इस परिभाषा के अन्तर्गत अल्पविकसित देशों में ओद्यौगिकरण के महत्त्व सामाजिक व आर्थिक ढाँचा पिछडा, असंतुलित अर्थव्यवस्था आदि के बारे में वर्णन करती है। इसलिए विकसित देशों में ओद्यौगिकरण कार्यक्रमों को बदलकर दोबारा संगठित करना चाहिए। अधिकतर ये देश ओद्यौगिकरण को आर्थिक विकास व सामाजिक परिवर्तन का सूचक मानते हैं। एक राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पर ओद्यौगिकरण के काफी प्रभाव हो सकते हैं। जिनको कई भागों में बाँटा गया है। (1) अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन (2) कृषि विकास पर लाभकारी प्रभाव (3) प्रति व्यक्ति आय में व द्धि (4) व्यापार के Pattern (स्तर) में परिवर्तन (5) सामाजिक ढाँचे में परिवर्तन।

1. **अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन (Structural Changes of the Economy)** - ओद्यौगिकरण से अर्थव्यवस्था में सबसे महत्त्वपूर्ण संरचनात्मक परिवर्तन व्यवसायिक ढाँचा (तरीका) में परिवर्तन है। अधिकतर अल्पविकसित देशों की विशेषत है कि वे कृषि पर अधिक निर्भर करते हैं। इस क्षेत्र में आय कम होने की वजह से इन देशों की अर्थव्यवस्था स्थिर व पिछड़ी रहती है। ओद्योगिकरण ओद्यौगिक क्षेत्र में रोजगार के साधन उपलब्ध कर (रास्ते खोलकर)

व्यवसायिक वितरण में परिवर्तन लाती हैं। इससे कृषि पर से जनसंख्या का दबाव कम होता है और छिपी बेरोजगारी से पीड़ित व्यक्ति जो कृषि में जीवन निर्वाह मजदूरी कमाते हैं, उद्योगों में चले जाएँगे यहाँ आय भी ज्यादा है और उन्नति के अवसर भी ज्यादा हैं। इसलिए ओद्योगिकरण अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में स्थिर अवस्था को तोड़कर गत्यात्मक की तरफ बढ़ने में सहायता करता है।

2. **कृषि विकास पर लाभकारी प्रभाव** (**Beneficial Effect on Agricultural Development**) - ओद्यौगिकरण कृषि व द्धि के स्तर को बढ़ाने में काफी मदद करता है। विकसित देशों का आर्थिक इतिहास दर्शाता है कि आर्थिक विकास के साथ कृषि विकास काफी लाभकारी रहा है। मजदूरी में व द्धि होने पर खाद्यान्न वस्तुओं की माँग बढ़ेगी जिसमें भोजन महत्त्वपूर्ण है। इस वजह से कृषि उत्पादों को बाजार उपलब्ध होने की वजह से कृषि में जीवन निर्वाह की प्रव त्ति को तोड़ने में मदद मिलेगी। नकद फसलों का उत्पादन बढ़ेगा तथा कृषि संबंधि उद्योगों को प्रोत्साहन मिलेगा, इससे ग्रामीण तथा शहरी अर्थव्यवस्थाओं को जुड़ने का मौका मिलेगा। ओद्यौगिकरण भी कृषि मजदूरों के लिए उपभोक्ता वस्तुएँ उपलब्ध कराएगा, जिससे माँग में व द्धि होने पर उनकी आवश्यकताओं का स्तर बढ़ेगा और उद्योग क्षेत्र में उत्पादन-प्रयत्नों को बढ़ावा मिलेगा। बड़े पैमाने पर मशीनीकरण को आधार बनाकर कृषि को संगठित कर, ओद्यौगिकरण इस तरह का आधार तैयार करता है जो कृषि में उत्पादकता बढ़ाने में सकारात्मक भूमिका अदा कर सके।

3. **प्रति व्यक्ति आय में व द्धि** (**Rise Per Capital Income**) - विकसित देशों में ओद्यौगिकरण ज्यादा तथा अल्पविकसित देशों में ओद्यौगिकरण इतना ज्यादा विकसित नहीं है। विकसित देशों का इतिहास बताता है कि ओद्यौगिकरण से राष्ट्रीय आय में उद्योग का हिस्सा बढ़ा है। दूसरे शब्दों में कह सकते है कि ओद्यौगिकरण से राष्ट्रीय तथा प्रति व्यक्ति आय में व द्धि हुई है। ओद्यौगिकरण को बढ़ावा मिलने पर रोजगार के अवसरों में व द्धि होगी। इस की वजह आय का स्तर बढ़ने पर प्रति व्यक्ति आय में भी व द्धि होगी। Chenery और Taylor का अध्ययन बताता है कि बड़े अल्पविकसित देश (जैसे-भारत) और थोड़े उद्योगों से संबंध रखने वाले, उद्योगों को प्रोत्साहन देकर उचित लाभ कमा सकते हैं और अर्थव्यवस्था को विकसित अर्थव्यवस्था की तरफ मोड़कर उसका रूख बदल सकते हैं।

4. **व्यापार के स्तर में परिवर्तन** (**Changes in Pattern of Trade**) - अल्पविकसित देशों में प्राथमिक वस्तुओं का व्यापार अधिक मात्रा में होता है। इन देशों में निर्यात प्राथमिक वस्तुएँ तथा आयात पूँजीगत तथा निर्मित वस्तुओं का आयात होता है। दोनों की कीमतों में अत्यधिक अंतर होने पर भुगतान असंतुलन की समस्या उत्पन्न होती है। इस कारण आर्थिक विकास के लिए इन देशों को प्राथमिक वस्तुओं पर निर्भरता कम करनी होगी। जिसका एक मात्र उपाय है औद्योगिकरण है ताकि ये आयात स्थानापन्न तथा निर्यात प्रधान उद्योग स्थापित कर सके।

5. **सामाजिक ढाँचे में परिवर्तन** (**Changes in Social Environment**)- ओद्यौगिकरण का सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान है सामाजिक ढाँचे में बहुत तेजी से परिवर्तन होता है। गाँव का परम्परागत जीवन में काफी जल्दी परिवर्तन देखने को मिलता है क्योंकि अधिक संख्या में गाँव के लोग शहरों में उद्योगों में काम करने के लिए चले जाते हैं। गाँव में जाति -पति जो गाँव और उद्योगों में भी गुटबाजी का काम करती है उन्नति के अच्छे अवसर, ज्यादा कमाई और नए विचार इन नए ओद्योगिक मजदूरों का जीवन के प्रति नजरिया बदल देते हैं। एक नए उद्यमी का जन्म, पूँजी निर्माण में व द्धि, तकनीकि अविष्कार पनपते हैं तथा नई कुशलता उभरती है। ये सब विकास सामाजिक संबंधों पर काफी प्रभाव छोड़ते हैं और इस तबदीली से नए समाज का जन्म होता है।

क षि और उद्योग में परस्पर संबंध
(Interrelationships between Agriculture and Industry)

इसका हम पहले भी वर्णन कर चुके हैं कि कैसे कृषि ओद्योगिक व द्धि में उसके बदले कैसे ओद्योगिक विकास कृषि विकास के लिए योगदान देता है। यह बताता है कि कृषि तथा उद्योग एक दूसरे के बीच संबंध रखते हैं न कि एक दूसरे से प्रतियोगिता। अल्पविकसित देशों में कृषि तथा उद्योग के बीच कोई मतभेद नहीं है। कृषि क्षेत्र में विकास नहीं हो सकता जब तक (अतिरेक) Surplus श्रम उद्योग क्षेत्र में न लगाई जाए, इसके विपरित ओद्योगिक विकास संभव नहीं जब तक जनसंख्या निर्वाह के लिए भोजन उपलब्ध न हो तथा उद्योग क्षेत्र के लिए कच्चे माल की उपलब्धता न हो।

इन कारणों की वजह से, वर्तमान समय में यह महसूस किया जाता है कि दोनों क्षेत्रों के बीच संतुलन बनाया जाए। देखने में तो बिल्कुल सही लगता है। लेकिन क्रियात्मक रूप से यह मुश्किल लगता है क्योंकि बहुत से (अधिकतर) अल्पविकसित देशों में साधनों की कमी की वजह उसके बँटवारे में समानता लाना मुश्किल है। चुनाव की प्रक्रिया के बारे में अलग-अलग अर्थशास्त्रियों के मत भिन्न हैं- ऐ॰ई॰ काहन,जेकब वीनर और हुवर जो मानते हैं कि खाद्यान्न पूर्ति को बढ़ाने के लिए विशेष ध्यान देना चाहिए। बढ़ती हुई खाद्यान्न की माँग को पूरा करने के लिए तथा कृषि क्षेत्र में पूँजी की सीमान्त उत्पादकता सबसे ज्यादा निहित है कि यदि एक क्षेत्र दूसरे क्षेत्र की व द्धि का सीमित करता है। वह कृषि क्षेत्र है जो ओद्योगिक क्षेत्र की व द्धि को कम कर सकता है। दूसरे ग्रुप के अर्थशास्त्रियों का मानना है कि यदि कृषि की उत्पादकता बढ़ा दी जाए तो कृषि क्षेत्र से अतिरेक श्रम उद्योग क्षेत्र में स्थानांत्रित हो सकती है। उनका मानना है कि यह तभी संभव है जब बड़ा धक्का औद्योगिकरण कार्यक्रम चलाए जाएँ। उनका मत है कि ओद्यौगिकरण में समस्त सामाजिक अथवा औद्योगिकरण में समस्त सामाजिक ढाँचा को बदलने की क्षमता है जो आर्थिक पिछड़ापन जैसी रूकावटों को तोड़कर उन्नत व्यावसायिक वितरण को जन्म देता है।

कृषि तथा उद्योग क्षेत्र के बीच चुनाव संभव नहीं है। यह भी संभव है कि बहुत सी निवेश की रेखाओं के बारे में विचार कर सकते हैं जो कृषि तथा उद्योग में साथ-साथ व द्धि करें। निवेश की एक रेखा जो खाद्यान्न संबंधि उद्योगों में लगाई जाए।

इस तरह के उद्योगों का विकल्प कृषि में परिवर्तन के लिए आवश्यक है। टमाटर के उत्पादन में बढ़ोतरी बेकार हो सकती है यदि जब तक क्रेनिंग उद्योग इस बेकारी (Spoilage) को न रोके। दूसरा उदाहरण डेरी व्यापार में निवेश बेकार हो सकता है जब तक दूध की अधिक मात्रा उपलब्ध न हो। इसी प्रकार गन्ने का उत्पादन तभी लाभदायक हो सकता है यदि रिफाइनरी उपलब्ध हो। देसरे निवेश की रेखा उद्योग क्षेत्र में हा सकती है जो कृषि क्षेत्र को कृषि मशीनीकरण, जैसे ट्रैक्टर, सिंचाई पम्प, थ्रैसर इत्यादि देती है। अल्पविकसित देशों में औद्योगिक क्षेत्रों जैसे खाद, प्लांट कैमीकल उद्योग, पैट्रोलियम रिफाइनरी इत्यादि में भी निवेश उपलब्ध होने पर निवेश में व द्धि कर सकते हैं।

भारत की तरह बड़े अल्पविकसित देशों में छोटे अल्पविकसित देशों की बजाय साधनों की समस्या ज्यादा गंभीर नहीं है। कृषि तथा उद्योग क्षेत्र के बीच किसी तरह का मनमुटाव नहीं है। हाँलाकि इस तरह का मनमुटाव औद्योगिक क्षेत्र के बीच देखने को मिलता है। उदाहरण के तौर पर क्या इन देशों का उपभोग वस्तु उद्योगों पर या पूँजीगत वस्तु उद्योगों पर निर्भर रहना चाहिए। यदि देश विकास के दीर्घकालिन साधनों को विकसित करना चाहता है तो उन्हें दूसरे नम्बर के उद्योगों की तरफ ध्यान देना चाहिए जिससे अर्थव्यवस्था में क्षमता बढ़े। इसके विपरित यदि देश में लघुकाल विकास संभावना है तो वे भविष्य में उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योगों का विकास करेंगी जिससे भविष्य में उपभोक्ता वस्तुओं की उपलब्धता में बढ़ोतरी होगी और इन वस्तुओं की बढ़ी हुई मांग पूरी करने में सहायता मिलेगी।

अध्याय-20
तकनीकी परिवर्तन व विकास
(Technological Change and Development)

तकनीकि को प्रायः मशीन के बारे में ज्ञान व प्रक्रिया से पहचानते हैं। बड़े पैमाने पर यह कुशल, ज्ञान तथा उपयोगी वस्तुओं (कार्य) करना आदि के बारे में वर्णन करती है। तकनीकि बाजार तथा गैर-बाजार संबंधित इकाइयों में प्रयोग होने वाले तरीकों को शामिल करती है। यह इस बात का भी ध्यान रखती है कि क्या उत्पादन करना, उत्पादन बनावट और कैसे इसे उत्पादित किया जाए। यह प्रबन्धकीय और बाजारी तकनीकि के साथ-साथ वह तकनीकि भी शामिल करती है जो सीधे उत्पादन को प्रभावित करती है। तकनीक से सेवाओं में भी विस्तार की संभावना है जैसे-प्रबन्धकीय, शिक्षा, बैंक और कानून।

तकनीक में कई तरह की तकनीक शामिल है-परम्परागत तकनीक व आधुनिक तकनीक अधिकतर तकनीक जो वर्तमान समय में प्रयोग की जाती है दो शताब्दी पहले पश्चिम देशों में विकसित की गई थी। इस तकनीक को हम आधुनिक तकनीक को हम आधुनिक तकनीक का नाम देते हैं। यह तकनीक पश्चिमी देशों में इससे पहले प्रयोग की गई थी जो परम्परागत तकनीक का नाम देते हैं। परम्परागत तकनीक वर्तमान समय में अधिकतर अल्प विकसित देशों में कृषि, छोटे उद्योग तथा कोटेज उद्योगों में प्रयोग की जाती है।

आर्थिक विकास में तकनीक की भूमिका
(Role of Technology in Economic Development)

आधुनिक तकनीक का इतिहास पश्चिमी देशों में ओद्यौगिक रेवुलेशन के साथ आरम्भ हुआ। नई वैज्ञानिक अविष्कारों का आरम्भ होने पर, उद्यमियों ने नए अविष्कार शुरू और जल्दी ही बाजार में नई वस्तुओं का आना शुरू हुआ। ओद्यौगिक रेवुलेशन आरम्भ होने के बाद नए-नए अविष्कारों का आरम्भ हुआ और प्रतियोगिता के दौर में उत्पादकों के बीच विकसित तकनीक अपनाने में होड़ लग गई और उपभोक्ताओं के लिए अच्छी किस्म के उत्पाद मिलने शुरू हो गए। धीरे-धीरे यह प्रतियोगिता राष्ट्रीय चार दीवारी से बाहर निकलकर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार क्षेत्र में प्रवेश हुई और अधिक विकसित तकनीक से बने उत्पाद का एक देश से दूसरे देश के बीच व्यापार शुरू हुआ। पश्चिमी देशों में समूचे उत्पादन में तकनीक प्रभाव देखने को मिला और अधिक तकनीक का विकास हुआ। विकास एक गत्यात्मक प्रक्रिया है जो नई तकनीक के लगातार प्रयोग पर निर्भर करती है। पश्चिमी देशों के अभ्यास इस तर्क की सच्चाई का एक उदाहरण है।

पश्चिमी संसार में अविष्कार दो तरह का काम करते हैं लागत कम करना व माँग बढ़ाना। प्रारम्भिक समय में अविष्कार व खोज उत्पादन की लागत कम कर वस्तुओं, उपभोक्ता को बाजार में लाते हैं। जैसे उपभोक्ता नई वस्तुओं की माँग बढ़ाते हैं। इससे माँग दबाव बढ़ जाता है और यह उद्यमी को नए तथा उत्तम उत्पादन बढ़ाने में उत्साहित करता है। पश्चिमी देशों में उपभोक्ताओं की बढ़ी माँग आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है जिससे ओद्यौगिक वस्तुओं का बाजार लगातार बढ़ता है।

आर्थिक विकास से तकनीक की भूमिका के बारे में जापान का उदाहरण दे सकते हैं। Cairn Cross ने महसूस किया है कि इस देश में आर्थिक व द्धि शुरू होने से पहले, यह दूसरे देशों की तरह कृषि पर निर्भर करता था। जापान की 75 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर करती थी। यद्यपि यह दूसरे अल्पविकसित देशों की अपेक्षा आर्थिक पिछड़ापन में अलग था। अधिकतर जापानी विकसित देशों से तकनीकी ज्ञान दिखाने के लिए गए, विदेशी यंत्र व तरीके अपनाकर नए उद्योगों का आरम्भ हुआ। इस संदर्भ में तकनीकी के महत्त्व के बारे में आसानी से महसूस कर सकते हैं।

तकनीक के धनात्मक (Positive) प्रभाव के साथ विपरित प्रभाव भी पड़ता है। तकनीकी अविष्कार का सबसे नकारात्मक प्रभाव है यह श्रम को बाहर करना तथा इससे बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न होती है। यद्यपि अधिकतर अर्थशास्त्री इस संभावना को स्वीकार नहीं करते। उनके अनुसार तकनीक परिवर्तन से श्रम लागत कम होगी, लागत कम होने पर उपभोक्ता उत्पादन की तरफ आकर्षित होंगे। यदि उत्पादन की माँग लोच है तो माँग बढ़ने पर रोजगार भी बढ़ेगा। अब वस्तु कम कीमत पर उपलब्ध है, इसकी वजह से उपभोक्ता दूसरी वस्तुओं पर खर्च करने के लिए रूपए बचा लेंगे। लेकिन माँग अलोच है तो मजदूर रोजगार से बाहर होंगे लेकिन अब कम कीमत पर वस्तु उपलब्ध है तो दूसरे उद्योगों की वस्तुओं की माँग बढ़ेगी व रोजगार के नए अवसर पैदा होंगे तथा देसरे उद्योगों में रोजगार बढ़ेगा। यह तर्क दिया गया है कि दीर्घकालीन तकनीक बेरोजगार संभव नहीं। यद्यपि यह तर्क व्यापार संघों ने स्वीकार नहीं किया क्योंकि उन्हें चिन्ता है कि अल्पकाल में श्रम बेरोजगार होगा। उनका मानना है तकनीक का भार मजदूरो को ही सहन करना पड़ता है चाहे यह अल्पकाल के लिए ही क्यों न हो।

तकनीक परिवर्तन की वकालत करने वाले लागों का मत है तकनीक से कुछ श्रमिकों पर प्रभाव पड़ता है लेकिन यह पूरी अर्थव्यवस्था के विकास के लिए लाभदायक है। दूसरे जोखिम की तरह, तकनीक परिवर्तन भी एक जोखिम है जो बदलती या बढ़ती अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक है। यद्यपि तकनीक परिवर्तन का यह तर्क उद्यमी व श्रमिक पर पड़ने वाले प्रभाव को वर्णित नहीं करता। उद्यमी के पास फालतू पैसा है वह नुकसान को सहन करने की क्षमता नहीं होती। इसलिए तकनीक परिवर्तन उद्यमी के लाभ व हानि का निर्णय करता है। लेकिन मजदूरी प्रभावित होने पर यह श्रमिक के जन्म मरण का सवाल है। इसलिए दोनों को एक तराजू पर नहीं तोल सकते। मजदूरो को उद्यमी की बजाय ज्यादा सहना पड़ता है।

तकनीक उन्नति व अविष्कार सामाजिक आर्थिक माहौल में परिवर्तन लाती है। बढ़ते हुए शहरी व औद्योगिकरण की वजह से जीवन स्तर बढ़ता है और उन्नति के लिए चारों तरफ दरवाजे खुलते हैं। यद्यपि साथ-साथ वातावरण दूषित तथा पर्यावरण की समस्या असुरक्षा बढ़ना तथा पुरानी कारीगरी खत्म होती है। आदमी मशीन की तरह बन जाता है और तेज बदलती जिन्दगी में अपना अस्तित्व खो देता है। विकसित देशों में औद्योगिकरण तथा तकनीक विकास को देखते हुए अल्प विकसित देश भी इसको अपनाने में पूरा प्रयत्न कर रहे हैं, क्योंकि तकनीक में ही उन्हें आर्थिक विकास की आशा दिखाई देती है। उनका मानना है कि जब तक तकनीक परिवर्तन स्थिर रहते है अर्थव्यवस्था में पिछड़ापन, जनसंख्या का अधिक भाग का जीवन स्तर नीचा, अकाल इत्यादि से छुटकारा नहीं मिलता।

तकनीकों का चुनाव
(Choice of Techniques)

लंबे समय से यह विवाद चला हुआ है कि अल्पविकसित देशों में कौन सी तकनीक अपनाई जाए। पूँजी प्रधान तकनीक व श्रम प्रधान तकनीक। वास्तव में तकनीक समय तत्व पर निर्भर करती है। लघु समय में (अल्पकाल में) श्रम प्रधान तकनीक उत्पादन व उपभोग बढ़ाती है तथा दीर्घकाल में पूँजी प्रधान तकनीक उत्पादन व उपभोग बढ़ाती है। इसलिए इस घटना का कारण है क्योंकि श्रम प्रधान तकनीक उपभोग की अपेक्षा कम उत्पादन जोड़ने से अतिरेक का स्तर कम हो जाता है। इसलिए यदि नीति का उद्देश्य उपभोग दर अधिक करना है तो पूँजी प्रधान तकनीक को प्राथमिकता दी जाती है जिससे प्रति यूनिट (इकाई) निवेश में भी व द्धि होती है। बचत में व द्धि करते हुए, पूँजी प्रधान तकनीक से अर्थव्यवस्था की भविष्य व द्धि को बढ़ावा मिलता है। बचत व रोजगार के बीच में विरोधाभास को उत्पादन फलन चित्र 1 की सहायता से वर्णित करते हैं जो मोसिस डोब और ए॰के॰ सेन द्वारा प्रयोग किया गया।

चित्र 1 में OK (एक साधन) जिसमें उत्पादन पैदा करने के लिए श्रम के विभिन्न स्तर लिए गए हैं। उपभोग को उत्पादन फलन में oo से दर्शाया गया है जो श्रम के घटते प्रतिफल के बारे में बताता है। मानकर चलते हैं कि मजदूरी स्थिर है w जो सारी उपभोगकी जाती है। oc रेखा जो आधार से निकलती है, जिसका स्लोप स्थिर है। यह रेखा स्लोप मजदूरी के बारे में बताता है तथा oo और oc के बीच का अंतर लाभ है। यदि हम आगे मान ले कि सारा लाभ बचत किया गया है फिर भी इनका अन्तर बचत दर्शाएगा। अब बचत बढ़ेगी जब खिंची रेखा oc के बराबर तथा उत्पादन फलन के साथ है यह घटना Ol श्रम स्तर पर (रोजगार स्तर) पर घटती है। इस बिन्दु के परे बढ़ा हुआ रोजगार बचत के स्तर व अतिरेक को घटा देगा।

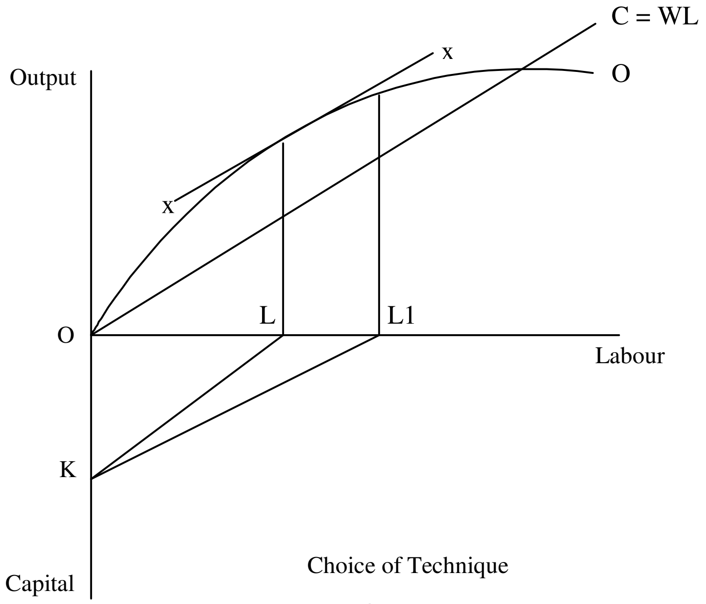

चित्रः 1

तकनीक के संबंध से पूँजी-प्रधान तकनीक के पक्ष में चुनाव

(Technological Consideration in Favour of Capital Intensive Techniques)

संबंध से पूँजी प्रधान तकनीक के पक्ष में विचार रखें जाएँ तो इसका अभिप्राय है लगातार अविष्कार में बढ़ोतरी हो रही है। यह बात उत्पादन की परम्परागत तकनीकी के बारे में नहीं कही जा सकती क्योंकि सुधार के लिए दीर्घकाल की जरूरत है। इसलिए दीर्घकाल में अधिक विकास (उच्च विकास) पूँजी प्रधान तकनीक में संभव है।

यूरोपियन देशों के अनुभव को देखते हुए Grerchenkron का कहना है कि इन देशों में व द्धि तकनीकी विकास की वजह से हुई है। इन उद्योगों ने आर्थिक विकास, आधुनिकरण तथा औद्योगिक प्रक्रिया को अहम् स्थान दिया। इस कहानी का यही सच है कि अल्पविकसित देश अपने आप को तेजदार विकसित करना चाहते हैं तो उन्हें वहीं उद्योगों का चुनाव करना चाहिए जो तकनीकी तौर पर तेजी से उन्नति कर रही है। इसलिए तकनीकी विकास पूँजी प्रधान तकनीक में ही तेजी से विकास करता है। यही कारण है पूँजी प्रधान तकनीक के पक्ष में तर्क। अधिकतर आधुनिक पूँजी-प्रधान तकनीक की आवश्यकता भविष्य में आधुनिकरण औद्योगिकरण के विकास के लिए आवश्यक है।

श्रम उपयोग तथा पूँजी प्रधान तकनीक

(Labour Utilization and Capital Intenssive Techniques)

श्रम प्रधान तकनीक के साथ पूँजी प्रधान तकनीक का प्रयोग भी बढ़ सकता है यदि अल्पविकसित देशों में कुछ बातों की तरफ ध्यान दिया जाए।

1. अल्पविकसित देशों में श्रम की कीमत कम है लेकिन विशिष्टता (Efficiency) भी कम है। यह सही या उपयुक्त भोजन की कमी, उद्योग के अनुशासन के मुताबिक न टिक पाना या गैरहाजिरी की उच्च दर (फसल कटाई के समय) के कारण हो सकती है। यदि अच्छे भोजन (N utrition) की कमी न हो फिर भी अशिक्षा, गैर अनुशासित श्रमिक साधारण तकनीक के साथ भी ऊँचे स्तर पर उत्पादन के पैमाने को प्रयोग करने के लिए, क्योंकि विशिष्टता कम होने की वजह से कम मजदूरी के साथ भी समन्वय नहीं बैठा सकते हैं।
2. अल्पविकसित देशों में श्रम अकुशल ही नहीं बल्कि उत्पादकता की अपेक्षा इसकी कीमत भी ज्यादा है। Kindleberger ने कहा है सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र में प्रदर्शन प्रभाव बढ़ने से श्रम की कीमत लाभ व मजदूरी को शामिल करते हुए उत्पादकता कम होने के बावजूद ज्यादा होती है। देश के घरेलु क्षेत्र में कीमत बढ़ने से श्रम की मजदूरी भी बढ़ती

है और विदेशी पूँजी यंत्रों की कटौती (रियायत) करनी पड़ती है। उस समय सरकार और श्रम संगठन आर्थिक या राजनीतिक कारण के लिए बनावटी तौर पर श्रम की लागत बढ़ा देते हैं। यह सब बताता है कि अल्पविकसित देशों में प्राय श्रम सस्ती नहीं होती पूँजी इसके द्वारा जो कार्य किया जाता है या इसमें जो निकाला जाता है उसकी कुशलता को देखते हुए सस्ती है।

3. अल्पविकसित देशों कुशल श्रमिक व विशिष्ट प्रबंधन की कमी है। इसकी पूर्ति के लिए केवल श्रम का प्रयोग नहीं बल्कि दोनों के बीच विशिष्ट संबंध होना चाहिए।

4. कई बार श्रम दूसरे पर कम निर्भर करती है और इससे उत्पादन में रूकावट व वस्तुओं की योग्यता बनाए रखने में दिक्कतें होती हैं। इसलिए श्रम का प्रयोग कम कर, पूँजी प्रधान तकनीक का प्रयोग करने पर दबाव डाला जाता है।

पूँजी प्रधान तकनीक का आयात

Import of Capital Intensive Technique

सामान्य रूप से यह विकल्प सुझाया है कि पूँजी गहन तकनीको का प्रयोग किया जाए जो तकनीक विदेशों से या विकसित देशों से आयात की जाती है वह पूँजी-गहन तकनीक है। क्योंकि विकसित देशों में श्रम की बजाय पूँजी-गहन तकनीक का अधिक प्रयोग है कारण श्रम की कमी। अल्पविकसित देशों के पास कोई विकल्प नहीं रहता है और उन्हें पूँजी प्रधान तकनीक का आयात करना पड़ता है। इसका कारण यह भी है कि अल्पविकसित देशों में जो तकनीक प्रयोग की जाती है वह वस्तुओं को अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतियोगी नहीं बना पाती इसलिए पूँजी गहन मकनीक का आयात करना जरूरी हो जाता है।

श्रम गहन तकनीक के संबंध में

The Case of Labour Intensive Technique

जैसे पहले बता चुके हैं कि पूँजी गहन तकनीक की अपेक्षा बता चुके हैं कि पूँजी गहन तकनीक की अपेक्षा श्रम गहन तकनीक उत्पादन व रोजगार में उसी समय व द्धि होती है। इसलिए जहाँ उत्पादन व रोजगार को एक दम बढ़ाना हो उस संदर्भ में ये सही है। इसलिए श्रम आधिक्य वाले देश में रोजगार की समस्या देर नहीं हो सकती जब तक श्रम गहन तकनीक का प्रयोग न हो। अल्पविकसित देशों में जहाँ वस्तुओं की पूर्ति बहुत कम हो उत्पादन का अधिक बढ़ाना महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। इस पूर्ति को अब बढ़ाने के लिए श्रम गहन तकनीक का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह कमी पूँजी गहन तकनीक की बजाय श्रम गहन तकनीक से आसानी से पूरी की जा सकती है। श्रम-गहन तकनीक के पक्ष में दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इसमें विदेशी विनिमय की कम जरूरत पड़ती है। अल्पविकसित देशों विदेशी विनिमय की कमी होती है इसलिए इन देशों को श्रम गहन तकनीक को अपनाना चाहिए।

यह पहले भी बता चुके है कि अल्पविकसित देशों के द्वारा आयात की गई तकनीक पूँजी गहन तकनी होती है और ये देश इसके बारे में कुछ नहीं कर सकते। कृषि क्षेत्र में भी श्रम गहन तकनीक को अपनाने के काफी गुंजाईश है। अल्पविकसित देशों जैसे भारत भूमि पर अत्यधिक जनसंख्या भार की समस्या को झेल रहा है। इसलिए श्रम गहन की तकनीक की बजाय पूँजी-प्रधान तकनीक को अपनाना बेवकूफी होगी जिससे मानव व पशु श्रम का उपयोग न हो। कृषि क्षेत्र में मशीनों का उपयोग - ट्रैक्टर, थ्रैसर इत्यादि को किसान का लाभ बढ़ाने के बारे में देखा गया है न कि सामाजिक कल्याण के पक्ष में। अब प्रश्न यह उठता है क्या कृषि में परम्परागत तकनीक का प्रयोग करना चाहिए जिससे उत्पादन व उत्पादकता निम्न है। या उपयुक्त तकनीक का कोई विकल्प है। कोई भी परम्परागत तकनीक को प्रयोग करने के पक्ष में नहीं होगा क्योंकि इस तकनीक से उत्पादन व उत्पादन क्षमता में सीमित है। दूसरे अल्पविकसित देशों की बढ़ती हुई जनसंख्या की जरूरतों को पूरा करने के लिए ओद्यौगिकरण कार्यक्रम को बढ़ाना चाहिए। भारत जैसे देश में इस तरह की तकनीक अपनानी चाहिए जो कृषि उत्पादन बढ़ाने के साथ श्रम की माँग को भी बढ़ाए।

दूसरे शब्दों में यदि तकनीक परम्परागत तरीके के साथ सिंचाई, ऊँची किस्म के बीज व खाद का भरपूर प्रयोग करे तो यह सबसे उत्तम है। यह कृषि उत्पादन व उत्पादकता में तेजी से व द्धि करेगी तथा उसी समय अतिरिक्त श्रम की माँग बढ़ाकर रोजगार के नए साधन पैदा करेगी। इस तकनीक की बनावट में लकड़ी के हल की बजाय लोहे के हल का प्रयोग तथा अन्य विकसित यंत्र का प्रयोग करने चाहिए।

ऊपर कही गई बातों से पता चलता है कि कुछ क्षेत्रों में पूँजी गहन तकनीक का प्रयोग सही है, लेकिन कुछ क्षेत्रों (अन्य क्षेत्रों) में श्रम गहन तकनीक उपयुक्त है। इसलिए अल्पविकसित देशों में दोनों तकनीक श्रम गहन तथा पूँजी गहन दोनों तकनीको का प्रयोग करना चाहिए। कुछ बड़े पैमाने के उद्योग पूँजी प्रधान तकनीक और कुछ समकक्ष क्रियाएँ और कृषि श्रम प्रधान तकनीक के प्रयोग पर बल दें।

उपयुक्त तकनीक का प्रश्न

(The Question of Appropriate Technology)

कुछ वर्षों से अल्पविकसित देशों के संदर्भ में है। विभिन्न अर्थशास्त्रियों व नियोजकों का ध्यान आकर्षित किया है। इसका मुख्य कारण है पिछड़े देशों में पश्चिमी देशों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखने वाली तकनीक के प्रयोग के खास परिणाम नहीं मिले। इस तकनीक से कुछ शहरों और कस्बों में रोजगार के साधन उभरे लेकिन ग्रामीण क्षेत्र और छोटे कस्बे इस तकनीक से अछूते रहे जिससे बेरोजगारी तथा अर्ध बेरोजगारी जैसी समस्याओं ने जन्म लिया। रोबिन्य कहना है पश्चिम तकनीक को अपनाकर अतिरिक्त नौकरी देना बहुत महंगा है। यह तकनीक अमीर देशों के लिए उपयुक्त है जहाँ प्रति व्यक्ति आय अधिक, जनसंख्या की कम व द्धि दर और आय का बचत अनुपात अधिक है। लेकिन अल्पविकसित देशों के संदर्भ में, जहाँ संस्थागत साधन व उद्योग बनाने के लिए निवेश साधनों की कमी अनुपयुक्त विदेश विनिमय साधन जो पश्चिम तरह की पूँजी निवेश के आयात के लिए, दिए हुए उद्योग के लिए बनाने तथा यंत्र जोड़ने की ऊँची लागत, इस तरह की तकनीक उपयुक्त नहीं है। भारत जैसा देश जहाँ जनसंख्या दबाव ज्यादा है। पश्चिमी देशों में प्रयोग वाली तकनीक यदि यहाँ प्रयोग की जाए तो बेरोजगारी तथा अर्ध-बेरोजगारी में कितनी व द्धि होगी। यह वर्णन नहीं किया।

कुछ अर्थशास्त्रीयों का तर्क है कि अधिक विकसित देशों में प्रयोग होने वाली तकनीक अल्पविकसित देशों के लिए उपयुक्त नहीं है। अल्पविकसित देशों को यह सुझाव है कि उन्हें ऐसी तकनीक का विकल्प ढूँढना चाहिए जो विकसित देशों में पहले से प्रतिबंधित हो चुकी है या पूँजी बचत तकनीक या अपने आप श्रम प्रयोग तकनीक। विकसित देशों के विकल्प की तकनीक कम कीमत व कम पूँजी गहन वाली होगी। Kindleberger ने जापान का उदाहरण दिया है। जिसने कपड़ा उद्योग में ब्रिटिश से सैंकेड हैंड तकनीक (मशीन) का प्रयोग कर अपनी क्षमता (शक्ति) बढ़ाई।

लेकिन फरेंसिस स्टीवर्ट ने पुरानी तकनीक के प्रयोग में कठिनाइयाँ बताई है। उनका कहना पुरानी तकनीक कम कुशल तथा इसके साथ इसके रख-रखाव के लिए कुशलता, सामान आदि की आवश्यकता पड़ेगी और इसके प्रयोग में संस्थागत विभिन्नता, आर्थिक असमानता आदि से भी समस्या और आज भी कई यूरोपियन देशों की बजाय अल्पविकसित देशों में जनसंख्या दोगुना है।

दूसरा विकल्प है पूँजी बचतकारी तकनीक व श्रम प्रयोग तकनीक। यही विकल्प अल्पविकसित देशों के लिए सही है, यह थोड़ा मुश्किल है लेकिन अल्पविकसित देश लम्बे समय तक इससे बच नहीं सकते। यदि ये देश अपने आप जन्म लें कि उन्हें क्या उत्पादन करना है और उत्पादन के साधन क्या है। यह तकनीक इन देशों के लिए उपयुक्त है। यह अधिक पूँजी गहन नहीं होगी जो पश्चिमी देशें में प्रयोग की जाती है और न ही श्रम गहन तकनीक जो वे पहले ही प्रयोग कर चुके हैं। यह कुछ इन दोनों के बीच की तकनीक होगी जिससे मध्यस्थ तकनीक को विकसित करने वाले E.F. Schumachar थे जिन्होंने सही नोटिस किया कि अल्पविकसित देशों की समस्या श्रम की अधिकता है और इन्हें रोजगार भी प्रदान करना है। एक गरीब आदमी के लिए सभी जरूरतों में महत्त्वपूर्ण है काम करने का मौका मिलना और कम भुगतान व गैर उत्पादित काम ही सही है निकम्मेपन से। Schumachar के अनुसार आर्थिक गणित में उत्पादन व आय को देखकर न कि कितनी नौकरीयों या कितने लोगों को काम मिला है यह स्थिर पद्धति है। गत्यात्मक सिद्धान्त में हर व्यक्ति को कुछ न कुछ काम करना चाहिए न कि कुछ ही लोग उत्पादन के स्तर को पूरा कर लें। चाहे कम उत्पादन हो लेकिन यह सभी की भागेदारी हो और इसे थोड़े समय में सीखा जा सके। यह भी महत्त्वपूर्ण है कि यह श्रम की बजाय दुर्लभ साधनों की बचत करें और इसमें कम निवेश की आवश्यकता हो। यह प्रोद्यौगिक केवल उपलब्ध पूँजी साधनों के प्रयोग में ही मितव्यताएँ ही नहीं लाएगी बल्कि रोजगार के अधिक सुअवसर भी उत्पन्न करेगी यह तकनीक कृषि तथा निर्मित उपभोक्ता वस्तुओं की पूर्ति बढ़ाकार, यह खाद्य तथा कच्चे माल की आयात करने

की जरूरत से छुटकारा दिलाएगी। अधिक पूँजी वस्तुओं का आयात करना भी आवश्यक नहीं होगा यह प्रौद्योगिक नीति स्फीतकारी दबावों तथा भुगतान शेष की समस्याओं को रोक पाएगी। जो विकास प्रक्रिया के लिए आवश्यक है।

पूँजी दुर्भलता व श्रम की बहुतायत अल्पविकसित देशों की सामान्य विशिष्टता है। दूसरे शब्दों में पूँजी-श्रम अनुपात बहुत निम्न होता है। इसलिए जो हम श्रम गहन तकनीक व पूँजी गहन के बीच कर बाते करते हैं मध्यस्थ तकनीक (Intermediate Technology) यह सही व उपयुक्त है। क्योंकि अल्प विकसित देशों में यह कहना बहुत मुश्किल है कौन सी तकनीक अपनाई जाए। क्योंकि श्रम गहन तकनीक अर्थव्यवस्था में उत्पादन व रोजगार बढ़ाती है तथा पूँजी प्रधान तकनीक पूँजी निर्माण की दर को बढ़ाती है। फिर दीर्घकाल में उत्पादन व रोजगार अधिक होते हैं। इसलिए या तो अलग-अलग क्षेत्रों में इनकी (तकनीकों) उपयुक्तता के अनुसार प्रयोग करना चाहिए। वरना हम कह चुके है मध्यस्थ तकनीक के बारे में जो अल्पविकसित अपनी अर्थव्यवस्था को देखकर, साधनों की उपलब्ध को देखकर अपने आप विकसित करें।

नोट :- इस तकनीक चुनाव को हम अध्याय "तकनीकी परिवर्तन (Models of Technological Change)" के साथ भी जोड़ सकते हैं जिसमें 'Production Function Approach' का वर्णन किया गया है तकनीक की बेहतरी के लिए उत्पादन फलन के ऊपर इसका प्रभाव आदि। क्योंकि श्रम व पूँजी के साथ इस उत्पादन फलन में तकनीक को भी जोड़ा गया है।

अध्याय-21
निवेश कसौटियाँ
(Investment Criteria)

विकसित देशों में निवेशक निवेश के लिए फैसला करने पर बाजार ताकतों पर भरोसा करता है। आमतौर पर यह माना जाता है कि जो फैसले लिए गए है यह कुशल कसौटियाँ (Effeciency Criteria) और सामाजिक कल्याण को बढ़ाऐंगे। लेकिन अल्पविकसित देशों में बाजार की शर्तें भिन्न हैं और बाजार में विभिन्न पहलू मौजूद है। इसलिए इन देशों में इस तरह का निवेश किया जाए या इसकी योजना बनाई जाए। इस अध्याय में हम निवेश योजना की महत्त्वता का वर्णन करेंगे। जिसे निवेश कसौटियाँ कहते हैं।

प्रत्येक अल्पविकसित देश में उत्पादित संसाधन दुर्लभ होते हैं। तथा उनका आवंटन एक मुश्किल काम है। प्रत्येक देश अपने संसाधनों का सही प्रयोग करना चाहता है आर्थिक संसाधनों का सही ढ़ंग से प्रयोग होना चाहिए जिसके लिए उपयुक्त निवेश की आवश्यकता है। निवेश आर्थिक नीतियों पर निर्भर करते हैं। इसलिए आर्थिक निवेश के बँटवारे की अनेक समस्याएँ हैं- बाहरी मित्व्ययिताओं की वजह से सार्वजनिक क्षेत्र में निवेश प्रभावित होता है। जिससे उनकी सामाजिक कीमत व निजी कीमत के बीच अन्तर दिखाई देता है। यदि निजी कीमत सामाजिक कीमत से कम है तो दिए हुए उत्पादन के साधनों से उत्पादन बढ़ाया नहीं जा सकता है। जब तक सीमांत कानून बाहरी मितव्ययिताओं के लिए संपूर्ण भत्ते न दें। (2) अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में कितना निवेश किया जाए (3) कौन सी तकनीक का किन-किन क्षेत्रों में प्रयोग किया जाए। (4) विभिन्न क्षेत्र की परियोजनाओं में कितना निवेश किया जाए। (5) निवेश आवंटन के लिए समय सीमा का निर्धारण। इसलिए इस तरह का आवंटन अल्पविकसित अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक है। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था संतुलित विकास न होने की वजह से साथ में निवेश की कम मात्रा की उपलब्धि से उसके विकास के लिए इस तरह का आवंटन महत्त्वर्ण है। इस आवंटन के उद्देश्य योजनाओं पर निर्भर करते हैं। एक योजना के तहत विभिन्न पहलूओं पर प्रकाश डाला जाता है जैसे आय की असमानता में देर करना, रहन सहन का स्तर बढ़ाना, रोजगार बढ़ाना, गरीबी कम करना, प्रति व्यक्ति आय बढ़ाना, उत्पादन में अधिक व द्धि करना तथा आर्थिक व द्धि को बढ़ाना इत्यादि। निवेश आवंटन की प्रक्रिया इस ढ़ंग से हो कि इन उद्देश्यों को पूरा किया जाए। लेकिन यह कार्य दुर्लभ है। क्योंकि कुछ उद्देश्य एक दूसरे के पूरक न होकर विपरित होते हैं। आर्थिक व द्धि के साथ आय की असमानता दूर करना अधिक उत्पादन के साथ रोजगार व द्धि का उद्देश्य आदि। यदि इस प्रकार से समय निवारण के लिए निवेश किया जाए तो बाद यह फैसला करना है कि कौनसी इकाई में कितना निवेश तथा कौनसी इकाई में पहले निवेश किया जाए यदि ओद्यौगिकरण को प्राथमिकता दी जाए तो यह फैसला करना होगा बड़े उद्योगों में या छोटे व घरेलु उद्योगों में निवेश करें।

निवेश प्रक्रिया में प्राथमिकता आर्थिक व द्धि के साथ अर्थव्यवस्था के उद्देश्यों को प्राथमिकता देना निवेश कसौटी का महत्त्वपूर्ण कार्य है। यदि लघु व घरेलु उद्योगों में निवेश किया जाए तो इससे उत्पादन व रोजगार दोनों में व द्धि होगी लेकिन इसके विपरित भारी उद्योगों में निवेश किया जाए तो निवेश आवंटन भी अधिक होगा और उत्पादन के साथ रोजगार में व द्धि नहीं होगी। लेकिन इसके विपरित लघु व घरेलु उद्योगों के निवेश से रोजगार बढ़ने पर गरीबी तथा असमानता में कमी आएगी। यह निवेश पूँजी प्रधान न होकर रोजगार प्रधान होगा। आर्थिक व द्धि की दर भी धीमी होगी। इसलिए अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में निवेश आवंटन की समस्या इतनी ज्यादा नहीं है, बल्कि यह देखना है कि निवेश ऐसी उस दिशा में करना चाहिए जिनसे अर्थव्यवस्था के उद्देश्यों को प्राथमिकता देकर आर्थिक व द्धि करें तभी इस आवंटन कसौटी के तहत विकसित व पिछड़े क्षेत्र की खाई को पाटने में कामयाब होंगे।

इसलिए निवेश कसौटी का कोई तकनीकी तरीका नहीं है कि निवेश नियोजन में निवेश करते समय क्षेत्रों का चुनाव करें। इस लिए चुनाव महज फैसला है जो समय अनुसार अर्थव्यवस्था के उद्देश्यों तथा प्राथमिकताओं पर निर्भर करता है। किसी अर्थव्यवस्था का उद्देश्य सकल राष्ट्रीय उत्पाद को बढ़ाना। आय असमानता तथा बेरोजगारी जैसी समस्याओं को न बढ़ने को ध्यान में रखते हुए वास्तविक प्रति व्यक्ति आय बढ़ाना। इसलिए समय के अनुसार निवेश योजनाओं की प्रक्रिया में चुनाव काफी मुश्किल है। इसलिए निवेश कसौटियों को कई भागों में बाँटा है।

आवर्त कसौटी की दर
(The Rate of Turnover Criterion)

Norman S. Buchanam और J.J. Polak ने आवर्त कसौटी दर की सलाह दी, जिसे पूँजी उत्पाद अनुपात आवर्त दर कहते हैं। यह अधिकतर द्वितीय युद्ध के बाद अल्पविकसित देशों को दोबारा खड़ा करने के निवेश योजनाओं के लिए बनाई थी। Buchanam लिखते है यदि निवेश सीमित है तो उन क्षेत्रों को पहले लेना चाहिए या पहले निवेश करना चाहिए जिसकी वार्षिक उत्पाद दर ज्यादा है न कि निवेश केवल उनकी स्थापना के लिए। दूसरे शब्दों में उत्पादन को अधिक बनाने के लिए निवेश उन्हीं इकाइयों में करना चाहिए जिसकी पूँजी आवर्त दर ऊँची हो। (जिसका पूँजी-उत्पादन अनुपात कम हो) कम पूँजी- गहन की योजनाएँ शीघ्र फलदायक, दुर्लभ पूँजी साधनों की अन्य योजनाओं पुर्न निवेश को आसान बनाएँगी तथा पुर्ननिवेश संभव होगा ऐसी योजनाएँ अल्पविकसित देशों में रोजगार भी बढ़ाती है। इसलिए दी हुई योजनाओं क्षेत्र का चुनाव इस के तहत आसान हो जाता है। इस परियोजना के तहत् चुनाव दो बातों पर निर्भर करता है। (1) पूँजी उत्पादन अनुपात ΔO कम करना और पूँजी की उत्पादकता बढ़ाना।

सीमाएँ
(Limitations)

हाँलाकि पूँजी उत्पादन कसौटी ऊँचे प्रतिफल देने के लिए बिल्कुल सही विकल्प है लेकिन यह कई आलोचनाओं के साथ प्रयोग होता है। A.K. Sen के अनुसार यह कसौटी निवेश के बारे में अवगत कराने के लिए अपूर्ण है (अप्रतियोगी है)।

1. ऊँचे प्रतिफल की दर का मतलब यह नहीं है कि यह शुद्ध उत्पादन की ऊँची दर के लिए आश्वस्त करें क्योंकि ऊँची दर से होने वाले ह्रास को भी नकारा नहीं जा सकता। लेकिन यह समस्या कुल प्रतिफल की दर को प्राप्त करने के लिए नकारा नहीं जा सकती। सेन की राय में इस कसौटी सबसे बड़ी खामी है कि यह पँजी को क्रियाशील करने में लगाई गई श्रम को नजर अंदाज करती है। यदि एक अर्थव्यवस्था श्रम को रोजगार देने की लागत शून्य है तो दिए हुए निवेश में (पूँजी निवेश में) कुल उत्पादन को बढ़ाने की सही कसौटी है। दूसरी तरफ श्रम को रोजगार पर लगाने में समाज की लागत भी शामिल है, उसे भी ध्यान में रखना चाहिए।

2. यह कसौटी समय तत्व को छोड़ देती है। एक प्रोजेक्ट निम्न प्रतिफल मिलने वालों से घटिया या कम नहीं हो सकता क्योंकि कम समय की सीमा में यह अधिक उत्पादन भी पैदा कर सकता है। इसलिए इस कमी को पूँजी की कम अनुपात माँग के साथ नहीं जोड़ा जा सकता है। क्योंकि दीर्घकाल में इस पूँजी कमी को या पूँजी अनुपात से पूरा नहीं किया जा सकता। इसलिए बीस साल तक चलने वाले प्रोजेक्ट का कुल उत्पादन पंद्रह साल तक चलने वाले प्रोजेक्ट से ज्यादा है। इसलिए समय तत्व पर उत्पादन काफी निर्भर करता है। यदि वर्तमान परिस्थिति में देखें तो हो सकता है पंद्रह साल में पूरा होने वाले प्रोजेक्ट की भविष्य में होने वाले उत्पादन की लागत कम हो।

   A.E. Khan ने प्रतिफल की उच्च दर के बारे में आलोचना की है। उसका कहना है कि यह कसौटी सामाजिक प्रतिफल या लाभ से नहीं जुड़ी है बल्कि पूँजी वितरण साधनों के बारे में बात करती है। सभी प्रोजेक्ट ने निवेश एक दूसरे प्रोजेक्ट के लिए लाभकारी होगा। वे निजी लाभ से संबंधित न हो, बल्कि सामाजिक उपयोगिता के लिए उपयोगी हो सकते हैं। इस तरह की सामाजिक उपयोगिता को भी नजरअंदाज नहीं कर सकते हैं। प्रोजेक्ट में समक्षता ऊँचे पूँजी-उत्पादन

अनुपात के साथ है। उसे निम्न स्तर पर नहीं रख सकते अथवा उसका चुनाव करते समय इस तरह के तर्क नहीं अपनाने चाहिए।

यद्यपि आवर्त कसौटी की दर सही नहीं है, हम इस तरह का तर्क नहीं दे सकते हैं। यह दिए हुए क्षेत्रों के बीच चुनाव करने में लाभकारी है। इन क्षेत्रों के बीच तकनीक का चुनाव करने की समस्या, स्थान और बराबर आर्थिक विकास देने की क्षमता इत्यादि शामिल हैं। इसी प्रकार संयुक्त राष्ट्र, लक्ष्य दिया गया है कि यह आवश्यक नहीं है कि इस कारण से ऊँचे पूँजी उत्पादन वाली परियोजना का कम प्राथमिकता दी जाए।

3. यह कसौटी रोजगार में व द्धि या निहित बनाने का तर्क केवल अल्पकालिक में सही ठहराती है। पूँजी गहन योजना शुरू में श्रम को कम खपाती है लेकिन दीर्घकाल में निवेश बढ़ने से, उत्पादन बढ़ने से श्रम की मात्रा अधिकतम हो सकती है।

4. श्रम गहन तकनीक से उत्पादन कम भी हो सकता है जिससे पूँजी के अधिक प्रयोग की आवश्यकता हो सकती है। इससे पूँजी-उत्पादन में व द्धि होगी।

इस प्रकार पूँजी आवर्त कटौती अनेक साधनों से घिरी रहती है। यह सही है कि अल्पकाल में रोजगार व उत्पादन बढ़ाने के लिए कम पूँजी गहनता वाली परियोजनाएँ अपनानी चाहिए। लेकिन अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में जहाँ समाजार्थिक आधारिक संरचना (Infrastucture) कम विकसित है उसका निर्माण करने के लिए तथा आर्थिक दर बढ़ाने के लिए अधिक पूँजी गहन पूँजी गहन वाली योजनाएँ भी लगातार आवश्यक है। भारत भी इस तरह की दोहरी नीति का अनुसरण कर रहा है।

सामाजिक सीमांत उत्पादिकता की कसौटी
(The Social Marginal Productivity Criterion)

आवर्त कसौटी की दर को नकारते हुए सबसे पहले प्रो॰ ए॰ ई॰ काहन ने सामाजिक सीमांत उत्पादिकता सिद्धान्त को प्रस्तुत किया। उनका कहना है कि सामाजिक उत्पादित सिद्धान्त में सीमित साधनों को इस प्रकार से प्रयोग किया जाए कि अन्य लागतों को दी हुई मात्राओं के साथ और अधिक पूँजी लगाई जा सकती है तो एक समय के बाद उसका उत्पादन तब तक गिरता जाता है जब तक कि विभिन्न प्रयोगों में पूँजी की सीमान्त उत्पादिकता बराबर नहीं हो जाती। इसलिए सीमित साधनों की इस तरह प्रयोग किया जाए अथवा वितरित किया जाए कि राष्ट्रीय उत्पादन अधिक बनाया जा सके। दूसरे शब्दों में उसका उपयोग सबसे अधिक उत्पादन देने वाली क्रियाओं में किया जाए।

साधारणतौर पर सामाजिक सीमांत उत्पादित कटौती को निजी निवेशक को मिलने वाले प्रतिफल जमा राष्ट्रीय उत्पाद में निवेश का योगदान। इसलिए यह कसौटी व्यक्तिगत निवेश परियोजना पर नहीं बल्कि समस्त अर्थव्यवस्था पर लागू होती है। समाज को इससे प्राप्त होने वाले लाभ धनात्मक (Positive) तथा ऋणात्मक (Negative) भी हो सकते हैं। यह सब प्रोजेक्ट की लागत पर निर्भर करता है कि लाभ की मात्रा अतिरिक्त लागत से कम है या ज्यादा। सामाजिक सीमांत उत्पादित कसौटी को इस प्रकार व्यक्त किया गया है।

सामाजिक सीमांत उत्पादकता

उत्पादिकता सीमांत उत्पादकता
(Social Marginal Productivity)

V = Output to the Society (समाज के लिए उत्पादन)

I = Rate of Investment (निवेश का अनुपात)

C = Social Costs (सामाजिक लागतें)

V उत्पादन बढ़े हुए मूल्य (बाजार मूल्य) को प्रकट करता है। समाज में कुल उत्पादन की कीमत निजी व्यक्तियों के उत्पादन से कम व ज्यादा हो, फिर भी ये बाहरी मितव्ययिताओं पर निर्भर करेंगें। इसलिए निजी लागत की अपेक्षा सामाजिक लागत

ज्यादा होगी। यह इस बात पर निर्भर करेगा कि समाज के सोचने के नजरिए या उन्होंने इन उत्पादित साधनों को मूल्य से कम या मूल्य से ज्यादा दिखाया है। SMP निजि सीमांत उत्पाद को दो कारणों या सन्दर्भ में वर्णित करती है अथवा बढ़ाती है- (1) जहाँ बाहरी मितव्ययिताएँ मौजूद हैं। (2) जहाँ एक विशेष उत्पादन की लागत (Opportunity Cost) जो निवेशक द्वारा दी गई लागत है उससे कम हा। पहली स्थिति भी मितव्ययिताओं में निहित है। दूसरी अधिक जनसंख्या कृषि देशों में पाई जाती है जहाँ छिपि बेरोजगारी मौजूद है अथवा पाई जाती है। इन सभी देशों में श्रम की विकल्प लागत (Opportunity Cost) शून्य है यद्यपि मालिक मजदूरी का भूगतान करता है। इसलिए उसके सन्दर्भ में यह धनात्मक है। शुन्य नहीं हो सकता।

वास्तविकता यह है कि श्रम को लगाने की सामाजिक लागत शून्य नहीं हो सकती। उदाहरण के लिए, बहस के तौर पर मान लीजिए यह शुन्य है। लेकिन SMP कसौटी व प्रतिफल कसौटी दर में समानता है तो निजि निवेशक व समान निवेशक के उत्पादन में कोई अन्तर अथवा उनकी लागत में अन्तर न होने पर प्रोजेक्ट में कोई लाभ (Supplementary Profit) नहीं है। यह अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में मुश्किल है। क्योंकि सामाजिक ऊपरी पूँजी से मिलने वाले लाभ तथा निजी पूँजी निवेश से मिलने वाले लाभ में अंतर है। प्रो० नारवाल ने भी इस तर्क को माना है। उनका कहना है कि यदि सामाजिक प्रतिफल निजी प्रतिफल से ज्यादा है तो सामाजिक उत्पाद कसौटी को अपनाना चाहिए।

सीमाएँ
(Limitation)

SMP को अपनाने में इसकी क्रियात्मक कठिनाईयों को देखते हुए आलोचना की गई। अल्पविकसित देशों में काफी निवेश Infrastructure (सामाजार्थिक आधारित संरचना) को विकसित करने में किया जाता है जिससे अलग (Supplementary) आय नहीं होती और इसको मात्रात्मक तरीके से भी माप नहीं सकते।

यह कहना गल्त है कि पूँजी की सीमांत उत्पादकता सब जगह एक होती है यह समान हो सकती है क्योंकि तकनिकी कारणों से या तो निवेश बहुत अधिक होते हैं या बहुत कम।

SMP कसौटी वर्तमान प्रभावों पर विचार करती है जिसमें श्रमिक के ज्ञान, कुशलता आदि का प्रयोग सम्पूर्ण रूप से नहीं हो सकता है। उद्यमी की कुशलता पर भी प्रश्न चिन्ह लग जाता है। क्योंकि अल्पकाल में इन सब बातों का उत्पादन पर प्रभाव दिखाई देना मुश्किल है। इसलिए यदि SMP का पूर्ण रूप से अवलोकन करना है तो यह दीर्घकाल में ही संभव है। SMP दीर्घकाल में ही संभव है। SMP दीर्घकाल नियोजन में लगे देशों पर ज्यादा सही नहीं बैठता।

प्रति व्यक्ति सीमांत पुनर्निवेश गुणांक कसौटी
(The Marginal Per Capital Reinvestment Quotient Creation (MPCRQ)

पुनर्निवेश कसौटी प्रो॰ गलेन्सन तथा प्रो॰ लीबन्स्टीन ने प्रस्तुत की है। इसको अतिरेक की दर सिद्धान्त भी कहा है। SMP कसौटी को नकारते हुए उनका तर्क है कि सही निवेश कसौटी प्राप्त करने के लिए फैसला लेने वालों को विकास प्रक्रिया के दौरान अर्थव्यवस्था के लिए उपयुक्त लक्ष्य निर्धारित करने चाहिए। लेकिन आर्थिक विश्लेषण लक्ष्य निर्धारित करने में ज्यादा सहायता नहीं करते। इस कसौटी के अन्तर्गत गलेन्स तथा लिंबस्टन वर्तमान की बजाय भविष्य में प्रति व्यक्ति उत्पादन आर्थिक पर बल देते हैं। यह तभी संभव है जब बचतों की दर को अधिकतम बढ़ाया जाए। जिससे आय का पुनर्निवेश हो। इसलिए आर्थिक विकास का अभिप्राय है अर्थात् इसका उद्देश्य है भविष्य में प्रति व्यक्ति उत्पादन को बढ़ाना। इसलिए उत्पादन प्रक्रिया के दौरान निवेश का चुनाव प्रति यूनिट में इस प्रकार करना चाहिए कि प्रत्येक श्रमिक को अधिक उत्पादन क्षमता दिखाने का मौका मिले। इस परिणाम को प्राप्त करने के लिए निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए (1) प्रति श्रमिक पूँजी की रकम (2) श्रम शक्ति की योग्यता-उसकी ज्ञान, कुशल, शक्ति तथा अपनाने की क्षमता इस कसौटी को पूरा करने के लिए पूँजी-उत्पादन अनुपात करना तथा प्रति श्रमिक पूँजी की उपलब्धता भविष्य में दो बातों पर निर्भर करेगी (a) प्रारम्भिक निवेश से अथवा निवेश से प्राप्त उत्पादन से वर्ष प्रति वर्ष अतिरेक पुनर्निवेश उपलब्ध होना (b) श्रम शक्ति के आकार में बढ़ोतरी (व द्धि)

पूँजी श्रम से अनुपात प्रति व्यक्ति उत्पादन संभावना और प्रति व्यक्ति विनियोज्य अतिरेक बढ़ाने के लिए। गलेन्सन तथा लीबन्स्टीन उन देशों में भी पूँजी गहन तकनिकों का समर्थन करते हैं जहाँ पूँजी की कमी है तथा श्रम की मात्रा ज्यादा है। यदि

श्रम की बजाय पूँजी का अधिक प्रयोग किया जाए तो आय का बड़ा हिस्सा लाभ में तथा थोड़ा हिस्सा मजदूरी में रह जाता है। इसलिए आय का बड़ा भाग लाभ के रूप में निवेश के लिए उपलब्ध रहता है।

इसलिए अधिक लाभ होने पर बचतें भी अधिक होंगी। इसके परिणाम स्वरूप निवेश के लिए अधिक पूँजी उपलब्ध होगी तथा उत्पादन में अधिक व द्धि होगी। गेलन्सन तथा लिंबस्ट्रीन ने इस कसौटी को इस प्रकार दर्शाया है। उसके अनुसार निवेश की दर इस प्रकार है-

$$r = \frac{P - ew}{k}$$

P = उत्पादन (शुद्ध उत्पाद) प्रति मशीन

E = प्रति मशीन श्रमिकों की संख्या

W = वास्तविक मजदूरी दर

K = प्रति मशीन लागत

इस मान्यता का अभिप्राय है कि लाभ का सारा हिस्सा पुनर्निवेश तथा सब मजदूरी उपभोग की गई है। यही पूँजीपति की लाभ की दर की कसौटी है। इन मान्यताओं के आधार पर पुनर्निवेश का तरीका हैरॅड डोमर के व द्धि दर के तरीका जैसा है। एक बार यदि इस तरह से किया जाए तो r में बढ़ातरी होने पर व द्धि दर भी बढ़ेगी।

सीमाएं
(Limitation)

गेलन्सन लिंबस्टन कसौटी पर कि सभी लाभ पूँजी से प्राप्त होंगें उसका पुनर्निर्वेश होगा यह एक प्रश्नचिन्ह है इनकी मान्यता पर भी लाभ के साथ (निवेश) तथा मजदूरी उपभोग पर। A. K. Sen ने इस मान्यता की आलोचना की है।

1. गेलन्सन लिंबस्टन कसौटी इस मान्यता पर आधारित है कि तकनीक के चुनाव के बावजूद प्रारम्भिक निवेश का मूल्य स्थिर है। इस मान्यता के साथ केवल यही संभव है कि उस तकनीक के बारे में सोचना चाहिए जो निवेशित अतिरेक बढ़ाने के साथ व द्धि दर को भी बढ़ाए। यद्यपि यह मान्यता सभी क्षेत्रों में सही नहीं है। A. K. Sen के अनुसार जब उपभोग की प्रव ति निवेश में अपना योगदान करती है तो यह मान्यता की उपभोग पर सारी मजदूरी खर्च सही नही है।

2. गेलन्सन लिंबस्टन भुगतान संतुलन की समस्या से भी असहमत है जो तकनीक के चुनाव से उत्पन्न होती है। उन्होंने विदेशी वस्तु की लागत तथा घरेलु लागत के बीच कोई अन्तर नहीं किया है। जब एक तकनीक को प्रयोग करने में उच्च विदेशी खर्च (आयात खर्च) होता है तो इसके अपनाने में भुगतान संतुलन से उत्पन्न होने वाली समस्या के बारे में ध्यान रखना चाहिए। सेन के विचार से इनकी मान्यता आयात लागत मापने का सही तरीका है। इसके आयात व निर्यात के बीच का लागत अन्तर। दुर्भाग्यवश लिंबस्टन ने इन दोनों को इकट्ठा करने पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया।

   अन्त में यह कसौटी उपभोग के महत्त्व की उपेक्षा करती है बल्कि उसके घटाने पर बल देती है। परन्तु हो सकता है कि भावी उपभोग की अपेक्षा चालू उपभोग अधिक महत्त्वपूर्ण हो और समाज के हित में पुनर्निवेश घटाना पड़े। पूँजी पक्ष में उपभोक्ता वस्तु क्षेत्र की उपेक्षा करने में अर्थव्यवस्था को गँभीर परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। क्योंकि अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में वस्तुओं की दुर्लभता, स्फीति तथा सामाजिक अशान्ति आएगी। इस कसौटी में आय के असमान वितरण की समस्या भी विद्यमान रहती है। क्योंकि पूँजीपतियों, मजदूरी प्राप्तकर्ताओं तथा जिन्हें रोजगार नहीं मिलता उसके बीच आय की समानता है।

काल श्रेणी कसौटी
(The Time Series Criterion)

सेन ने काल श्रेण कसौटी प्रस्तुत की है। यह कसौटी काल की दी हुई निश्चित अवधि के अन्दर उत्पादन को अधिकतम बनाए रखने का प्रयत्न करती है। सेन निवेशक नियोजक के बारे में बात करता है जो विभिन्न तकनीकों के बीच चुनाव करने की दुविधा में रहता है। यहाँ हम केवल दो तकनीकों का अध्ययन करेंगे। यदि (m_1/m_2) तकनीक एक व दो के निवेश के स्तर का अनुपात और यदि (r_1/r_2) पुनर्निवेश का अनुपात है जो तभी संभव होगा। जब निवेशक इस तकनीक का चुनाव करेगा। तकनीक

एक निम्न व ऊँच व द्धि दर दिखलाएगी जो इस बात पर निर्भर करेगी कि m_1r_1, m_2r_2 की अपेक्षा कम है या ज्यादा। लेकिन दो तकनीकों के बीच चुनाव के लिए काफी नहीं है। यह बहुत अधिक संभव है कि उच्च व द्धि दर से सामाजिक कल्याण का उच्च स्तर संभव हो। सेन का तर्क है कि कौन सी तकनीक समय के अनुसार लाभदायक हो सकती है यही काल श्रेणी है। सेन के अनुसार सामाजिक कल्याण को देखने के लिए आय प्रवाह की दो काल श्रेणी लेकर हमें काल कटौती की संबंधित दर अपनानी चाहिए। समय कटौती दो कारणों से आवश्यक है। (a) बढ़ती आय के स्तर के साथ घटती आय की घटती सीमांत सामाजिक उपयोगिता (b) भविष्य की अनिश्चितता।

आय के निश्चित स्तर पर बढ़ने के बाद यदि आय की सीमांत सामाजिक उपयोगिता तेजी से गिरकर नकारा हो जाती है तो, यह संभव है कि आय की ऊँची व द्धि दर हमें पूर्ण सामाजिक संतुष्टि न दे। सेन मानते हैं कि एक बिन्दु के पश्चात् यह गिनती लागू न हो यह मुश्किल है कि यह घटना भविष्य में भी घटेगी या नहीं। इसलिए श्रम गहन तकनीक व पूँजी गहन तकनीक को समय श्रेणी के हिसाब से कैसे अपनाया जाए। श्रम गहन तकनीक की तुलना में उत्पादन की प्रारम्भिक न्यूनता को प्राप्त करने के लिए पूँजी गहन तकनीक जो समय लेती है, प्रोफेसन सेन ने उसे पुनः प्राप्ति की अवधी (Period of Recovery) कहा है, जिसे चित्र 1 की सहायता से स्पष्ट किया है।

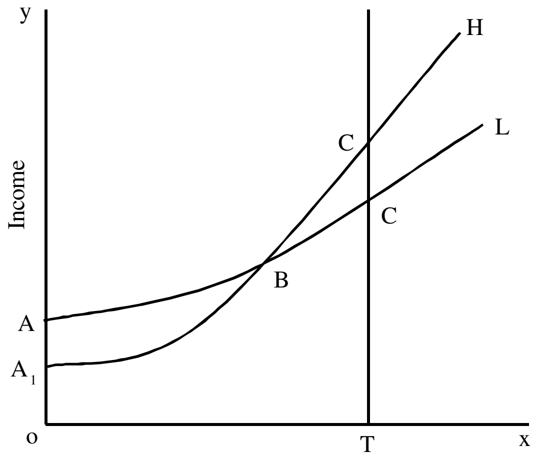

Time **तकनीक चुनाव निवेश कसौटी**

चित्र 1

चित्र 1 में सेन ने OT को प्राप्ति की अवधी बताया है (BCC) पूँजी गहन तकनीक के लिए अतिरेक क्षेत्र (BAA) की काल क्षेत्र के बराबर हैं। वक्र H और L उपभोग की काल श्रेणी को दर्शाती है। जो पूँजी गहन तकनीक और श्रम गहन तकनीक के साथ निकलती है।

अब यह मानकर चलाते है कि निवेश नियोजन U समय को लेकर चलता है यदि U=T निवेश नियोजक दोनों तकनीकों के बीच विभिन्नता रखेंगे। दोनों में कोई भी हो सकती है। यदि $U < T$ है तो वह तकनीक L का चुनाव करेगा, यदि $U > T$ है तो H तकनीक।

सीमाएँ
(Limitation)

प्रो॰ सेन ने स्वयं इस कसौटी की कुछ सीमाएँ दी हैं।

1. यह मान लिया गया है कि U समय के अन्त तक कोई काल (Time) Preference नहीं है और आय की प्रत्येक यूनिट की कीमत बराबर है। लेकिन U समय के बाद, आय की कोई कीमत नहीं। यद्यपि काल पद्धति को एकदम लाया गया है। लेकिन काल श्रेणी को हमेशा लेकर नहीं चल सकते इसलिए निवेश अवधि निश्चित रूप से तय करनी पड़ती है। परन्तु इससे कुछ समस्याएँ उत्पन्न होती है। यदि अल्पकाल में उत्पादन बढ़ाना पड़े तो श्रम गहन तकनीक का प्रयोग करना पड़ेगा और पूँजी गहन तकनीक अपेक्षित रह जाएगी। इसके फलस्वरूप से निवेश नियत अवधि के पश्चात् फल देगा और हो सकता है मशीनों में मूल्य ह्रास को पूरा करने में कठिनाई न हो।
2. प्रो॰ सेन की पुनः प्राप्ति की अवधि में कोई वास्तविकता नहीं है। यदि हम U = I मान लेते हैं। सेन का सिद्धान्त प्रो॰ पोलक बुचनन के पुनः प्राप्ति की अवधी की दर के बराबर है। यह बताता है कि निवेश नियोजक की रूचि सीमित है। इसलिए वह तकनीक अपनानी चाहिए जो एकदम उत्पादन की ऊँची दर को बढ़ा सके । यदि हम मान ले कि U = 8 सेन की पद्धति गेलसन लिंबस्टन का पुनर्निवेश कटौती की दर के बराबर है, जिसमें यहाँ व द्धि की ऊँची दर है जिसे सब चाहते हैं।

निष्कर्ष (Conclusion)

ऊपर वर्णित तकनीक में प्रत्येक अर्थशास्त्री का अंतिम लक्ष्य राष्ट्रीय उत्पादन को अधिक बढ़ाने की द ष्टि से भिन्न-भिन्न नहीं है। गेलन्सटन और लिंबस्टन अपनी पद्धति को गत्यात्मक मानते है। ए॰ के॰ सेन ने भी गत्यात्मक तत्व को साथ लिया है। लेकिन सभी ने उन रूकावटों को ध्यान में नहीं लिया जो भविष्य के लिए प्रभावित हो सकती है।

अध्याय-22

लागत-लाभ विश्लेषण

(Cost-Benefit Analysis)

परियोजनाओं के मूल्यांकन के लिए लागत लाभ विशलेषण सबसे सही तरीका है। लागत-लाभ विश्लेषण में यह देखना है कि क्या प्रोजेक्ट A, B, C इत्यादि में एक साथ निवेश संभव है, और यदि निवेश करने वाले फंड सीमित हैं, तो इन सबका चुनाव कैसे करना चाहिए। यह चुनाव अधिकता को शामिल करता है। इस बात पर बहस है कि निवेश नियोजक किसे बढ़ाना चाहता है। साधारण तौर पर निवेश नियोजक लाभ बढ़ाकर लागत कम करना चाहता है। यह साधारण फार्मूला कई प्रश्न खड़े कर देता है।

1. परियोजना मूल्यांकन में कौनसी लागत व लाभ शामिल करने चाहिए?
2. इन लागतों तथा लाभों की कीमत कैसे निकाली जाए। (मूल्य कैसे आंका जाए)?
3. परियोजना के लाभ को कैसे मापा जाए?
4. वाणिज्यिक लाभ की क्या सीमाएँ हैं?
5. परियोजना मूल्यांकन में अनिश्चितता का क्या महत्त्व है (सम्बन्ध है)?
6. संबंधित रूकावटें क्या हैं?

लागतों व लाभों को शामिल करना
(Costs and Benefits to be Considered)

सामाजिक द ष्टिकोण से जब लागत लाभ को शामिल किया जाए तो उसमें बाहरी मितव्ययिताएँ, अमितव्ययिताएँ और द्वितीय लाभ भी शामिल करने चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए परियोजना को परिभाषित ही नहीं बल्कि इसके आर्थिक जीव को भी ठीक ढ़ंग से मापना चाहिए।

1. **परियोजना के अर्थ** (Definition of Project): परियोजना जो लागत-लाभ विश्लेषण से संबंधित है और अपने आकार तथा प्रकृति के बारे में साफ हैं। लेकिन जहाँ एक या अधिक परियोजना के बीच गहरा संबंध है, वहाँ परियोजना के आकार को सीमित नहीं कर सकते। इन सभी में भत्ते (Allowances) माँग तथा पूर्ति के बीच संबंध स्थापित करने के लिए प्रयोग करने चाहिए। यह संबंध प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हो सकता है। प्रत्यक्ष संबंध का उदाहरण, यदि कोई राज्य नदी पर ऊपर की तरफ बनाती है तो यह नीचे से बाँध की सिंचाई क्षमता को प्रभावित करेगी। इस संदर्भ में लागत -लाभ विशलेषण के बाँध के ऊपर तथा नीचे में सीधा संबंध स्थापित करने के लिए भत्ते दिए जाएँगे, क्योंकि यह सिंचाई व्यवस्था को प्रभावित करेगी। इस संदर्भ में भत्ते पहली तथा तीसरी परियोजना के बीच संबंध होने की वजह से भी दिए जाऐंगे, चाहे संबंध की प्रकृति अप्रत्यक्ष हैं।

2. **बाहरी प्रभाव** (External Effect): लागत-लाभ विश्लेषण में बाहरी प्रभावों का भी अध्ययन आवश्यक है जैसे-पर्यावरण दुषित, इत्यादि जो उद्योगों के स्थापित होने पर पनपते हैं। रोड़ (सड़क) पर चलने वाले लोग अतिरिक्त गाड़ियों के चलने से परेशान। पेड़ों या जंगल को काटने से मिट्टी तथा वर्षा पर विपरित प्रभाव। बाहरी प्रभाव फायदेमंद भी हो सकता है।

   बाहरी प्रभावों को अचानक होने वाले प्रभावों का नाम दिया है जो परियोजना पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालते हैं न कि अप्रत्यक्ष प्रभाव जो कीमतों से उत्पन्न होते हैं।

3. **द्वितीय लाभ (Secondary Benefits):** द्वितीय लाभ कीमत संयंत्र के सही रूप में काम करने से प्राप्त होते हैं। द्वितीस लाभ, लागत-लाभ विशलेषण से अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए हैं। द्वितीय लाभ भारत जैसे अल्पविकसित देश में भी उपलब्ध नहीं है। यह तभी प्राप्त हो सकते हैं जहाँ बाजार कीमत सीमांत सामाजिक लागत व लाभ को प्रभावित नहीं करती है। स्टीफन मार्गलीन ने भी कहा है कि अल्पविकसित देशों में इस तरह के लाभ संभव नहीं और इन्हें अलग से वर्णित करना चाहिए।

4. **नियोजन का जीवन (Project-Life):** नियोजन से लाभ सही मापने के लिए उसकी समय सीमा निर्धारण करना आवश्यक है। जब तक समय-सीमा निर्धारित नहीं होगी हम इसके लाभ को सही रूप से नहीं आंक सकते। नियोजन के जीवन के अंदाजे (माप), जो जीवन के भौतिक स्वास्थय जीवन पर खासतौर पर निर्भर करता है, यहाँ तकनीकी विकास तेजी से बढ़ रहा है। माँग में परिवर्तन तथा उद्यमी का प्रतियोगी स्वभाव इत्यादि। ये सब बातें नियोजन के जीवन पर प्रभाव डालती है।

लागत व लाभ का मूल्यांकन
(Valuation of Costs and Benefits)

लागत-लाभ विश्लेषण के उद्देश्य से, लागत तथा लाभ का विश्लेषण करना आसान काम नहीं है। पहली स्थिति में करों की वजह से बाजार कीमत व्यवस्थित या बाजार में एकाधिकार या बाजार में असंतुलन हो सकता है। दूसरे गैर-बाजार वस्तुएँ जैसे-सार्वजनिक वस्तुएँ विश्लेषण का तरीका अलग हो सकता है। अब यह समस्या छाया कीमतों के प्रयोग करने पर जानी जा सकती है। इसका जरूरी पहलू है कि सभी कीमतों का एक आधार बनाया जाए इसी को ही प्रारम्भिक वर्ष में सन्तुलन स्तर कहते हैं। इस पहलु को देखते हुए हम उस कीमत का वर्णन कर सकते हैं जो लागत व लाभ को विश्लेषण करने के लिए प्रयोग की जाती है। अधिकतर समय बाजार कीमत लाभ व लागत की सही कीमत देने के लिए प्रयोग की जाती है। यद्यपि इसमें कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

1. **अधिकतर परियोजना बाजार कीमत प्रभावित करने में समक्ष (Project Large Enough to Effect Market Price):** जहाँ पर निवेश परियोजन काफी बड़े हैं वे बाजार कीमत को प्रभावित करते हैं। (आगत तथा निर्गत की), इन कीमतों को एक दूसरे से संबंधित न करने तक इनका प्रयोग करना सही नहीं है। अन्तिम उत्पादन में न तो पुरानी न नई कीमत निवेश से होने वाले लाभ के लिए प्रयोग करनी चाहिए, क्योंकि पहली अन्दाजें बढ़ाएगी तथा दूसरी अन्दाजे कम करेगी। इस संबंध में माँग वक्र लिनियर होगा तथा वास्तविक व एक दम (Ultimate) स्तर के बीच की कीमत ही लाभों का अंदाजा लगाने के लिए प्रयोग करनी चाहिए।

2. **वस्तुएँ या साधन बाजार में अपूर्णता (Imperfection in Goods or Factor Market):** दोनों वस्तुएँ और साधन अपूर्ण है, इसलिए पैरोटो-ओपटिमम (अधिकता) से हटना आम बात है। इस संदर्भ में एक निवेश नियोजन में बाजार कीमत सही तौर पर लाभ व लागत का अंदाजा नहीं लगा सकती। कीमत में उतार-चढ़ाव को काबू करने के लिए जो एकाधिकार से उत्पन्न होती, ऐसे ठीक करने वाले तत्व से निवेश नियोजन के चुनाव में गलती चुनाव में गलती होगी।

3. **कर (Taxes):** लागत लाभ विश्लेषण का मूल्यांकन करते समय अधिकतर अप्रत्यक्ष कीमत का प्रयोग नहीं होता। यदि आगत पूर्ति पूर्ण रूप से अलोच है इसको साधन लागत की बजाय बाजार कीमत पर विश्लेषण करना सही नहीं है। आयात की गई वस्तुओं को भी जिस पर ऊँची टैरिफ कर है। लेकिन सार्वजनिक नियोजन से होने वाली आय और इस आय पर कर का नियोजन से कोई संबंध नहीं है।

4. **बेरोजगार (Unemployment):** अधिकतर अर्थशास्त्रियों का मानना है कि जब अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी की स्थिति है तो रोजगार प्रदान करने में (लगाने में) सामाजिक लागत तथा निजी लागत के बीच अंतर होगा। इस संदर्भ में वर्तमान मजदूरी जो सामाजिक लागत से अधिक है इसको समरूप करना पड़ेगा। लेकिन बाजार कीमत के साथ मजदूरी को समरूप करना मुश्किल है। क्योंकि बाजार की मत नियोजन में होने वाले खर्चों की तरफ कोई ध्यान नहीं देती यद्यपि गुणक की प्रक्रिया से अर्थव्यवस्था में वास्तविक आय में इजाफा (बढ़ोतरी) होगी।

   इसलिए लाभों व लागतों को किसी सामान्य मुद्रा ईकाई में वास्तविक, बाजार कीमतों की बजाय आगतों और निर्गतों की छाया कीमतों में मापा जाता है।

लाभ का माप
(Measure of Profitability)

उद्यमी का लाभ आय (Revenue) व लागत के बीच अन्तर है। नियोजन में लाभ समय दर समय प्राप्त होता है। इसलिए समय दर समय इसकी गणना करनी चाहिए। इसको मापने में भी कठिनाई आती है। (1) वर्तमान कीमत फार्मूला (2) प्रतिफल की आंतरिक दर फार्मूला।

1. **वर्तमान कीमत (मूल्य) फार्मूला और ह्रास दर का चुनाव (Present Value Criterion and the Choice of the the Discount Rate)** :- परियोजन का मूल्यांकन उससे प्राप्त होने वाले लाभों के आधार पर किया जाता है। यह उस सीमा तक लाभदायक होता है जब तक लोगों की आय में व द्धि होती है। आय में व द्धि उत्पादन परियोजन का मूल्यांकन उससे प्राप्त होने वाले लाभों के आधार पर किया जाता है। यह उस सीमा तक लाभदायक होता है। जब तक लोगों की आय में व द्धि उत्पादन तथा उपभोग में वास्तिवक व द्धि द्वारा मापी जाती है लाभ वास्तविक, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हो सकते।

   परियोजन में शुद्ध लाभ का पता करने के लिए एक तरफ की ब्याज दर प्रयोग करना सही नहीं है। आमतौर पर इसके लिए हम एक ही तरफ की ब्याज दर का प्रयोग करते हैं। मान लो V समय झुकाव दर है जो नियोजन से प्राप्त होने वाले लाभ की गणना करने के लिए प्रयोग किया जाता है। उपभोग सन्दर्भ में परियाजना की कीमत =

$$PV = B_0 - C_0 + \frac{B_1 - C_1}{(1+V)} + \frac{B_2 - C_2}{(1+V)^2} + ---- \frac{B_n - C_n}{(1+V)^n}$$

   PV_2 नियोजन से होने वाले कुल लाभ की वर्तमान कीमत

   B = लाभ

   C = लागत

   N = नियोजन का आर्थिक जीवन

   V = समय झुकाव की दर जो ह्रास दर के बराबर है।

   वर्तमान कीमत फामूला में सभी नियोजन जिसकी वर्तमान कीमत धनात्मक है लिए जाएँगे और इससे सामाजिक कल्याण में व द्धि होगी। यदि ये शर्तें पूरा नहीं करते तो उस नियोजन को नहीं लिया जाएगा वही नियोजन चुने जाएँगे जिनकी लागत घटती जा रही है।

   वर्तमान कीमत फार्मूला में यही देखना है कि परियोजन की दर (लागत दर) घटाने के लिए कौन सा ह्रास दर फार्मूला अपनाया जाए। इसको तीन भागों में विभाजित करेंगे। (1) बाजार में ब्याज दर (2) सामाजिक समय झुकाव दर (3) सामाजिक समय झुकाव दर (3) सामाजिक इच्छित (Opportunity) लागतें दर।

ब्याज की बाजार दर
(Market Rate of Interest)

ब्याज दर को निर्धारित करने वाले सिद्धान्त बताते हैं कि बाजार में ब्याज की दर एक ही उपस्थित रहती है। लेकिन वास्तविकता में कई दरें देखने की मिलती है। इसलिए हमेशा ब्याज दर के चुनाव की समस्या रहती है। यह सलाह दी जाती उपलब्ध सभी ब्याज दरों में जो जोखिम को कम करती है। वही सही दर है। यह अविश्वसनीय है कि क्या यह ब्याज दर निवेश की सीमांत उत्पादकता व समय झुकाव के बीच कोई अन्तर रखती है। इस तरह का संबंध पूँजी बाजार के संगठन पर निर्भर करता है। यह भी मान्यता है कि पूँजी सही रूप से संगठित है। इस बात से हर एक सहमत कि स्फीति की स्थिति में ब्याज दर कों एक जगह स्थिर करना पड़ेगा। प्रो॰ एम॰ ए॰ फैडलस्टन का कहना है कि निजि निवेशक को पूर्ण-बाजार दर उसका कल्याण बढ़ाने में मदद कर सकती है लेकिन यह सामाजिक प्रेरित कसौटी के लिए काम नहीं करेगा।

सामाजिक समय झुकाव दर
(The Social Time Preference Rate)

सामाजिक समय झुकाव दर विभिन्न समय में उपभोग की महत्ता को मुल्यांकन करती है। यद्यपि यह फलन भविष्य में उपभोग प्रदान करने के लिए कोशिश (प्रयत्न) करता है। इसलिए Social Time Preference Rate (STPR) को स्थिर दर का आकार लेने की आवश्यकता नहीं है। STPR को निर्धारित करने के लिए उपलब्ध ब्याज की बाजार दर (उपलब्ध दर) का प्रयोग कर सकते हैं। इसलिए STPR फलन सामाजिक मूल्य व सार्वजनिक निजी को प्रभावित कर भविष्य में आर्थिक स्थिति के बारे में फैसला ले सकते हैं। यह प्रबन्धकीय तौर पर निर्धारित होना चाहिए।

पूँजी बाजार अपूर्ण है तथा जोखिम व अनिश्चितता गुणक ब्याज दर उपस्थित रहने के साथ ब्याज दर में व द्धि को आमंत्रित करती है। अर्थशास्त्रीयों का मानना है कि STPR का सही रूप से राजनैतिक निर्धारण होना चाहिए। वे इस बात पर जोर देते हैं कि केवल राज्य ही निवेश की सामूहिक माँग की जाँच कर भविष्य के लिए लाभदायक बना सकती है। निजि सिर्फ स्वयं की संतुष्टि व लाभ को देखते हैं। राज्य सरकार अपनी वस्तुओं को बाजार में उतार कर तथा सार्वजनिक वस्तुओं के बारे में राय जानकर इस गल्ती को ठीक कर सकती है।

लेकिन STPR में ह्रास दर निर्धोरित करने में काफी कठिनाईयाँ हैं।

1. सामाजिक छूट (ह्रास) दर को निर्धारित करना मुश्किल है। प्रो॰ मर्गलीन ने इसका उपाय दिया है। उसका कहना है कि पहले लक्ष्य व द्धि दर का फैसला करना चाहिए और फिर पूँजी उत्पादन अनुपात के आधार पर निवेश की दर निर्धारित कर सकते हैं। यदि इस प्रकार किया जाए तो सामाजिक छूट दर निवेश की सीमांत उत्पादकता के बराबर हो सकती है।

2. दूसरी समस्या प्रेस्ट व टर्वे के अनुसार सार्वजनिक व निजि क्षेत्र में विभिन्न ब्याज दरें प्रयोग की जाती हैं। इससे निवेश क्षेत्र में फंड वितरित करने में अविशिष्टता उत्पन्न होगी। क्योंकि कुछ क्षेत्रों जैसे बिजली, तेल के लिए निजी क्षेत्र के लिए सरकार जिम्मेदार है। इससे बुरे परियोजन (Inforior Project) अच्छे परियोजन (Superior Project) की जगह ले लेंगे।

प्रतिफल का आंतरिक दर फार्मूला
(Internal Rate of Return Approach)

कीमत सिद्धान्त के संबंध में लागत लाभ विशलेषण बताता है कि यह (प्रतिफल का आंतरिक फार्मूला) वर्तमान कीमत को मापने के लिए एक विकल्प है। वर्तमान कीमत तरीके की तरह, आंतरिक दर की प्रतिफल कसौटी भी समय लेती है। अथवा समय का ध्यान रखती है। आंतरिक प्रतिफल की दर छूट की दर (i) जो परिवर्तन की वर्तमान लाभ दर को वर्तमान लागत दर को बराबर करती है। दूसरे शब्दों में आंतरिक प्रतिफल की दर वह छूट की दर (i) है जो नियोजन की वर्तमान शुद्ध कीमत को शुन्य पर रखती है। यद्यपि हम इस प्रकार निकालते हैं-

$$O = B_0 - C_0 + \frac{B_1 - C_1}{(1+i)} + \frac{B_2 - C_2}{(1+i)} + \text{------} + \frac{B_n - C_n}{(1+i)^n}$$

B = लाभ (Benefits)

C = लागत

N = समय अवधि जिसमें नियोजन अपना प्रभाव दिखाता है।

अब यही नियोजन लिया जाएगा जो यदि i सामाजिक छूट दर को बढ़ाये।

अधिकतर परियोजनाओं में, आंतरिक प्रतिफल दर कसौटी दर वही उत्तर देती है जो वर्तमान कीमत सिद्धान्त ने दिए हैं। यद्यपि

आंतरिक प्रतिफल दर का प्रयोग न करने के तीन कारण दिए हैं। (1) यह कसौटी सही नहीं है (यह वही बात बताती है जो वर्तमान मूल्य कसौटी (सिद्धान्त) बताता है। यह केवल एक तरीका है। (2) यदि दो परियोजनाओं के बीच आपसी समझ है तो, वहाँ यह सही परिणाम रेंक के बारे में नहीं बताता (3) प्रतिफल की आंतरिक दर हमेशा एक जैसे परिणाम नहीं देती।

वर्तमान कीमत बनाम आंतरिक प्रतिफल दर कसौटी
(Present Value Versus Internal Rate of Return Critorion)

ये दोनों कसौटी परियोजनाओं के चुनने में प्रयोग की जाती है। वर्तमान कीमत पद्धति में जो परियोजना धनात्मक कीमत रखती है वे चुनी जाती हैं आंतरिक प्रतिफल दर में यदि आंतरिक प्रतिफल की दर सामाजिक छूट से ज्यादा है वही परियोजना चुनी जाएगा। लेकिन यह चुनाव संभव नहीं है अथवा परियोजनाओं के चुनाव में तत्व का अनुकरण करने से कोई अंतर नहीं है। क्योंकि छूट दर में व द्धि होने पर ही वर्तमान कीमत में कमी आएगी। इस तत्व को चित्र 1 में दिखाया गया है कि क्या यह

चित्रः Project Selection on present value and Internal Rate of Return Creiterion

इसको अपनाती है या नहीं।

इस चित्र में सामाजिक छूट दर OR से कम है, परियोजनाओं को दोनो तरीके से अपना सकते हैं। इसके विपरित यदि छूट दर OR से ऊँचा है परियोजन को नकार दिया जाएगा। इसलिए दोनो वर्तमान कीमत और आंतरिक प्रतिफल दर कसौटी के बीच कोई मनमुटाव नहीं है।

परियोजनाओं के दोनों तरीकों के बीच तभी मनमुटाव पैदा होगा जब सभी परियोजनाओं दोनों को सन्तुष्ट करने में लगी हों। यह स्थिति वास्तिविक स्थिति है। एक परियोजना से दूसरी परियोजना के बीच चुनाव को निम्नलिखित तरीके से वर्णित कर सकते हैं। मान लो दो परियोजना A तथा B हैं। किसी कारण से एक ही ले सकते हैं। A की आन्तरिक प्रतिफल दर 20 प्रतिशत तथा B की 10 प्रतिशत है। लेकिन पहले सामाजिक छूट दर प्रतिशत देने के बाद 10 करोड़ रूपए तथा आखिरी 20 करोड़ रूपये है। सामाजिक उपयोगिता के सम्पर्क में इन दोनों के बीच झगड़ा पैदा होगा।जिसको चित्र 2 से दिखाया गया है।

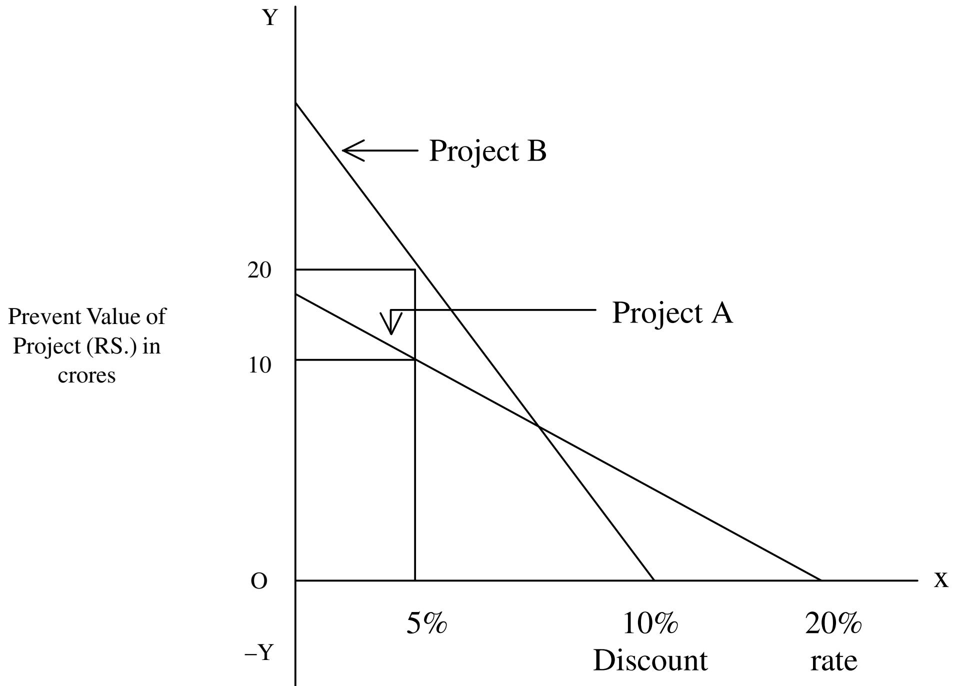

Conflict between prevent value and inernal rate of return

वर्तमान मूल्य कुल लाभ को दर्शाता है अथवा कुल लाभ का माप प्रदान करता है। जबकि आन्तरिक प्रतिफल दर नहीं। इसलिए, प्रोजेक्ट के चुनाव में वर्तमान मूल्य कसौटी आन्तरिक प्रतिफल दर कसौटी की बजाय सही अथवा उपयुक्त है। उदाहरण के तौर सामाजिक छूट दर 5 प्रतिशत है, परियोजना B परियोजना A की अपेक्षा दुगुना लाभ कमाती है। इसलिए पहले के पक्ष में साफ चुनाव होगा। कारण यह है कि प्रतिफल की दर B की अपेक्षा ज्यादा है। यदि लागत लाभ विश्लेषण इस उदाहरण में वर्तमान मूल्य कसौटी को नकार कर आंतरिक प्रतिफल के आधार पर दोनों परियोजनाओं में से चुनाव करती है तो यह चुनाव गलत है।

परियोजनाओं की सीमाएँ
(Limitation of the Project)

लागत लाभ-विशलेषण में सार्वजनिक परियोजना का चुनाव करते समय हमेशा अनिश्चितता रही है। यह बहस का मुद्दा रहा है कि क्या सरकार को सार्वजनिक व निजी परियोजनाओं में बराबर छूट देना सही है या नहीं। इस बहस को कई अर्थशास्त्रियों ने जैसे पी॰ए॰ सैम्यूलन, स्टीफन मार्गलीन, के॰जे॰ एरो, आर॰ सी॰ लिण्ड इत्यादि ने आगे बढ़ाया है।

1. **सार्वजनिक निवेश व निजी निवेश के लिए जोखिम में छूट के लिए बराबर पद्धति (Same Criterion for Discounting of Public Investment and Private Investment)** - जेक हिरस्चैफलर का मानना है कि सार्वजनिक तथा निजी निवेश में छूट बराबर होनी चाहिए क्योंकि निजी निवेश में भी अनिश्चितता बनी होती है। निजी निवेश समय तथा जाखिम को देखते हुए निवेश में कटौती करते हैं। यदि सार्वजनिक क्षेत्र में जोखिम को अलग तरह से देखा जाए तो इस क्षेत्र में निवेश अधिक होगा। जिससे निजी निवेशक को नुकसान होगा। यदि वास्तविक तौर पर देखा जाए तो निजी निवेश में प्रतिफल की दर ज्यादा होगी। उनका मानना है कि छूट दर को ध्यान में रखने से पहले प्रतिफल की दर के बारे में भी सोचना चाहिए। यदि यह निवेश केवल सार्वजनिक उद्देश्य से किया जाए तो इससे उपयोगिता या पूर्ण प्रयोग न होने की स्थिति उत्पन्न होगी। वर्तमान समय में परियोजनाओं का मूल्यांकन करने के लिए और यह निर्धारित करने के लिए कौन शुरू की जाने योग्य है और कौन नहीं अर्थशास्त्री छाया कीमतो तथा लागतों का प्रयोग करते हैं। छाया कीमतें उत्पादन के साधनों के वास्तविक मूल्य को प्रकट करती हैं। तथा वास्तविक लागत का हिसाब है।

इसलिए सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्रों के बीच छूट से संबंधित रियायतें देने के बीच अन्तर होने पर निजी निवेशक को अधिक दी जाती है तो सार्वजनिक क्षेत्र प्रभावित होगा इसलिए सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र के बीच समन्वय स्थापित करना चाहिए ताकि प्रतिफल दर पर प्रभाव न पड़े। इसके साथ सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र में निवेश कसौटी तथा मूल्यांकन अलग-अलग होना चाहिए और प्रतिफल की छूट के लिए बाजार दर का प्रयोग कर उनका मूल्यांकन अलग करना चाहिए।

2. **जोखिम को ध्यान में न रखते हुए, सार्वजनिक व निजी परियोजना के लिए निवेश की कसौटी बराबर (Ignoring Risk-Same Criterion of Investment for Public and Private Project)** - प्रो॰पी॰ए॰ सैम्यूलसन ने कहा है कि सरकार विभिन्न बड़ी परियोजनाओं में काम करती हैं और प्रायः जाखिम सहन करने की स्थिति में भी है लेकिन निजी निवेशक विभिन्न परियोजनाओं में काम करने में सक्षम नहीं क्योंकि निवेश करने की अयोग्यता। इसलिए सरकार अनिश्चितताओं के साथ तालमेल कर सकती है। निजी निवेशक तालमेल करने की क्षमता में नहीं हैं। इन सब कारणों को देखते हुए सार्वजनिक तथा निजी परियोजनाओं का मूल्यांकन एक जैसा होकर अलग-अलग नहीं होना चाहिए। निजी परियोजन तथा सार्वजनिक परियोजन में छूट दर भी एक जैसी होनी चाहिए। न कि जिसमें ज्यादा जोखिम है उसमें ज्यादा तथा जिसमें जोखिम कम है तो उसमें कम।

3. **मनमानी छूट दर (Arbitrary Discount rate)** - किसी भी परियोजना में सामाजिक छूट दर मनमानी हो सकती है। यदि लाभ के वर्तमान मूल्य का आंकलन करने के लिए मनमानी ऊँची दर लागू की जाए तो परियोजना के दीर्घकालीन प्रभावों का सही रूप से आंकलन नहीं कर सकते यह तर्क परियोजना के प्रतिफल की आंतरिक दर पर भी लागू होता है।

4. **संयुक्त लाभों तथा लागतों की उपेक्षा (Neglects Joint Benefits and Costs)** - लागत-लाभ विशलेषण परियोजना के लिए उसमें होने वाले संयुक्त लाभ व लागतों को अनदेखा किया गया है। क्योंकि किसी भी परियोजना में होने वाले प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष लाभों का अलग से अध्ययन नहीं किया गया है तथा इसकी गणना करना भी मुश्किल है। इसी प्रकार परियोजना में संयुक्त लागतें पाई जाती है जिनको अलग नहीं किया जा सकता तथा इसकी गणना भी नहीं की जा सकती।

5. **विकल्प लागतों की उपेक्षा (Ignores Opportunity Cost)** - सार्वजनिक तथा निजी परियोजनाओं के चुनाव में विकल्प लागतों को अनदेखा किया गया है यदि परियोजना में प्रतिफल निवेश से ज्यादा होंगे तो उन्ही परियोजनाओं का चुनाव होगा।

6. **बाह्यताएँ (Externalities)** - बड़ी परियोजनाओं पर बाहरी प्रभाव भी पड़ते है जिसकी गणना करना कठिन काम है। किसी भी परियोजना में तकनीक प्रभाव और धन संबंधी प्रभाव बाह्यताएँ हो सकती है। जैसे किसी परियोजना का निर्माण करने से उसके साथ-साथ प्रभावित होने वाले दूसरे क्षेत्र और उनमें उत्पन्न होने वाली समस्याओं का निवारण बाहरी तत्व हैं जो परियोजना को प्रभावित करते हैं।

अध्याय-23
मौद्रिक नीति (मुद्रा)
(Monetary Policy)

मुद्रा नीति वह नीति है जो जनता के पूँजी स्टाक स्थापन्न या इन सम्पतियों के लिए जनता की माँग या दोनों को अथवा नीति जनता के अन्दर लिक्विडिटी की स्थिति बताती है अथवा इसको प्रभावित करती हैं। यूरोप में 1930 में महा मंदी से पहले मुद्रा नीति को आर्थिक नीति का प्रभावित यंत्र माना जाता था। यह महसूस किया गया था देश के केन्द्रीय बैंक द्वारा दोनों स्फीति तथा मंदी को नियन्त्रित किया जा सकता है। लेकिन द्वितीय युद्ध में उत्पन्न होने वाली परेशानियों को मौद्रिक नीति नियन्त्रण करने में असफल रही। इसलिए केन्ज ने मुद्रा नीति से राजकोषीय नीति में प्रस्थान करने के लिए कारण बताए हैं। उनके अनुसार मौद्रिक नीति की बजाय राजकोषिय नीति आर्थिक वस्तुओं पर ज्यादा प्रभाव डालती है और यह मन्दी या बढ़ोतरी को नियंत्रण करने में ज्यादा प्रभावशाली है। लेकिन अल्पविकसित देशों में मुद्रानीति का, वर्तमान समय में महसूस किया गया है कि यह कीमत स्थिरता तथा पूर्ण रोजगार प्रदान करने में अहम् भूमिका अदा कर सकती है। यह तथ्य है कि राजकोषीय नीति से इन उद्देश्यों को पूरा नहीं कर सकते हैं। इसलिए राजकोषीय नीति मुद्रा नीति के साथ प्रयोग करना चाहिए यदि हम ज्यादा फायदा प्राप्त करना चाहते हैं।

मुद्रा नीति के उद्देश्य
(Objective of Monetary Policy)

अल्पविकसित देशों में मुद्रा नीति का पहला उद्देश्य है आर्थिक व द्धि। दूसरे उद्देश्य जो व द्धि के साथ संबंधित है पूरे किए जा सकते हैं। मुद्रा नीति का उद्देश्य ऊँचे व द्धि दर है और इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए यह चार आर्थिक यंत्रों पर काम करती है। (1) ब्याज दर ढाँचा (2) मुद्रा की कुल पूर्ति (3) साख की पूर्ति (4) वित्तिय संगठनों का ढाँचा (आकार) बढ़ाना।

1. **ब्याज दर ढाँचा (The Interest Rate Structure)** - ब्याज की दर को निवेश निर्धारित करने के लिए अहम् कारण माना है। नीची ब्याज दर निवेश को बढ़ाती है तथा ऊँची ब्याज दर निवेश कम करती है। इसलिए मुद्रा नीति की बनावट इस प्रकार की जाती है कि ब्याज कर दर को कम करके निवेश बढ़ाया जाए। लेकिन 1930 की महामंदी ने यह दिखाया है कि केवल ब्याज दर ही निवेश को नहीं बढ़ा सकती। ब्याज की दर बहुत नीचे किया गया फिर भी कोई उधार लेने वाला नहीं था। यूरोप में युद्ध के बाद निवेश की अधिकता को रोकने के लिए ब्याज की दर अधिक मात्रा में बढ़ा दी गई। उस समय भी यह नीति फेल हुई थी। निवेश में बढ़ोतरी लगातार कायम रही। यह सब बातें अर्थशास्त्रीयों को असमंजस में डालती है कि इसकी बजाय अर्थव्यवस्था में और भी कारण है जो मुद्रा नीति को प्रभावित करते हैं। ब्याज दर उनमें से एक है।

   विकसित देशों की बजाय अल्पविकसित देशों में ब्याज दर नीति अब भी कम प्रभावी है। मुद्रा नीति का उद्देश्य कम ब्याज दर तथा ऊँचा निवेश में सीधा संबंध से उत्पादन में व द्धि यह उद्देश्य ढाँचागत तथा संस्थागत कारणों की वजह से उत्पादन को बढ़ा नहीं पाता अर्थात् अल्पविकसित देशों में नीची ब्याज दर अधिक निवेश से ढाँचागत तथा संस्थागत कारणों की वजह से उत्पादन में व द्धि संभव नहीं। उदाहरण के तौर पर अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में अविकसित पूँजी बाजार, बिल बाजार और साधारण सट्टा बाजार, बैंकों की संपत्ति का ढाँचा विकेन्द्रित नहीं तथा केन्द्रिय तथा वाणिज्य बैंको के बीच प्रभावी मेल मिलाप (संगठन) नहीं। यद्यपि बैंकों की रफ्तार भी धीमी तथा सीमित है। जनसंख्या का बड़ा हिस्सा जैसे छोटे किसान, सीमांत किसान, कृषि श्रमिक, छोटे पैमाने के उद्यमी, छोटे व्यापारी इत्यादि लोकल

(गाँव) के साहूकार पर निर्भर हैं। इसलिए केन्द्रीय बैंक की मौद्रिक नीति का इस तरह के मुद्रा बाजार के असंगठित तत्वों पर कोई नियंत्रण नहीं है।

यह थोड़ा अन्वेषण अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में ब्याज दर की सीमाओं के बारे में बताता है। फिर भी यह सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र में निवेश बढ़ाने में सहायक है। उदाहरण के तौर पर, निम्न ब्याज दर ढाँचे से सरकार कम ब्याज दर पर साधन जुटाकर योजनाओं को क्रियान्वित कर सकती है। यह व्यापारी को निवेश बढ़ाने में उत्साहित कर सकती है। इसलिए अल्पविकसित देशों में सस्ती मुद्रा नीति की वकालत की जाती है। लेकिन इसके बारे में भी हमें विशेष ध्यान रखना चाहिए। सस्ती ब्याज नीति निजी व्यापारी को गैर उत्पादित तथा सट्टे की वस्तुओं जैसे- सोना, गहने, जमीन, खाद्यान्न स्टॉक आदि में प्रयोग कर सकते हैं। इसलिए यदि सस्ती मुद्रा नीति को प्रयोग में लाना है तो इस प्रकार भौतिक नियंत्रण तथा उपयोगी साख नियंत्रण होना चाहिए।

अल्पविकसित देशों में ऊँची ब्याज दर का होना सार्वजनिक तथा निजी निवेश दोनों में बाधा है। इसलिए आवश्यक है कृषि तथा उद्योगों में निजी निवेश को प्रोत्साहित करने के लिए ब्याज दर नीची होनी चाहिए। क्योंकि अल्पविकसित देशों में व्यापारी अपने लाभ में से कम बचा पाते है और उन्हें बैंक तथा पूँजी बाजार से उधार लेना पड़ता है। और वे उधार तभी लेंगे जब ब्याज दर नीची हो सार्वजनिक निवेश को प्रोत्साहित करने के लिए भी ब्याज दर नीची होनी आवश्यक है। ब्याज दर नीची होने से ऋण सेवा लागत भी नीची होगी तथा आर्थिक विकास तथा वित्त प्रबंधन में सहायक होगी। सस्ती मुद्रा नीति से विदेशी निवेश को भी प्रोत्साहन मिलेगा इसके साथ इसमें कुछ त्रुटियाँ भी है। यह बचत दर को प्रभावित करती हैं। सरकारी ढाँचों पर नीची दर उन्हें अनाकर्षक बनाती है।

2. **मुद्रा की पूर्ति (Supply of Money)** - विकसित देशों में मुद्रा नीति का उद्देश्य स्थिरता प्रदान करना है। इसलिए मुद्रा की माँग तथा पूर्ति के बीच समानता हो जिससे दोनों इकट्ठा रह सकें। यह तभी संभव है जब स्थिरता के बारे में गत्यात्मक विचार करें। मुद्रा पूर्ति को कुछ प्रतिशत माँग बढ़ने के लिए प्रयोग करना चाहिए, जिससे कीमत में कुछ बढोतरी होगी। लेकिन स्फीतिकारी दबाव उत्पन्न नहीं होंगे। इस नीति से अर्थव्यवस्था पर कुछ सकारात्मक प्रभाव होंगे। (1) कीमत में थोड़ी व द्धि निजी निवेशक को निवेश करने के लिए प्रोत्साहित करेगी (2) अल्पविकसित देशों में साधनों में बेरोजगारी तथा अर्ध बेरोजगारी की स्थिति पाई जाती है, अतिरिक्त मुद्रा पूर्ति इसके लिए माँग पैदा करेगी (अर्थात् जो साधन प्रयोग में नहीं आए, अब उनका पूर्ण प्रयोग होगा)। (3) अर्थव्यवस्था में ढाँचागत परिवर्तन होंगे, तथा गत्यात्मक सम्पत्तियों में व द्धि होगी। इसलिए मुद्रा की पूर्ति बढ़नी चाहिए।

यह दिखाता है कि अल्पविकसित अर्थव्यवस्था मुद्रा माँग की अपेक्षा मुद्रा पूर्ति को बढ़ने की आज्ञा देती है, इससे अर्थव्यवस्था में व द्धि को धक्का लगेगा लेकिन हमें स्फीतरी प्रभाव को भी भूलना नहीं चाहिए इसलिए यह स्फीति एक बार पैदा हो जाए तो इसकों काबू करना मुश्किल है और अर्थव्यवस्था स्फीति जैसे भयानक जाल में जकड जाती है। अधिकतर अल्पविकसित देशों का तुजर्बा बताता है कि स्फीतिकारी दबाव की वजह से 'सुरक्षित कीमत नीति' रेखा नहीं खींच पाई इसलिए कीमत में स्फीति दबाव से अर्थव्यवस्था से अर्थव्यवस्था में संकट की स्थिति को काबू करना मुश्किल होता है। इससे घाटे वित्त व्यवस्था की प्रक्रिया उत्पन्न हो जाती है।

3. **साख की पूर्ति (The Supply of Credit)** - यह केन्द्रिय बैंकों का सबसे बड़ा उत्तर दायित्व है। इसे उत्पादक इकाइयों के लिए शाख का उचित प्रबन्ध करना तथा बेकार के फैलाव को रोकना है। पहला अर्थव्यवस्था में उत्पादक इकाइयों बढ़ाने तथा प्रबन्ध के लिए उचित प्रबन्ध करना तथा आखिरी अर्थव्यवस्था में स्फीतिकारी दबाव रोकने के लिए नियंत्रण करना। लम्बे समय से कृषि क्षेत्र में संस्थागत साख नहीं थी और कृषकों साहूकारों पर निर्भर रहना पड़ता था। जो अवैधानिक तरीके से ब्याज दर तथा अलग-अलग तरीके से उनका शोषण करते थे। अब सरकार ने महसूस किया कि किसानों का महसूस किया कि किसानों को साहूकारों के चंगुल से बचाया जाए। उसी समय नई तकनीक अपनाने के लिए, कृषि यंत्र खरीदने के लिए तथा कृषि में उत्पादन तथा उत्पादकता बढ़ाने के लिए साख प्रदान की गई।

अल्पविकसित देशों में मुद्रा और पूँजी बाजार के अविकसित होने पर उद्योग भी वित्त बढ़ाने में समस्याओं से जूझते है। इसलिए सरकार ने उद्योगों की आवश्यकता पूर्ति के लिए बैंक स्थापित किए। इनको विकसित बैंकों का नाम दिया

गया। ये बैंक नए उद्योग स्थापित करने के लिए मध्यम तथा दीर्घकाल के लिए पैसा (Fund) प्रदान करते हैं। कुछ दशकों से विकसित बैंको की स्थापना हुई है और उद्योगों के विकास में तेजी से व द्धि हुई है।

अल्पविकसित देशों की सरकार केवल उत्पादित इकाईयों को बढ़ाने के बारे में नहीं बल्कि स्फीतिकारी दबाव रोकने में भी अर्थव्यवस्था को आगाह करती है। यह तभी संभव है जब शाख का फैलाव नियंत्रण में रहे। यदि स्फीतिकारी दबाव बढ़ जाते है तो केन्द्रिय बैंक को इसको दबाने में अहम् भूमिका निभानी चाहिए बैंक के अन्दर साख नियंत्रण केन्द्रीय बैंक के हाथ में है। जैसे बैंक दर, खुले बाजार क्रियाएँ, परिवर्तित नकद रिजर्व अनुपात नीति, चुनावी साख नियंत्रण, आदि। बैंक दर को उधार के ऊपर प्रत्यक्ष रूप से काम करना चाहिए। इसके लिए तर्क है कि जब केन्द्रीय बैंक इसे बढ़ा देते हैं तो सभी बैंक इसे बढ़ा देते हैं। यह बढ़ी पर निवेशक को निवेश फैलान में प्रतिबंधिति करेगी क्योंकि इससे निवेशक बैंक से उधार लेने में निरूत्साहित होगा। यद्यपि अल्पविकसित देश हमेशा साख फैलाव को नियन्त्रित करने के लिए बैंक दर का सहारा लेते हैं। लेकिन बार-बार ब्याज दर ऊँचे में परिवर्तन करना मुश्किल है इस वजह से बैंक इसको रोकने में असमर्थ रहते हैं। कुछ अल्पविकसित देशों के परिणाम दर्शाते है कि केन्द्रीय बैंक की सस्ती मुद्रा नीति सट्टा, जमाखोरी आदि को आमंत्रित करती है।

खुले बाजार क्रियाएँ साख को नियंत्रित कर सकती है। यदि केन्द्रीय बैंक खुले बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों को बेच दे। जैसे जनता इन प्रतिभूतियों को खरीदती है तो इसके हाथ से मुद्रा की कमी तथा साथ में प्रतिभूति बेचने से बैंक की साख क्षमता भी कम होगी (यदि बैंक सरकारी प्रतिभूतियों खरीदता है) इससे साख पर नियंत्रण होगा। लेकिन यह नीति भी ज्यादा कारगर नहीं हो पाई क्योंकि अल्पविकसित देशों में मुद्रा तथा पूँजी बाजारों का आकार छोटा है।

व्यापारिक बैंको को अपनी जमा राशी का कुछ प्रतिशत बैंक (केन्द्रीय बैंक) के पास रखना आवश्यक है। साख को नियन्त्रित करने के लिए बैंक इस सीमा को बढ़ा सकते हैं। इससे व्यापारिक बैंकों के पास जमा राशि की कमी होगी और वे अधिक साख निर्माण नहीं कर सकते। इसलिए जब भी स्फीतिकारी दबाव बढ़े हैं बैंकों ने आरक्षित जमा अनुपात को बढ़ाया है। 1989 में यह बढ़ाकर 15 प्रतिशत कर दिया गया। भारत को आरक्षित जमा अनुपात को बनाए रखने के लिए 3 से 15 प्रतिशत की आवश्यकता है। अब वर्तमान में यह 10 प्रतिशत है। यह अनुपात स्फीतिकारी दबाव को नियंत्रित करने के लिए कारगर है। लेकिन इसकी ऊपरी सीमा तो नियंत्रण कर सकती है लेकिन निचली सीमा ज्यादा प्रभावी नहीं है। निवेश के मंदी के समय नकद आरक्षित अनुपात का निचला स्तर इसे निवेश बढ़ाने में असमर्थ विकास में भी थोड़ा योगदान दे पाया।

साख नियंत्रण के संबंध में सबसे प्रभावी तरीका है चयनात्मक साख नियंत्रण। इसको गुणात्मक साख नियंत्रण भी कहते हैं। अल्पविकसित देशों में मात्रात्मक साख नियन्त्रण की बजाय गुणात्मक साख नियंत्रण का ज्याद महत्त्व है। इस पद्धति के अन्तर्गत बैंक उधार लेने वालों और विभिन्न कार्यों के लिए उधार विभेद करता है। अल्पविकसित देशों सट्टा बाजार क्रियाओं के लिए अधिकतर उधार दिया जाता है। तथा कृषि तथा उद्योग में उत्पाद निवेशों पर बैंक कम उधार देता है। चयनात्मक प्रणाली के अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक इस अंतर को खत्म करके सट्टा आदि के लिए कम तथा उत्पादक क्रियाओं जैसे कृषि, उद्योग क्षेत्र में अधिक ऋण देते हैं।

केन्द्रीय बैंक पिछड़े क्षेत्रों को विकसित करने के लिए बैंकों को कम ब्याज की दर पर ऋण उपलब्ध करने के आदेश देता है और सट्टा आदि के लिए जो बैंक ऋण देते हैं उनकों दंड के रूप में कुछ (%) पैसा अपने पास जमा करने के आदेश देता है। यद्यपि अल्पविकसित देशों में इस तरह की प्रणाली अपनाना काफी मुश्किल है। प्रायः उत्पादक कार्यो के लिए गए ऋण, सट्टा आदि में लगा दिए जाते हैं और बैंक इसके बारे में कुछ नहीं कर सकता।

4. **संस्थाओं (संगठनों) का आकार बढ़ाना (Expansion of Financial Institutions)** - वित्तिय संस्थान आर्थिक विकास के कार्यक्रमों में बचत को निवेश में परिवर्तित कर आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। विकास के प्रारम्भिक समय में अधिकतर बचत घरेलु क्षेत्र द्वारा की जाती है। जो अपनी बचत की अपेक्षा भी निवेश कम करता है। कम वित्तिय सम्पत्ति की वजह से ये भौतिक सम्पत्ति जैसे गहने आदि को प्राप्त करने के लिए प्रयोग की जाती है। इन सम्पत्तियों को बेचने वाले इसके बदले धन प्राप्त करता है लेकिन यह कहना मुश्किल है कि यह वित्तिय सम्पत्ति निवेश की जाएगी या नहीं। प्रो॰ ए॰ पी॰ थारवाल का कहना है कि इसका उपभोग होगा उनके अनुसार आमतौर पर

निवेश गैर-सरकारी वस्तुओं में होता है क्योंकि वहाँ नई पूँजी का वितरण करने का कोई साधन नहीं है, जिसमें यह निवेश की जाती है। बचत निवेश में तभी परिवर्तन हो सकता है और निवेश पर प्रतिफल भी अधिक है और निवेश पर प्रतिफल भी अधिक हो सकते हैं जब मुद्रा एिफती और वित्तिय मध्यस्थ विद्यमान हों। अल्पविकसित देशों में मुद्रा नीति ने इस तरह की बातों की तरफ कोई स्थान नहीं दिया और परिणामस्वरूप मुद्रा व पूँजी बाजार विकसित नहीं हो पाए।

यद्यपि अधिकतर अल्पविकसित देश विकसित बैंकों को स्थापित करने में ध्यान दे रहे हैं । यह बैंक उद्योगों को दीर्घकालीन वित्त देकर सहायता करते है क्योंकि व्यापारिक बैंक मध्यस्थ तथा दीर्घकाल के लिए ऋण नहीं देते। इन बैंकों में इस तरह की व्यवस्था कम हैं यदि ये बैंक यदि इस प्रकार का ऋण देते हैं भी तो प्रवेश लागत इतनी अधिक होती है कि यह निजी निवेशक को लाभकारी नहीं होता। विकसित बैंक स्थापित करने से इस समस्या का समाधान होगा। यद्यपि विकास के विचार विकसित बैंकों की स्थापना सही है लेकिन केवल नए वित्तिय संस्थान सही है लेकिन केवल नए वित्तिय संस्थान बनाना आर्थिक विकास की गारन्टी नहीं है।

मुद्रा नीति की सीमाएँ
(Limitation of Monetary Policy)

अल्पविकसित देशो में मुद्रा नीति की सबसे बड़ी समस्या है मुद्रा व पूँजी बाजार तथा वित्तिय संस्थान असंगठित है। इसलिए मुद्रानीति मुद्रा की पूर्ति न तो बढ़ाने में सक्षम है और न घटाने में और न ही निजी क्षेत्र में उधार लागत को कम या ज्यादा करने में। अर्थव्यवस्था का सबसे बड़ा क्षेत्र कृषि है। जो असंगठित है तथा ऋण पूर्ति तथा जरूरतों के लिए आज भी साहूकार पर निर्भर है और वास्तविक तौर पर यह बैंकों की पहुँच से बाहर है।

दूसरी मुद्रा नीति की सीमा है कि इसके लक्ष्य पारदर्शी नहीं है और बहुत बार एक दूसरे के विपरित दिखाई देते हैं। उदाहरण के तौर पर आर्थिक व द्धि तथा स्थिरता ये दोनों मुद्रानीति के उद्देश्य है। आर्थिक व द्धि में कीमत लगातार बढ़नी चाहिए ताकि प्रभावी निवेश जगह ले सके। यह अल्पविकसित अर्थव्यवस्था के लिए उपयुक्त है जहाँ साधनों की कमी है। ऐसी अवस्था में स्फीतिकारी दबाव बनने आरम्भ होंगे। इसलिए स्थिरता आर्थिक व द्धि के लिए आपातकालीन है। इस नीति की सामाजिक व आर्थिक लागत ज्यादा है जिससे आय असमानताएँ बढ़ाने से अमीर-अमीर तथा गरीब-गरीब हो जाता है।

तीसरे अल्पविकसित देशों में मुद्रा नीति नियंत्रण करने की तकनीक विकसित देशों की अपेक्षा कम प्रभावी है। यह पहले भी बता चुके हैं कि ब्याज दर साख अथवा फैलाव को नियंत्रण करने में असफल रही है। मुद्रा तथा पूँजी बाजार की सीमितता खुले बाजार क्रियाओं में साख नियंत्रण करने को रोकती है। दूसरे अधिकतम अल्पविकसित देशों में बैंकिंग क्षेत्र का काफी हिस्सा विदेशी बैंकों की शाखाओं के हाथ में हो जो केवल विदेशी मुद्रा पर भरोसा करते हैं। चयनात्मक प्रणाली से इसको कुछ नियंत्रित किया जा सकता है। इनको खाद्यान्न की जमाखोरी को नियंत्रण में लाने के लिए प्रयोग किया जाता है। लेकिन यह भी पूर्ण रूप से सक्षम नहीं है। क्योंकि साख के प्रयोग पर कोई नियन्त्रण नहीं उत्पादन के लिए गए ऋण गैर उत्पादक वस्तुओं के लिए और खाद्यान्न का बड़ा स्टॉक बड़े किसानों द्वारा रखना। ये स्टॉक कभी बाजांर में नहीं आते। चयनात्मक जमाखोरी को नियंत्रण में रखता है लेकिन उत्पादन के स्थान पर जमाखोरी रोकना संभव नहीं।

चौथा, विकसित बैंक घरेलू क्षेत्र की बचतों आकर्षित करने में असफल इसलिए विकसित अर्थव्यवस्था में अविष्कारी भूमिका नहीं निभा पाए हैं।

निष्कर्ष के तौर पर कह सकते हैं कि वित्त संगठन पूर्ण रूप से विकसित मुद्रा व बैंकिग संस्थानो के साथ आसानी से प्रबंधित हो सकता यदि कोई देश सही रूप से इसका प्रबंध कर पाता है तो वह व द्धि प्रक्रिया को बढ़ाने में सफल हो सकता है।

अध्याय-24
राजकोषीय नीति
(Fiscal Policy)

अल्पविकसित देशों में तथा विकसित देशों में राजकोषीय का अर्थ अलग-अलग है। अल्पविकसित देशों में आर्थिक विकास तथा विकसित देशों में आर्थिक स्थिरता प्राप्त करना है। राजकोषीय नीति को सरकारी नीति कहा जाता है जो कर, सार्वजनिक उधार और सार्वजनिक खर्च के साथ अपने उद्देश्य राष्ट्रीय आय, उत्पादन, रोजगार पर इच्छित प्रभाव पूरा करना तथा अनिच्छित प्रभाव को रोकना है।

राजकोषीय नीति की महत्ता
(Importance of Fiscal Policy)

प्रो॰ जे॰ एम॰ केल्ज के लेख से पता चलता है कि राजकोषीय नीति 1930 के महामंदी के समय में आर्थिक यंत्र समझी जाने लगी। इससे पहले यह माना जाता था कि अर्थव्यवस्था में सरकार नकारात्मक धनात्मक भूमिका निभाती है और इसकी क्रियाएँ कानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए प्रतिबंधित रहनी चाहिए। परम्परावादी अर्थशास्त्रियों का मानना है कि सरकार ही सबसे सही है नियन्त्रण करने के लिए। इसलिए सरकार को कदम बढ़ाने चाहिए। क्योंकि निजी क्षेत्र लाभ न होने की सूरत में अपने आप ऊपर उठने का कदम नहीं उठा सकता। केन्द्र ने सरकार की भूमिका का उस समय विशेष वर्णन किया है, जब संतुलन होते हुए भी बेरोजगारी है। इसलिए सरकार ही बेरोजगारी खत्म करने का काम कर सकती है। इस बेरोजगारी की समस्या को काबू करने के लिए कीमत बढ़ा सकती है तथा अर्थव्यवस्था में खर्चे को प्रतिबंधित कर सकती है। चाहे स्फीति या विस्फीति की स्थिति हो सरकार वापिस अर्थव्यवस्था को वापिस स्थिरता की स्थिति में ला सकती है।

राजकोषीय नीति का महत्त्व सबसे पहले विकसित देशों में मंदी के समय महसूस किया गया। यह प्राकृतिक था कि केन्जियन समय में सारा ध्यान लघु-स्तर आर्थिक स्थिरता और चक्रिय प्रवाह के बारे में केन्द्रित किया गया। विकास ने व द्धि के साथ हैरेड डोमर को गत्यात्मक अर्थव्यवस्था में दीर्घकालीन संतुलन लाने के लिए वर्णित किया गया उदाहरण के तौर पर हैरेड डोमर में संतुलन के लिए शर्तें $G_n = G_w = G$ मतलब प्राकृतिक दर, अभिष्ट दर तथा वास्तविक व द्धि दर एक दूसरे के बराबर होने चाहिए एक विकसित अर्थव्यवस्था में संभावना है कि G_w, G_n तथा G से ऊपर होने की संभावना है। यह संभावना है। यह संभावना इसलिए बढ़ती है क्योंकि औसत बचत प्रभावी दर (Average Propersity to Save) $S = \frac{S}{Y}$ ऊँची है। इसलिए इसका एक ही इलाज है राष्ट्रीय आय में बचत के अनुपात को कम करना। यदि $G_n > G$ तो उपभोग कम करना तथा बचत बढ़ाने की आवश्यकता है। इसलिए विकसित देशों में हालात के अनुसार S को कम व ज्यादा किया जाता है। विकसित देशों में हमेशा G_w, G_n तथा G से ज्यादा होता है, इसलिए उपभोग के स्तर को बढ़ाकर S को कम करना है।

अल्प विकसित देशों में राजकोषीय नीति
(Fiscal Policy in Developing Countries)

अल्पविकसित देशों में राजकोषीय नीति की स्थिति बिल्कुल विपरित है। इन देशों में गरीबी की ऊँची दर उपभोग की सीमांत दर से ज्यादा है। इसलिए राष्ट्रीय आय में बचत अनुपात कम, है। इन देशों में बचत का स्तर कम होने से निवेश का स्तर भी नीचा रहता है और काफी मात्रा में अर्ध-बेरोजगारी पाई जाती है। हैंरेड डोमर मॉडल में G_n की कमी से G_w गिरता है। छिपि हुई बेरोजगारी ही नहीं बल्कि स्फीति की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है। इस समय सरकार दो समस्याओं, अर्ध बेरोजगारी

तथा स्फीति को काबू करने के लिए प्रयत्न करने पड़ते हैं। प्रो॰ चिल्हा का कहना है कि अल्पविकसित देशों में राजकोषीय नीति का उद्देश्य स्फीति के बिना पूँजी निर्माण की ऊँची दर प्राप्त करना है।

विकासशील देशों में राजकाषीय नीति के उद्देश्य
(Objectives of Fiscal Policy in Developing Countries)

1. **निवेश दर बढ़ाना (Increasing Rate of Investment)** - अल्पविकसित देशों रोजगार और आय स्तर कम होने पर अधिकतर (बड़ी संक्ष्या) में अर्ध बेरोजगारी की अवस्था में रहते हैं। इसलिए निवेश की दर को संपूर्ण दर तक धकेलना चाहिए। यह उपभोग स्तर को कमकर बचत की मात्रा बढ़ाकर किया जा सकता है। उपभोग से संबंधित सरकार वस्तुओं की मात्रा तथा उपभोग पर प्रतिबंधित नियंत्रण कर सकती है और उपभोग के अन्दर विकसित देशों के प्रदर्शन प्रभाव पर रोक लगा सकती है। बचत दर को बढ़ाने का सबसे महत्त्वपूर्ण उपाय है कर लगाना तथा सार्वजनिक उधार देना। वर्तमान आय को कर लगाकर बचत कर बढ़ाया जा सकता है।

   लेकिन अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में कर लगाकर साधनों का बढ़ाना भी मुश्किल है क्योंकि आय स्तर कम होने पर केवल कम संख्या में लोग कर दे सकेंगे। इसलिए प्रत्यक्ष कर (आयकर) लगाने से भी हल नहीं हो सकता। एक बार यदि सरकार इस तरह के कर लगाती है तो कर देने की भी सीमा है। एक सीमा से बाहर कर नहीं लगा सकते क्योंकि इससे निजी निवेश प्रभावित होगा। इसलिए अल्पविकसित देशों में सरकार अप्रत्यक्ष कर बढ़ा सकती है। यह कर विलासिता की वस्तुओं पर लगा सकते हैं क्योकि यह वस्तुएँ ऊँचे वर्ग द्वारा खरीदी जाती है। विलासिता की वस्तुओं की माँग लोच है यदि कीमत बढ़ती हे तो इनकी माँग गिरनी आरम्भ होती है। लेकिन इन वस्तुओं पर कर लगाने से ज्यादा प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि अमीर वर्ग ही इसको खरीदता हे। लेकिन यदि ज्यादा कर लगने अथवा कीमत में व द्धि होने से माँग गिरती है तो सार्वजनिक आय में व द्धि नहीं होती। यदि सरकार कर से आय प्राप्त करना चाहती है तो उन्हीं उपभोग वस्तुओं पर कर लगाने चाहिए जिनकी माँग बेलोच है। यद्यपि इस नीति से गरीब वर्ग प्रभावित होगा। क्योंकि कितनी ही कीमत बढ़े यह उन्हें खरीदने पड़ेगे। इसलिए कर से आय की प्राप्ति आसान नहीं है और सरकार को कई मुश्किल निर्णय अथवा चुनाव करने पड़ेंगे।

   अल्पविकसित देश सार्वजनिक उधार (Public Borrowing) को भी साधन बढ़ाने में भी प्रयोग करते हैं। लेकिन आपकी भी अपनी सीमाएँ हैं क्योंकि लोगों का आय स्तर कम है और कम लोग बचत करने की क्षमता रखते हैं।,

   इस संबंध में सरकार सार्वजनिक प्रयोग के अतिरेक को निवेश के लिए प्रयोग कर सकती है। यद्यपि यह तभी संभव है जब इन सेवाओं के लिए कोई भत्ता इत्यादि दिया जाए। सार्वजनिक क्षेत्र जैसे- रेलवे, डाक व तार व्यवस्था, सिंचाई कार्य आदि अपनी पूँजी पर ब्याज ह्रास प्राप्त करने में ही असफल नहीं बल्कि घाटे जैसी समस्या भी झेलते हैं। इन सेवाओं को प्रयोग करने वालों को कर देने वालों के खर्चे पर रियायत मिलती है। अधिकतर अल्पविकसित देशों के अनुभव बताते हैं कि ये देश इन साधनों से धन नहीं जुटा पाते तथा घाटे की समस्या बनी रहती है।

2. **निवेश को सामाजिक सम्पूर्ण प्रव ति का प्रोत्साहन (Encourging a Socially Optimum Pattern of Invest-ment)** - अल्पविकसित देश राजकोषीय नीति की सहायता से उन क्षेत्रों में निवेश कर सकते हैं जो सामाजिक तौर पर महत्त्वपूर्ण है। हर देश का इच्छित क्षेत्र अलग-अलग है अल्पविकसित देशों यातायात और संचार व्यवस्था पूर्ण नहीं है। रेलवे, डाकतार व्यवस्था, सड़क, विद्युत व्यवस्था काफी कम हैं और इनके बिना विकास संभव नहीं हो सकता। इसलिए देश की अर्थव्यवस्था के हिसाब से सामाजिक सदुपयोग साधनों में निवेश करना चाहिए। भारत में उद्योग विकास की क्षमता है, इसलिए आधारभूत व पूँजीगत वस्तुओं में बड़े पैमाने पर निवेश करना चाहिए। इसके अनुसार यह उद्योग सामाजिक सदुपयोग निवेश के अन्तर्गत बड़े पैमाने पर ओद्योगिकरण के लिए पूँजीगत वस्तुएँ।

3. **आय में असमानता कम करना (Reducing Income Inequalities)** - अल्पविकसित क्षेत्रों (देशों) में आय तथा धन में अधिक असमानता होती है। जबकि अधिकतर लोग अपनी आवश्यक पूर्ति के लिए संघर्ष करते हैं तथा दूसरी तरफ, कुछ ही लोगों के पास साधनों का अधिकतम हिस्सा होता है और वह अर्थव्यवस्था पर शासन करते हैं। भारत में लगभग 28 प्रतिशत लोग गरीबी में रहते हैं। यह वह रेखा है जहाँ केवल जीवन निर्वाह की स्थिति रहती है। लगभग 20 से 25 प्रतिशत लोगों (व्यापारी योग) का औद्योगिक अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण है। एक कल्याणकारी राज्य में जहाँ

सामाजिक समानता तथा आर्थिक कल्याण की बात हो वहाँ ऐसी असमानताओं को जगह नहीं मिलनी चाहिए। कर नीति को इस तरह से बनाया जाए जो अमीर जनसंख्या को ज्यादा कर देने के लिए मजबूर करे तथा गरीब जनता पर इसका प्रभाव कम पड़े। समाज के नीचे तबके पर कर नहीं लगाना चाहिए। विलासिता की वस्तुओं पर भारी कर तथा उपभोग वस्तुओं पर कम लगने चाहिए। सार्वजनिक सेवाओं के बारे में सरकार को गरीबों के लिए स्वास्थ्य सुविधा, गरीब बच्चों के लिए निःशुल्क शिक्षा और गरीब खेतीहर मजदूरों के लिए घर (रहन सहन) व्यवस्था आदि करवाने में कार्यक्रम शुरू करने चाहिए। हाँलाकि अल्पविकसित देशो में असमानताएं कम हुई है लेकिन भ्रष्टाचार, कर चोरी, सरकार का राजनैतिक फायदे के लिए अमीरो से हाथ मिलाना इत्यादि इस तरफ ज्यादा योगदान नहीं दे पाई।

4. **बेरोजगारी तथा अर्ध बेरोजगारी कम करना** (**Reducing Unemployment and Under Employment**) - अल्पविकसित देशों में राजकोषीय नीति को बेरोजगारी तथा अर्ध बेरोजगारी को खत्म करने के लिए प्रयोग किया जा सकता हे। इस संबंध में सार्वजनिक कार्यक्रम योगदान दे सकते हैं। उदाहरण के तौर पर Off Season में लोग बेरोजगार तथा अर्ध बेरोजगार है वहाँ सरकार सार्वजनिक कार्यक्रम जैसे सड़क बनाना, स्कूल, भवन, हॉस्पीटल, सिंचाई नहर आदि शुरू किए गए हैं जो इस समय लोगों को रोजगार प्रदान कर सकें। भारत सरकार ने भी जवाहर रोजगार योजना, नेशनल रूरल एंपलायमेंट प्रोग्राम, जवाहर ग्राम सम द्धि योजना आदि शुरू किए हुए हैं।

5. **स्फीतिकारी प्रव तियों को नियंत्रण करना** (**Controlling Inflationary Tendencies**) - अल्पविकसित देशों में बड़े पैमाने पर औद्योगिकरण कार्यक्रम तथा साथ में साधनों की कमी से अल्पविकसित अर्थव्यवस्था धारावित्त पर निर्भर करती है। इसकी वजह से स्फीतिकारी दबाव बढ़ते हैं क्योंकि माँग बढ़ने पर इस पूर्ति में उस वजह से व द्धि नहीं कर पाती। इसलिए माँग को नियंत्रण करने तथा वस्तुओं का उत्पादन में प्रोत्साहित व द्धि करने के लिए राजकोषीय नीति की आवश्यकता है। कर लगाकर माँग के स्तर को कम किया जा सकता है वस्तुओं की पूर्ति में व द्धि करने के लिए उद्योगों को कर लाभ दे सकते हैं, यदि आवश्यकता पड़े तो उपभोग वस्तु उद्योग को संरक्षण दे सकते हैं।

राजकोषीय नीति के औजार
(Instruments of Fiscal Policy)

राजकोषीय नीति के तीन मुख्य औजार हैं। कराधान सार्वजनिक उधार एवं सार्वजनिक व्यय जो निम्न प्रकार से वर्णित किए गए हैं।

1. **कराधान** (**Taxation**) - सब साधनों में से राजकोषीय नीति का सबसे महत्त्वपूर्ण कराधान है। अल्पविकसित देशों में सरकार के विकास कार्यक्रम कर पद्धति के आर्थिक तथा प्रबंधकीय व्यवस्थाओं पर निर्भर करता है। इन देशों में सरकार करों द्वारा इकट्ठा किया गया राष्ट्रीय आय के भाग को दस से पंद्रह प्रतिशत से 30 व 40 प्रतिशत जो विकसित देशों में होता है। जैसे अमेरिका, संयुक्त राज्य, फ्रांस, जर्मनी आदि की तरह बढ़ाना चाहते हैं।

कराधान के उद्देश्य
(Objectives of Taxation)

1. सार्वजनिक हाथों से साधनों का राज्य के हाथों में स्थानापन्न जिससे सार्वजनिक निवेश संभव हो सके।
2. उपभोग को नियंत्रण कर उपभोग से साधनों का निवेश में स्थानापन्न।
3. बचत व निवेश बढ़ाने में प्रोत्साहन
4. निवेश को बदलना
5. आर्थिक असमानताओं का कम करना।

अल्पविकसित देशों में कराधान का पहला उद्‌देश्य सबसे महत्वपूर्ण है जैसे ही विकास की जरूरतें बढती हैं। इन देशों की सरकार करों को बढ़ाकर आय के नए साधन आयाम करती हैं। अधिकतर विशेषज्ञों ने अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में कर देने की काफी क्षमता है और यह अर्थव्यवस्था को बगैर छेड़े प्राप्त कर सकते हैं। और स्फीतिकारी दबाव भी धनात्मक लाभ दे सकते हैं। इसलिए किसी अर्थव्यवस्था में उसके हालात के अध्ययन किए बगैर सही कर नीति लाभ नहीं कर सकते। एक देश से दूसरे देश में संतुष्टि का स्तर भिन्न है। जो वहाँ के लोगों की प्राथमिकता तथा सरकार में प्रबंधकीय क्षमता पर निर्भर करता है। इसलिए इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए यह सोचना आवश्यक है कैसे कर मात्रा को बढ़ाया जा सकता है।

दूसरे उद्देश्य उपभोग को नियंत्रण करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रत्यक्ष करों से सरकार लोगों की खर्च करने वाली आय कम करके उपभोग में कटौती करती है। यह अप्रत्यक्ष कर दूसरा संभव है। जिसमें सरकार कीमतों में व द्धि करती है। जिससे उपभोग पर नियंत्रण हो जाता है। और इस प्रकार कराधान के माध्यम से सरकार साधनों को निजी उपभोग से सार्वजनिक निवेश में हस्तान्त्रण हैं।

तीसरे कराधान केवल अधिक राजस्व प्राप्ति के लिए ही लक्ष्य न बनाएँ जाएँ बल्कि बचत व निवेश को प्रोत्साहित करने का भी काम करें। बचत की प्रव ति को बढ़ाने के लिए बचाई गई बचत पर आयकर प्रोत्साहन दिए जा सकते हैं। संस्थाओं और संगठनों को भी बचत पर प्रोत्साहन दिए जा सकते हैं। आय कर इस प्रकार से लगाए जाएँ ताकि बचत करने वाले अपनी आय का कुछ अंश बचा सके। इसलिए आयकर की अपेक्षा संपत्ति कर तथा व्यय कर अधिक उत्तम हैं। निवेश के प्रोत्साहन के लिए छूट दी जाए। अप्रत्यक्ष कर इस प्रकार न लगाए जाए जो उपभोग को नियंत्रण तो रखे तथा वह इतने भारी न हो कि उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। इस प्रकार कराधान बचत व निवेश को पर्याप्त प्रोत्साहन देने वाला होना चाहिए।

पाँचवा उद्देश्य असमानताओं को कम करना। कराधान के मुख्य उद्देश्य में से एक है। इसमें अमीरों तथा गरीबों की आयों के बीच अन्तर को कम करना है। आय की असमानताओं को कम करने के विभिन्न तरीके हैं। हेलर के अनसार कर पद्धति के द्वारा आय के वितरण को समान रूप से करने में सहायता मिलती है। विलासिता की वस्तुओं पर कर लगाकर अमीरों की तिजोरी से धन निकाला जा सकता है। गरीबों को स्वास्थ्य संबंधि सेवाएँ। शिक्षा के कार्यक्रम तकनीक ज्ञान इत्यादि से उनके जीवन स्तर को सुधार जा सकता है। अमीरों से लिया गया कर के रूप में धन जनकल्याण के लिए खर्च कर सकते हैं ताकि दोनों में कुछ समानता आए।

कर ढाँचा
(Tax Structure)

अर्थव्यवस्था के अन्दर साधनों को बढ़ाने के लिए करों का प्रयोग किया जाता है करों को विभिन्न भागों में बाँटा गया है।

व्यक्तिक आय कर
Personal Income Tax

विकसित देशों की अपेक्षा अल्पविकसित देशों करो पर कम निर्भर करते हैं क्योंकि अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में अधिकतर लोग आय कर देने की क्षमता नहीं रखता और उन्हें कर से छूट दी जाती है। दूसरे काफी लोगों की कर देने की सीमा कम हैं क्योंकि यहाँ भी आय कम होना है। प्रजातान्त्रिक ढाँचे का सही काम न करने पर आयकर इकट्ठा करने में कमी तथा इससे कर चोरी अधिक रहती है।

इसका कारण यह है कि अल्पविकसित देशों में केवल 3 प्रतिशत तथा विकसित देशों में 60 से 80 प्रतिशत लोग कर देते हैं। यह आँकडे बताते हैं कि आयकर अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में ज्यादा योगदान नहीं कर पाता। अधिकतर लोग ग्रामीण क्षेत्र में रहते हैं और उनकी आय को मापने का कोई सही तरीका नहीं है। कृषकों की अनपढ़ता भी एक बड़ा कारण है। प्रो॰ रिजर्ड गुड ने कहा है अल्पविकसित देशों में लोग खासकर अमीर लोग सरकार के साथ हाथ मिलाकर तथा अमीर लोग सरकार के साथ हाथ मिलाकर तथा राजनीतिक शक्ति का प्रयोग कर चोरी करते हैं तथा अपनी हस्ती का गलत प्रयोग करते हैं।

धन कर
(Wealth Tax)

संपत्ति पर धन कर व्यक्तिक आय का श्रेष्ठ कारक है। क्योंकि अल्पविकसित देशों में संपत्ति का वितरण बहुत ही असमान होता है। इससे सरकार के आय साधन बढ़ते हैं। इस कर के द्वारा असमानताओं को कम किया जाता है। इससे लोगों की तथा अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता भी प्रभावित नहीं होती।

ये सब लाभ होने के बावजूद ये अल्पविकसित देशों में सार्वजनिक आय में ज्यादा योगदान नहीं कर पाते। अल्पविकसित देशों में कुल कर आय 10 प्रतिशत ही हैं। ये शामिल (योगदान) कर पाते हैं। शहरी क्षेत्रों में धन का आंकलन किया जा सकता है।

लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ जमीदारों की उपस्थिति दस में ज्यादा योगदान नहीं कर पाती। क्योंकि इसका आंकलन ही नहीं किया जाता।

संगठन आय कर
(Corporate Income Tax)

अल्पविकसित देशों में इन करों का हिस्सा काफी कम है। क्योंकि कोरपोरेट क्षेत्र छोटा है। इसलिए सरकार की कुल आय में इसका योगदान कम है। अल्पविकसित देशों की सरकार कम्पनियों को करों में छूट प्रोत्साहन इत्यादि प्रारम्भिक वर्षों में प्रदान करती है। यदि कोरपोरेट कर ज्यादा लगा दिया जाए तो नई कम्पनियों निरूत्साहित होंगी।

इन सब सीमाओं के बावजूद इन कंपनियों में कर इकट्‌ठा करने के लिए अधिक परेशानी नहीं होती क्योंकि इनका आकार छोटा होता है।

ऊपर वर्णित सभी कर प्रत्यक्ष कर हैं जो आय पर ही लगाए जाते है। चाहे व निजी हो या कम्पनी के हों।

उत्पादन शुल्क
(Excise Duty)

अप्रत्यक्ष करों की प्राप्ति अधिक होती है। यह अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में वित्त प्रबंधन का कार्य करते हैं। अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में कुल कर आय का 40 प्रतिशत उत्पादन शुल्क से प्राप्त होता है। अप्रत्यक्ष कर में हम तीन करों को शमिल करते हैं। उत्पादन शुल्क, बिक्री कर तथा कस्टम ड्यूटी। उत्पादन शुल्क में भी हम अधिकतर दो वस्तुओं को शामिल करते हैं। उपभोग वस्तुएँ तथा विलासिता की वस्तुओं की माँग लोच होने पर कीमत वद्धि अथवा अधिक कर लगाने से माँग कम हो जाती है। इसलिए इस पर कर से अधिक आय प्राप्त नहीं हो पाती। लेकिन उपभोग वस्तुओं की माँग बेलोच होने पर कीमत व द्धि के बाद भी माँग कम नहीं होती इसी से ही कर आय ज्यादा प्राप्त होती है। इसलिए उत्पादन शुल्क उपभोग वस्तुओं पर ही निर्भर करता है।

बिक्री कर
(Sales Tax)

उत्पादन शुल्क उत्पादन पर बिक्री कर वस्तुओं की बिक्री पर लगाया जाता है। इसलिए बिक्री कर वस्तुओं की खरीद परोख पर एक आवश्यक तत्व हैं। यह रजिस्ट्रड व्यापारी से ही लिया जाता है। यह तीन अवस्थाओं पर लगाया जाता है। मशीनीकरण (Manufacturing), Whole Sale (थोक) तथा Retail (फुटकर) स्तर। कोलम्बिया, घाना, युगान्डा में बनावटी स्तर पर, पाकिस्तान में थोक पर तथा भारत में फुटकर पर कर लगता है। भारत फुटकर कर का अच्छा उदाहरण हैं। लेकिन फुटकर स्तर पर कर की गणना मुश्किल है। क्योंकि काफी फुटकर व्यापारी काम करते हैं, इसलिए हर एक के साथ सीधा संबंध रखना मुश्किल हैं। बहुत से व्यापारी अनपढ़ है तथा लेखा जोखा का कोई ध्यान नहीं रखते। यह पद्धति कुछ ही क्षेत्र में काम कर पाती है इसलिए पद्धति के प्रति लोगों शेष रहता है।

कस्टम कर
Custom Duties

जो वस्तु विदेशी व्यापार में प्रवेश करती है उसे कस्टम डयूटी कहते है। ये दो प्रकार की है- नियती कर व आयात कर। पहली को निर्यात पर तथा दूसरी को आयात पर लगाते हैं। अल्पविकसित देशों में कस्टम डयूटी अहम् योगदान देती हैं। इन दोनों में आयात कर सबसे महत्त्वपूर्ण है। अल्पविकसित देशों में निर्यात की मात्रा कम होती है और इसको बढ़ाना भी मुश्किल है क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में विपरित स्थिति तथा गरीब देशों के वस्तुओं (उपभोग वस्तुओं) के प्रति उपभोक्ता का नजरिया सही नहीं है। दूसरे घरेलु उद्योगों पर आयात कर अधिक कर लगाए जाते हैं ताकि घरेलू क्षेत्र में उत्पादित होने वाले उत्पादन इनसे सस्ते रहें।

अल्पविकसित देशों में ओद्यौगिकरण के लिए तकनीक इत्यादि का आयात करना पड़ता है लेकिन निर्यात कम होने की वजह से हम ज्यादा आयात नहीं कर सकते। कारण उपभोग तथा की वस्तुओं के आयात में कटौती करनी पड़ती है।

आयात कर लगाकर ही हम इस क्षेत्र से आय कर कमा सकते हैं। क्योंकि इसको आयात करने वाले भी सीमित तथा वस्तुओं की मात्रा भी सीमित होने पर इसको इकट्ठा करने में कोई परेशानी नहीं होती। अल्पविकसित देशों में वस्तुओं को अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतियोगी बनाने के लिए निर्यात पर ज्यादा कर नहीं लगाया जाता है। बल्कि सरकार निर्यातक को छूट (Subsidy) इत्यादि प्रदान करती हैं। जिसमें निर्यात की मात्रा में बढ़ोतरी हो।

व्यय कर
(Expenditure Tax)

एक व्यक्ति द्वारा किए गए खर्च पर जो कर लगाया जाता है उसे व्यय कर कहते हैं। (आय में बचत करने के बाद अथवा बचत घटाकार) यह कर इसलिए ठीक है क्योंकि इससे बचत प्रभावित नहीं होती इसलिए किसी व्यक्ति द्वारा किया गया वास्तविक खर्च पर यह लगाया जाता है। आय कर बचत पर विपरीत प्रभाव डालता है। इसको लागु करने में अधिक प्रतिबंध लागते आती हैं। इसलिए सरकार इसको लागू करने में ज्यादा दिलचस्पी नहीं लेती। जिन अल्पविकसित देशों ने इसको पहले लगाया है उन्हें इसको बंद कर दिया है। कालडर ने कहा है कि इस तरह के कर उपभोग को कम करते हैं साथ कर चोरी (प्रत्यक्ष कर चोरी को प्रोत्साहित करते हैं।)

कृषि पर कर
(Tax on Agriculture)

अल्पविकसित देशों में कृषि कुल जनसंख्या को अधिक संख्या को रोजगार प्रदान करता है और राष्ट्रीय उत्पादन में भी काफी मात्रा में योगदान करती है। कृषि अपने आप कर से मुक्त है तथा कर की कम मात्रा लगाई गई है। इसके बारे में तर्क दिया जाता है कि कृषि अर्थव्यवस्था का जीवन निर्वाह क्षेत्र है। इसलिए कर का भार उठाने में सक्षम नहीं है। लेकिन इसके साथ ही ग्रामीण क्षेत्र में जमीदारों की मौजूदगी जो पैसे का लेन देन तथा शहर के पूँजीपतियों की तरह है। इसलिए इनको कर से बाहर करना उचित नहीं है।

कृषि में कई प्रकार से कर लगाए जाते हैं- भूमिकर, कृषि आयकर, कृषि उत्पाद पर कर इत्यादि। भूमिकर सबसे पुराना कर तरीका है। इसको भूमि आय (Land Revenue) भी कहते हैं। इसको बदलने की कोशीश भी की गई क्योंकि अल्पविकसित देशों में जमींदार कर से कम योगदान करते हैं। यह महसूस किया गया कि छोटे व सीमांत किसानों को कर दायरे से बाहर रखा जाए। लेकिन इस तरह का प्रावधान नहीं हो पाया। भूमिकर को अलग रखने में काफी परेशानियाँ हैं क्योंकि कुछ किसान सिर्फ काश्ताकर हैं इसलिए इसको अलग करने में भी काफी परेशानियाँ हैं। क्योंकि काश्तकार भी लाभ कमाने के लिए खेती को जोतते हैं। लेकिन वे इसके मालिक नहीं हैं। इसलिए भूमिकर लगाने में परेशानी है।

यदि सरकार बाजार पद्धति पर प्रभावी नियंत्रण रखती है तो यह कृषि उत्पाद पर कर लगाने के बारे में सोच सकती है। उदाहरण के तौर पर सरकार किसानों से खरीदकर कर काटकर कीमत प्रदान कर सकती हैं। लेकिन प्रबंधकीय कारणों से ये भी मुश्किल है। इसको इकट्ठे करने में काफी कठिनाइयाँ है।

कुछ अर्थशास्त्रीयों का मानना है कि कृषि आय तथा दूसरी आय में अंतर नहीं होना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए सरकार अथवा लोकल कर इकट्ठा करने वाले पहले आय के मुख्य साधन (फसलें, पशु, व्यापार, यातायात, मजदूरी, वेतन आदि।) से आय निकालकर और फिर कर योग्य आय की गणना करें लेकिन यह काफी मुश्किल काम है। और कृषि आय की गणना की पद्धति भी सही कार्य नहीं कर पाएगी।

सार्वजनिक उधार की भूमिका
(Role of Public Borrowing)

कर के बाद सार्वजनिक उधार सार्वजनिक आय का दूसरा महत्त्वपूर्ण साधन हैं। यह कर से भिन्न है, यद्यपि जनता से लिया गया उधार वापिस दिया जाता है भुगतान करने के लिए भविष्य में साधनों को बढ़ाना है। सार्वजनिक उधार की सहायता उधार की सहायता से सरकार फंड बढ़ा सकती है। सरकार सार्वजनिक ऋण भी बढ़ा सकती है जैसे इच्छित व जरूरी ऋण, आन्तिरक व बाहरी ऋण। इस प्रकार के उधार अल्पविकसित तथा विकसित अर्थव्यवस्था में आय हैं। उदाहरण के तौर पर अल्पविकसित

अर्थव्यवस्था में सड़क बनाना, स्कूलों पर खर्च। विद्युत प्लॉट, भारी तथा पूँजीगत वस्तु उद्योग, इत्यादि सार्वजनिक उधार से ही न्यायसंगत वकालत की जाती है कि उन्हे सार्वजनिक ऋण से पूरा करना चाहिए। कर द्वारा वित्त जुटाने से वर्तमान जनसंख्या पर भार पड़ेगा और आगे वाली जनसंख्या को इसका लाभ मिलेगा इसलिए, दूसरी तरफ, राष्ट्रीय आय व बचत स्तर कम होने पर अधिक कर लगाने की क्षमता नहीं होती और सार्वजनिक खर्च की माँग लगातार बढ़ती है। कर आय तथा सार्वजनिक खर्च की दूरी को पाटने के लिए अल्पविकसित देशों में सार्वजनिक उधार एक विकल्प है।

सरकार लोगों को इच्छित ऋण के लिए भी प्रेरित करती है लेकिन की आय का स्तर कम होने पर बचत का स्तर भी कम होता है। अल्पविकसित देशों की सरकार उसी समय जरूरी ऋणों को बढ़ाती है। इन ऋणों से स्फीतिकारी दबाव भी बढ़ते हैं कर्मचारी द्वारा सामाजिक सुरक्षा प्रतिभूतियों में निवेश भी एक तरह की जरूरी उधार है। सरकारी बाँड तथा प्रतिभूतियों सार्वजनिक लोगों को बेचती जिसे वे खरीदकर अपनी आय का भाग सरकार के खाते में हस्तांतरण करते हैं और ये पैसा उन्हें सेवानिव ति के बाद प्राप्त होता है। ऐसी व्यवस्था से सरकार के पास अतिरिक्त साधन उभरेंगे।

सरकार घरेलू अर्थव्यवस्था से उधार के साथ-साथ दूसरे देश से भी उधार लेती है जिसे आन्तरिक व बाहरी ऋण कहते हैं। बाहरी ऋण विदेशी विनिमय समस्या को कम करने में प्रयोग किए जाते हैं। विदेशी विनिमय भुगतान की खाई को हम बाहरी ऋण से (विदेशी ऋण से) ही पूरा कर सकते है। जैसे IMF, World Bank इत्यादि भारत को अपनी अर्थव्यवस्था खोलने के लिए दबाव डालते हैं। लोक विदेशी ऋणों का सबसे बड़ा नुकसान लम्बे समय तक निर्भर रहना और इससे कठिनाइयाँ भी उत्पन्न होंगी क्योंकि भविष्य में विदेशी विनिमय में ही इसका भुगतान करना है।

प्रभावी बचत
(Forced Saving)

राजकोषीय नीति का एक यंत्र है दबाव डाल कर बचत करना। यह तत्व 1930 के मंदी समय में अर्थव्यवस्था में सहायता करने के लिए शुरू किया गया।

इसको घाटे का वित्त भी कहते हैं। विकसित देशों में वित्त घाटा उत्पन्न होता है। जब वर्तमान प्राप्तियों की अपेक्षा ज्यादा खर्च हो। इसलिए (बजट पूरा), ये ऋण की सहायता से इसको पूरा करते हैं। अल्पविकसित देशों में जैसे भारत में वित्त घाटा उत्पन्न होता है। जब सरकार जनता से कर आय या गैर कर आय (फीस, और लाभ सार्वजनिक उद्योग से, सार्वजनिक उधार) आदि से प्राप्त सरकारी खर्चे से कम हो।

इस प्रकार राजकोषीय नीति सार्वजनिक खर्चों को पूरा करने के लिए आय के साधन जुटाती है। एक अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में इस तरह के विकल्प चाहे कर से या सार्वजनिक उधार से या बाहर ऋण से प्राप्त हों।

अध्याय-25

भारत में योजना मॉडल
(Plan Models in India)

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में योजना मॉडल इस तरह तैयार किए जाते है अल्पविकसित अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक विकास के लिए योजनाओं से संबंधित बनाए जाते हैं। योजना मॉडल में बचत, निवेश पूँजी-उत्पादन अनुपात आदि का निरीक्षण करते हैं, और दीर्घकालीन उद्देश्य अल्पकाल में राष्ट्रीय आय के अनुमान पर आधारित होते हैं। मॉडल एक लक्ष्य होते हैं। जो योजना को एक वास्तविक योजना बनाने में मदद करते है। यू॰ एन॰ का कहना है एक मॉडल वह है जो मध्य व दीर्घकालीन उद्देश्यों को पूरा करने की चेष्टा से प्रारंभिक स्थितियों को प्रतिबन्धित करता है। जिससे पहले से ही स्थापित किए गए उद्देश्य, उपाय तथा आर्थिक नीति शामिल होते हैं तथा आर्थिक विकास को रास्ता दिखाते हैं।

योजना मॉडलों के प्रकार
(Types of Plan Models)

योजना मॉडल कई प्रकार के होते हैं।

1. **बहुक्षेत्रीय मॉडल** (**Multisectoral Sector Model**) - यह मॉडल योजना संरचनात्मक का आधार बनाकर बनाया जाता है। यह 1953 में महालानोबिस ने प्रस्तुत किया था। महालोनोविस के विचार से अर्थव्यवस्था में दीर्घकालीन व द्धि के लिए पूँजीगत वस्तु उद्योगों का विकास किया जाए। इसका अभिप्राय दो क्षेत्र मॉडल होने का मतलब है एक क्षेत्र में उपभोग तथा दूसरे क्षेत्र में पूँजीगत वस्तुओं का उत्पादन। इस मॉडल के बंद अर्थव्यवस्था है तथा कोई विदेशी व्यापार नहीं। इस मॉडल में बचत, उत्पादन, उपभोग, निवेश आदि में समय के साथ विकास विशिष्ट रास्तों की रूप रेखा प्रस्तुत करता है।

   हैरेड-डोमर मॉडल तथा दो अंतराल मॉडल को सामूहिक क्षेत्र भी सहायक है तथा चुनाव के लिए हैरेड डोमर का मॉडल प्रयोग किया गया था। इस प्रकार के मॉडलों में स्थिर कीमत, औसत बचत प्रव ति से सीमांत व औसत पूँजी उत्पादन में कोई अन्तर नहीं और बंद अर्थव्यवस्था इस प्रकार के मॉडल ज्ञानप्रय, सही और हल करने में आसान होते हैं। ये समाज के सामने विभिन्न उद्देश्यों में से मुख्य उद्देश्यों का चुनाव करने में सहायक होते हैं।

   उपभोग क्षेत्र तथा पूँजी क्षेत्र में उत्पादन भरपूर मात्रा में उत्पादित। निवेश का बँटवारा भी दोनों क्षेत्रों में बराबर होता है। निवेश की मात्रा पूँजी स्टॉक के प्रतिफल पर।

   प्रो॰ महालोनोबिस ने भारत के संदर्भ में द्विक्षेत्र व चार क्षेत्र मॉडल को बहुक्षेत्रीय मॉडल की श्रेणी में रखा गया है। जिसके उत्पादन को उपभोग क्षेत्र तथा पूँजी क्षेत्र में बाँटा गया है। लेकिन चार मॉडल क्षेत्र में निवेश को वस्तु क्षेत्र फैक्ट्री उत्पादित उपभोग क्षेत्र जिसमें कृषि उत्पादन भी शामिल हैं और सेवा क्षेत्र (स्वास्थ्य, शिक्षा आदि) इन चारों क्षेत्रों के लिए प्रत्येक के लिए तीन प्राचलों (Parameters) लिए गए हैं। (a) पूँजी उत्पादन अनुपात (b) पूँजी श्रम अनुपात (c) आवंटन अनुपात। इन चारों क्षेत्रों में होने वाले उत्पादन व रोजगार का अंदाजा सरल पद्धति द्वारा लगाया जाता है।

   इसके पश्चात् आगत निर्गत मॉडल (Input-Output Model) के स्प में बहुक्षेत्रीय मॉडल का प्रयोग किया इस तरह के मॉडल स्थैतिक व गत्यात्मक होते हैं। इस मॉडल मे द्वितीय पाँचवी पंचवर्षीय योजना को लिया गया है।

2. **सामूहिक मॉडल** (**Aggregate Model**) - यह मॉडल अर्थव्यवस्था में बचत, निवेश, उपभोग, उत्पादन आदि को

समय में होने वाले विकास से जोड़ कर रखता है। एक सामूहिक मॉडल में राष्ट्रीय उत्पाद को श्रम व पूँजी से जोड़ा जाता है। व्यय की ओर से तथा प्रयोज्य (Disposable Income) आय की ओर से राष्ट्रीय उत्पाद की गणना, आयात फलन, आयात वस्तुओं अथवा आवश्यकताओं को राष्ट्रीय आय के स्तर से संबंध रखता है। कुछ साधनों (संसाधनों) के प्रयोग पर अवरोध जैसे श्रम की माँग पूँजी की पूर्ति से अधिक नहीं हो सकती, घरेलु बचतें और पूँजीगत वस्तुओं का आयात निवेश से अधिक नहीं हो सकते। यह मॉडल अर्थव्यवस्था के बीच विभिन्न क्षेत्रों के बीच चुनाव तथा एक क्षेत्र की दूसरे क्षेत्र से प्रतियोगिता सब सामूहिक क्षेत्र में आते है। सामूहिक क्षेत्र में एक क्षेत्र में निवेश दूसरे को प्रभावित करता है। यदि एक क्षेत्र विकसित है तो दूसरा भी उसके साथ विकास होगा क्योंकि अधिकतर सामूहिक क्षेत्र में संतुलित विकास की धारणा बनी रहती है। लेकिन अल्पविकसित देशों में संतुलित विकास तथा सभी क्षेत्रों के बीच में संतुलित विकास तथा सभी क्षेत्रों के बीच समन्वय स्थापित करना कठिन है। यद्यपि यह आशा की जाती है। सभी क्षेत्र सामूहिक रूप से मिलकर काम करेंगे इस तरह के क्षेत्रों उत्पादन, बचत व निवेश के भी सामूहिक द ष्टि से फंड का नियोजन किया जाता है। यह मॉडल पहली पंचवर्षीय योजना में प्रयोग के तौर पर किया। हैरड डोमर का मॉडल भी इस समानता में कहीं न कहीं फिट बैठता है इन मॉडलों की सबसे बड़ी समस्या है कि ये अपनी मान्यताओं के कारण अनेक समस्याओं को जन्म देते हैं।

इस मॉडल का प्रयोग पहली पंचवर्षीय योजना में किया गया था। इसमें इच्छित निवेश को बदलने के लिए अथवा उसके स्रोत बढ़ाने के लिए अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन किए।

3. **विकेन्द्रित मॉडल (Decentralised Model)** - यह मॉडल अर्थव्यवस्था की प्रारम्भिक अवस्था में काम करते हैं जहाँ विशिष्ट क्षेत्रों तथा परियोजनाओं में क्षेत्र चुनाव में इन मॉडल की आवश्यकता रहती है। यह तभी लाभदायक होते जब कुछ क्षेत्र (विशिष्ट क्षेत्र) अथवा परियोजनाओं में सूचना उपलब्ध होती है।

मॉडल की संरचना
(Construction of Model)

मॉडल की बनावट करते समय अर्थव्यवस्था के ढाँचे का अध्ययन आवश्यक है। जब अर्थव्यवस्था में आर्थिक विकास की समस्या के बारे में तथा उसका निवारण करने के बारे में आवश्यकता पड़ती है तो उस समय मॉडल की आवश्यकता महसूस होती है। इसलिए जब भी कोई मॉडल बनाया जाता है। तो वह उस समय पूर्ण करने वाले उद्देश्यों के बारे में सोचता है अथवा उन उद्देश्यों को लेकर चलता है। एक मॉडल बनाते समय विभिन्न बातों का ध्यान रखना चाहिए। अथवा इसमें निम्न बातें शामिल करनी चाहिए।

1. **उद्देश्य प्राप्त करना (To attain Objective)** -प्रत्येक अर्थव्यवस्था में जरूरतें अलग-अलग होती है उन्हीं जरूरतों को पूरा करने के लिए उद्देश्य निर्धारित करते है जैसे उत्पाद बढ़ाना, व द्धि दर, रोजगार के अवसर आय में बढ़ोतरी करना आदि हैं जिन्हें उद्देश्य फलन भी कहते है।

2. **साधनों की उपलब्धता (Availability of Resoursces)** - साधनों के उपलब्ध कराने में भी देखना है कौन से साधन स्वतन्त्र हैं तथा कौन से साधन एक दूसरे पर निर्भर करते हैं। एक स्वतन्त्र साधन वह है जो दूसरे पर निर्भर नहीं होता। वह आधार, मूल्य, उत्पादन, रोजगार बढ़ाने की क्षमता अपने अन्दर रखता है। इसको बाद अर्थव्यवस्था का भी नाम देते है जिससे घरेलु समस्या निवारण तथा अर्थव्यवस्था के अन्दर उपलब्ध क्षेत्रों के बीच की अवस्था को देखना है। निर्भर क्षेत्र को खुली अर्थव्यवस्था का नाम भी दिया जाता है। मॉडल बनाते समय उसके (अर्थव्यवस्था) के उद्देश्य व लक्ष्य के अनुसार ही इसके उद्देश्य निर्मित किए जाते हैं। निर्भर क्षेत्र में आयात, निर्यात, नवप्रर्वतन, श्रम शक्ति, आय, उपभोग, बचत निवेश आदि होते है। अर्थव्यवस्था में पूँजी निर्माण मे परिवर्तन तथा पूँजी निर्माण के स्टॉक को बढाने में बाहरी सहायता चाहे वह नव प्रवर्तन व आयात तथा निर्यात से संबंधित हों।

3 **प्राचल (Parameters)**- ये प्राचल अर्थव्यवस्था मे स्थिरता का काम करते है तथा खुद भी स्थिर रहते है। इसलिए इनको प्राय α (अल्फा) β (बिटा) γ (गामा) आदि नामों से भी पुकारा जाता है अर्थव्यवस्था में परिवर्तन होने पर ये स्थिर रहते है। अर्थव्यवस्था में समस्याओं को विभिन्न मूल्य होने पर भी ये स्थिरांक का काम करते हैं।

4 **मॉडल की मान्यताएँ** (Assumptions of the Model)- प्रत्येक मॉडल का निर्माण मान्यताओं पर आधारित होता है। मान्यताएँ मॉडल के उद्देश्य प्रक ति व बनावट पर निर्भर करती है अर्थात मॉडल एकल है द्विपक्षीय है। चतुर्थ, सामूहिक है, अथवा क्षेत्रीय है। हर योजना का निर्माण में अलग-अलग मान्यताएँ काम करती है। उसी के अनुसार माडल की प्रक ति व अर्थव्यवस्था की जरूरतों को देखते हुए मॉडल के लिए मान्यताएँ निर्धारित करनी पडती है।

5 **मॉडल के लिए फंड** (Funds for the Model)- अर्थव्यवस्था मे मॉडल की प्रव ति को देखते हुए तथा अर्थव्यवस्था में उपलब्ध साधनों का आंकलन करते हुए। हम तय करते हैं कि कौन से मॉडल को प्रयोग करने मे धन कम या ज्यादा है। क्योकि हम बहुक्षेत्रीय मॉडल को अपनाते है तो वहाँ अर्थव्यवस्था के अधिक भाग का अध्ययन करना पडता है अथवा अधिक उदेश्यों को शमिल करना पडता है। इसलिए मॉडल निर्माण मे इन उदेश्यों को शमिल करते हुए देखना है कि मॉडल के निर्माण में कितनी धन आवश्यकता है। या स्टॉक उपलब्धि से उस अर्थव्यवस्था मे कितना उत्पादन, आय, रोजगार व द्धि हो सकती है या बाहर से साधनो को जुटाना पडेगा जिससे इन उदेश्यों को पूरा किया जा सके।

6 **मॉडल की प्रव ति** (Behaviour of Model)- मॉडल बनाते समय यह देखना है कि मॉडल के व्यवहारिक समीकरण या संरचात्मक समीकरण के अनुसार बनाए जाए या नहीं। व्यवहारिक समीकरण का मतलब है कि अर्थव्यवस्था में परिवर्तन होने पर क्या दूसरे चर (Variable)- प्रभवित होते है या उनका व्यवहार कैसे है। इसका अभिप्राय एक चर का व्यवहार दूसरे चर के व्यवहार को प्रभावित करता है। लेकिन संचरनात्मक समीकरण में चर एक दूसरे के ऊपर प्रभाव न डालकर संबंध स्थापित करते है जैसे एक अर्थव्यवस्था में दो क्षेत्र काम कर रहे है। घरेलु व बाह्मय। सरंचनात्मक परिवर्तन में प्रत्येक क्षेत्र का आंतारिक संतुलन व बाह्म संतुलन मे संबंध स्थापित करना है।

7 **मॉडल का हल** (Solution of the Model)- मॉडल चाहे किसी भी प्रकार का प्रयोग मे लाया जाए लेकिन उसका हल निकालना आवश्यक है। यह प्रक ति पर निर्भर करता है कि उस मॉडल का हल निकालने में क्या घरेलु क्षेत्र की ही आवश्यकता या दोनों की घरेलु तथा बाह्म। आगत निर्गत (Input Output Model) मॉडल में घरेलु तथा बाह्म दोनों की ही आवश्यकता पड़ती है। हल निकालते समय चरों में चुनाव कर या समीकरणों का हल निकालने के लिए अथवा इनकी सहायता से उद्देश्य की प्राप्ति के लिए इष्टतम हल निकाले जाते हैं अथवा ढूढ़े जाते हैं।

मॉडल निर्माण के लिए आवश्यकता
(Requirement for Model Building)

1. **स्पष्ट धारणाएँ** (Clear Concept) - मॉडल बनाते समय धारणाएँ स्पष्ट होनी चाहिए। वहीं धारणाएँ शामिल करनी चाहिए जिनका उद्देश्य अर्थपूर्ण हो।

2. **विकास की प्रावस्था** (Stages of Development) - मॉडल का प्रयोग करने के लिए अर्थव्यवस्था विकास की अवस्था का आंकलन किया जाता है। यह देखना आवश्यक है कि मॉडल का निर्माण करने के लिए तथा उसके उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वही चर लेने होंगे अथवा जो उस अवस्था को पूर्ण करने में कामयाब हो सकते हैं। यही प्रारम्भिक अवस्था में आँकड़ों की उपलब्धि न हो तो उस समय सामूहिक मॉडल का प्रयोग करना उपयोगी होगा।

3. **विश्वसनीय जानकारी** (Reliable Information) - चारे किसी भी मॉडल का प्रयोग करे उसके लिए विश्वसनीय जानकारी आवश्यक हैं क्योंकि विश्वसनीय जानकारी न होने पर मॉडल के हल पर विपरित प्रभाव पड़ेगा। विश्वसनीय जानकारी से मॉडल का विवरण आसान हो जाता है। साँख्यिक आधार पर विश्वसनीयता आँकड़ों तथा जानकारी का होना आवश्यक है।

4. **उद्देश्य** (Objective) - जिन उद्देश्य का प्रयोग किया जाता है वे आर्थिक विकास से मेल खाने वाले तथा वास्तविकता पर आधारित हो।

5. **स्थानीय पहलू** (Institutional Factors) - एक विकॉल का आकार कैसा होना चाहिए यह अर्थव्यवस्था संस्थापक ढाँचे पर काफी निर्भर करता है। क्योंकि यही पहलू मॉडल के उद्देश्य पूरा करने में सहायता करते हैं। एक अच्छे मॉडल में संस्थागत परिवर्तन के साथ तथा नई संस्था में होने वाले परिवर्तन के साथ समावेश करना चाहिए।

6. **मॉडल की वास्तविकता** (Relevancy of Model) - मॉडल जिन स्थितियों को बताने की कोशिश कर रहा है।

यह अर्थव्यवस्था के मॉडल के साथ वास्तविकता का व्यवहार करें तथा न्याय संगत हो। अर्थव्यवस्था में विकास को प्राप्त करने के लिए मॉडल का वास्तविकता से जुड़ा होना चाहिए वरना ये सब हवा में बातें उड़ाने जैसी स्थिति होगी जो अर्थव्यवस्था पर ज्यादा दबाव नहीं बना सकती।

7. **परिवर्तनों के अनुकूल (Adaptable to Changes)** - अर्थव्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों के साथ मॉडल का समावेश होना चाहिए। जैसे अर्थव्यवस्था में सूखा, बाढ़, प्राकृतिक आपदा, युद्ध आदि से मॉडल में भी उसके अनुसार परिवर्तन किए जा सकें। इसलिए सब बातों को ध्यान में रखकर मॉडल का निर्माण करना चाहिए।

8. **प्रशिक्षित से विवर्ग की उपलब्धता (Availability of Trained Personal)** - अर्थव्यवस्था में किसी प्रकार का मॉडल प्रयोग किया जाए चाहे आगत निर्गत मॉडल, बहुक्षेत्रीय मॉडल, सामूहिक मॉडल, हर मॉडल के लिए प्रशिक्षित से विव ग की उपलब्धता होने पर उसकी विशिष्टता में और भी व द्धि होगी। क्योंकि ऐसे मॉडलों का प्रयोग अनेक समीकरणों को हल करने के लिए किया जा सकता है।

9. **पूर्ण व विश्वनीय आँकड़े (Complete and Reliable Data)** - अर्थव्यवस्था में मॉडल का चुनाव करने से पहले उसको आधार देना भी आवश्यक है। और यदि किसी मॉडल निर्माण में आधार उपलब्ध नहीं है तो वह भविष्य के परिणामों के लिए सही सूचना उपलब्ध नहीं करा सकेगा। मॉडल का निर्माण से पहले उस क्षेत्र में जिसमें यह लागू किया जाए पूर्ण व विश्वसनीय आँकड़े उपलब्ध होना आवश्यक है उन्हीं के आधार पर ही भविष्य की रूप रेखा तैयार की जाती है। संरचनात्मक तथा व्यावहारिक समीकरण आँकड़े एक दूसरे के अनुसार संगत (Adaptable) होने चाहिए।

अध्याय-26

व्यापार सिद्धान्त और विकासशील देशों के अनुभव (Trade Theory and Development Experience of Developing Country)

परम्परावादी व्यापार सिद्धान्त को 1817 में प्रो॰ डेविज रिकार्डो ने अपनी Principle of Political Economy में प्रतिपादित किया तथा अधिकतर परम्परावादी अर्थशास्त्रियों ने इसको सराहा है। इस सिद्धान्त की महत्त्वपूर्ण बात यह है कि व्यापार मुक्त होना चाहिए। यही सबसे उत्तम है। अधिकतर अल्प विकसित देश प्राथमिक वस्तुओं को निर्यात तथा विकसित देश उत्पादित (मशीनों से निर्मित पदार्थ) वस्तुओं का निर्यात करते थे। अल्पविकसित देशों से की गई दखल अंदाजी से (मशीनों से बने उत्पाद पर प्रतिबंध और इनको अपने देश में उद्योग स्थापित करना) यद्यपि वर्तमान शताब्दी के पचास व साठ के दशक में व्यापारी के विपरीत कई आवाजें उठी और परम्परावादी अर्थशास्त्रियों की भी आलोचना की गई। सबसे ज्यादा आलोचना करने वालों में Rau Prebisch, Hans Singor और Gunnar Myrdal थे। उनका कहना है कि अल्प-विकसित देशों के संदर्भ में यह मान्यता गलत है कि परम्परावादी अर्थशास्त्रियों के अनुसार प्रत्येक देश को व्यापार से लाभ है। वास्तव में विकसित तथा अल्पविकसित अर्थव्यवस्था के बीच व्यापार संबंध से विकसित देशों को ही लाभ पहुँचता है। ब्रिटिश समय में इन देशों के उद्योग धन्धे नष्ट हो गए और ये सिर्फ कच्चा माल निर्यात करने वाले देश बन कर रह गए इसलिए व्यापार ने सिर्फ इन देशों का शोषण किया। आजादी के बाद इन देशों ने बड़े पैमाने पर औद्योगिकरण के कार्यक्रम चलाए और इस उद्देश्य के लिए व्यापार पर विभिन्न प्रकार के प्रतिबंध लगाए।

व्यापार से लाभ (Benefits from Trade)

व्यापार से लाभ को सबसे पहले रिकार्डो ने अपनी तुलनात्मक लागत सिद्धान्त के द्वारा आगे बढ़ाया जो परम्परावादी अर्थशास्त्रियों की अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नीति की रीढ़ की हड्डी बना। इस सिद्धान्त को दो देशों में वस्तुएँ मॉडल की सहायता से बता सकते हैं। मान लो दो देश दो वस्तुओं में (जूट व कौटन) व्यापार करते हैं। इसमें दो संभावनाएँ हैं पहली स्थिति में देश A गर्म कपड़ों का उत्पादन तथा B जूट के उत्पादन में भरपूर लाभ कमा रहा है। दूसरे संदर्भ में A को जूट उत्पादन में तुलनात्मक लाभ तथा B को गर्म कपड़ों के उत्पादन में तुलनात्मक लाभ हैं।

A देश अपने उत्पादन (गर्म कपड़ों) में विशिष्ट होने पर लाभ कमाता है। इसी प्रकार B अपने जूट उत्पादन में विशिष्ट होने पर लाभ कमाता है। यदि ये दोनों आपस में व्यापार करते हैं तो दोनों ही लाभ कमाएँगे क्योकि यदि ये व्यापार न करके अपने देश में उत्पादन करते है तो उत्पादन अपने देश में करेगा। तो उत्पादन लागत अधिक होगी। गर्म कपड़ा उद्योग यदि जूट का उत्पादन अपने देश में करेगा तो उसकी लागत अधिक होगी क्योंकि यह इस उत्पादन में विशिष्ट नहीं है। यदि ये दोनों इन वस्तुओं का व्यापार के द्वारा आदान-प्रदान करते हैं तो लाभ होगा।

यदि हम तुलनात्मक लाभ को देखें तो A देश दोनों के उत्पादन में निपुण है लेकिन तुलनात्मक लाभ जूट को उत्पादन करने में है। यद्यपि B भी दोनों के उत्पादन में निपुण है लेकिन गर्म कपड़ों के उत्पादन को उत्पादित करने में तुलनात्मक लाभ कम है। तुलनात्मक व्यापार सिद्धान्त बताता है कि यदि दोनों देश व्यापार करेंगे तो इन्हे लाभ प्राप्त होंगे। क्योंकि यदि किसी भी देश को उत्पादन करने में विशिष्टता हासिल है वह अपने विशिष्टता हासिल उत्पादन का निर्यात कर सकता है। तथा दूसरे

देश जो अपने उत्पादन में विशिष्ट हैं उससे आयात कर सकता है। इस प्रकार दोनों देश अपने उत्पादन को निर्यात कर एक दूसरे को लाभान्वित करते हैं।

लेकिन यह सिद्धान्त अथवा यह एकल मॉडल कई मान्यताओं पर आधारित है।

1. सिर्फ श्रम ही अकेला उत्पादक साधन है।
2. हर देश में एक घंटे श्रम की कीमत बराबर है।
3. तकनीक स्थिर है।
4. प्रतिफल का पैमाना स्थिर।
5. यातायात लागत नहीं।
6. उत्पादन के साधन पूर्ण रूप से गतिशील (आन्तरिक व्यापार) और पूर्ण रूप से प्रगतिशील (अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में)
7. खुला बाजार कोई प्रतिबंध नहीं।
8. प्रत्येक वस्तु के लिए वस्तु की श्रेष्ठता एक जैसी। एक देश से दूसरे देश में कोई अंतर नहीं।

इसके साथ अल्पविकसित देशों में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के मुख्य लाभ इस प्रकार हैं।

1. खुला (मुक्त) व्यापार से देश में उत्पादन की अधिकता। अल्पविकसित देशों के संदर्भ में व्यापार उन्हें विकसित देशों से मशीनरी, शक्ति उत्पन्न करने के साधन। सड़क बनाने की मशीन, दवाईयाँ, कैमिकल आदि का आयात कर तकनीकी उन्नति से लाभान्वित करता है।
2. व्यापार से अल्पविकसित देशों की उपभोग क्षमता में व द्धि करता है और साधनों की कमी पूरा करना तथा उत्पादनों के लिए विश्वस्तर पर बाजार जिसको अल्पविकसित देश पैदा करने में कठिनाई महसूस करती है।
3. कुछ समय के पश्चात् साधन लागत, सभी देशों में जो व्यापार में शामिल होते हैं, कम होती है अथवा बराबर होगी। अल्पविकसित देशों में पूँजी की कीमत कम तथा श्रम की कीमत बढ़ेगी और विकसित देशों में इसके विपरित स्थिति होगी। इस वजह से शामिल होने वाले सभी देशों में साधन लागत बराबर होगी।
4. दूसरे लाभों की अपेक्षा अल्पविकसित देश तकनीक ज्ञान तथा उद्यमी, प्रबंधकीय कुशलता आयात से लाभ अर्जित करता है। प्रो॰ हेबरलर का कहना है देर से प्रवेश करने वाले (विकास और औद्योगिकरण प्रक्रिया में) ज्यादा फायदा उठा सकते हैं क्योंकि उद्यमियों के अनुभवों से सफलता तथा असफलता से जानकारी ले सकते हैं। आज के अल्पविकसित देश विकसित देशों से ली गई तकनीक में तथा उसको जानने में प्रगति कर रहे हैं।
5. हेबर्रलर के अनुसार व्यापार पूँजी के लिए एक नया विकल्प बनता है। व्यापार का स्तर अधिक होने से अल्पविकसित देशों की ब्याज तथा मूलधन देने की क्षमता बढ़ेगी। इसलिए यह विदेशी पूँजी का अधिक आयात करेगी। इसलिए यह (विदेशी पूँजी) निर्यात उद्योग स्थापित करना, आयात प्रतिस्थापन्न उद्योग, सामाजिक संस्थान का आरम्भ इत्यादि के विकास से आर्थिक विकास प्रक्रिया को बढ़ाने में मदद करेगी। विदेशी व्यापार की अनुपस्थिति में विदेशी पूँजी को आयात करने की संभावना कम होगी। इसलिए देश इस पूँजी के लाभ से वंचित होगा।
6. विदेशी व्यापार साफ सुथरी प्रतियोगिता रखता है तथा गलत एकाधिकारी पर नजर रखता है। हेबर्लर का कहना है कि अमरीकी अर्थव्यवस्था ज्यादा प्रतियोगी, विशिष्ट है दूसरों की अपेक्षा क्योंकि यह अपने अन्दर भी प्रतियोगिता रखता है। तथा इनका आंतरिक व्यापार मुक्त है। इस संदर्भ में, अल्पविकसित देशों के भी बाजार का आकार छोटा होने पर भी प्रतियोगिता बढ़ानी चाहिए।

ऊपर वर्णित बातो से जो व्यापार के बारे में कही गई इससे लगता है कि अल्पविकसित देशों के लिए यह एक जरूरी साधन है। ये देश विदेशी पूँजी और विदेशी विचार चाहते हैं। जब तक ये निर्यात नहीं बढ़ाएँगे इनके लिए कैसे भुगतान कर सकते हैं।

व्यापार और आर्थिक विकास
(Trade and Economic Development)

1. **दोहरी अर्थव्यवस्था और शोषण (Dualistic Economy and Exploitation)** - उन्नीसवीं शताब्दी में अन्र्तराष्ट्रीय व्यापार से कुछ क्षेत्रों में आर्थिक व द्धि हुई। यह क्षेत्र, आमतौर पर संयुक्त राज्य, यूरोप से काफी मात्रा में श्रम व पूँजी का आगमन हुआ, लेकिन आधारभूत विकास तो पश्चिमी यूरोप की खाने की वस्तुओं व कच्चे माल की माँग जिसे ये उत्पादित करने में सक्षम थे, उनसे व द्धि हुई। यद्यपि प्रो॰ नर्कसे का कहना है नए देशों के लिए व्यापार व द्धि का ईंजन है, लेकिन अल्पविकसित देशों के लिए यह कहानी बिल्कुल विपरीत है। अल्पविकसित देशों में प्राथमिक उत्पादन निर्यात की अदायगी करने के लिए किया गया लेकिन घरेलू अर्थव्यवस्था कम विकसित हुई। इसलिए विदेशी व्यापार दोहरी अर्थव्यवस्था के रूप में साबित हुआ। यद्यपि थोड़े से क्षेत्र में व द्धि हुई। यह क्षेत्र शक्तिशाली लोगों और उनके राजनीतिक नियंत्रण के नीचे थे और इन अर्थव्यवस्थाओं ने दूसरे देशों की कीमत पर अपने आप को विकसित करने में रूचि रखी।

2. इन शक्तिशाली देशों ने औद्योगिकरण को बढ़ाने के लिए अल्पविकसित देशों से कच्चे माल का आयात करने में रूचि रखी जिसकी कम कीमत अदा करनी पड़ती थी। आधुनिक तकनीक के राज्य कुछ पूँजीवादी संस्थान बनाए जो सारा धन (निर्यात से प्राप्त धन) विदेशों में विदेशी पूँजी के लाभ के रूप में हस्तान्तरित करते थे। इसलिए विदेशी व्यापार ने मैटरोपोलिटन देशों में आर्थिक व द्धि की न कि घरेलू अर्थव्यवस्था में।

   प्रो॰ सिगर ने कहा है, व्यापार के कलोनियल शासन में औद्योगिक देश दोनो तरफ विशिष्ट हैं- दोनों प्राथमिक वस्तुओं के उपभोक्ता तथा उत्पादित वस्तुओं के उत्पादक, जबकि अल्पविकसित देश दोनों तरफ बुरे (Worst) हैं। मशीन से बने उत्पादन की कीमत अधिक। ये मैटरोपोलिटन देश अपने निर्यात की कीमत अल्पविकसित देशों के निर्यात की कीमत से कई गुना ज्यादा लेते हैं। जो निम्न प्रकार हैं। (1) मशीनीकरण का निर्यात बढ़ाने की संभावना तथा अपनी जनसंख्या को निम्न उत्पादकता वाले व्यवसाय से अधिक उत्पादकता वाले व्यवसाय में हस्तान्तरण (2) अपनी अर्थव्यवस्था के विस्त त मशीनीकरण उद्योग का आनन्द (3) प्राथमिक वस्तुओं का उपभोक्ता होने से प्राथमिक उद्योग इसलिए केवल विकसित देश ही अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का अधिक फायदा उठा सकते हैं।

व्यापार के निरूत्साहित प्रभाव
(The Backwash Effect of Trade)

प्रो॰ गुनार मिर्डल के अनुसार अल्पविकसित देश इस तरह के हैं जिनमें अच्छे की बजाय विपरीत प्रभाव ज्यादा है। उदाहरण के तौर पर बाजार का आकार विस्त त होने पर प्रारम्भिक स्तर पर विकसित देश जो मशीनीकरण उत्पादन में दक्ष हैं वही इसका ज्यादा फायदा उठाते हैं क्योंकि अल्पविकसित देशों में छोटे तथा कुटीर उद्योग है जिनके निर्यात की कीमत सस्ती हैं। ऐतिहासिक अनुभव बताते हैं कि ब्रिटिश शासक के दौरान इन देशों में कुटीर उद्योग और छोटे उद्योगों का भारी विनाश हुआ और ये देश प्राथमिक वस्तुओं का निर्यात करने में तब्दील हो गए। इन तब्दीली से सबसे बड़ा नुकसान है कि ये प्राथमिक वस्तु निर्यात की माँगों अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बेलोच हैं। ऐसे माँग का स्तर तेजी से नहीं बढ़ता। और इससे कीमत में उतार चढ़ाव स्थिति बनी रहती है। निर्यात उत्पादन में तकनीकी सुधार का लाभ इन देशों के आयात में परिवर्तित हो जाता है। इसलिए प्रो॰ मिर्डल ने कहा है अल्पविकसित देशों में उत्पादन का तरीका अन्र्तराष्ट्रीय व्यापार का प्रतियोगिता प्रभाव की बजाय निरूत्साहित (Back Wash) प्रभाव दिखाता है। इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार अल्पविकसित देशों में स्थिरता आदि बनाए रखने में दबाव डालता है।

विकासशील देशों के लिए व्यापार शर्तें सही नहीं
(Deteriorating Terms Trade for Developing Countries)

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में भूमिका पर सबसे पहले परिचर्चा यू॰एन॰ कमीशन ऐंड एम्प्लायमेंट कमीशन ने आर्थिक विकास पर पहली कमेटी की बनाई गई रिपोर्टें पर हुई। इस कमीशन का तर्क था कि पूँजीगत पदार्थों की कीमत ने अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में विकास और मुश्किल बना दिया है। इस रिपोर्ट में प्राथमिक उत्पादन तथा पूँजीगत उत्पाद की संबंधित कीमतें थी। इस संदर्भ में UN के Economic Affair विभाग ने सम्बन्धित कीमतों पर एक रिपोर्ट तैयार की। इस

रिपोर्ट में पाया कि प्राथमिक वस्तुओं की कीमत अनुपात का सूचकांक घट रहा है। इस रिपोर्ट में ये भी बताया गया कि अल्पविकसित देशों में निर्योत आय का अधिक हिस्सा प्राथमिक वस्तुओं के उत्पाद पर निर्भर करता है और इन वस्तुओं की कीमत मशीनी उत्पादन की बजरय कम है जो विकसित देश निर्यात करते हैं।

प्रो॰ पी॰ सरकार और एच॰ सिंगर ने 1991 में अपना अध्ययन प्रकाशित किया। इसमें उन्होंने 1980-87 के समय को लेकर अध्ययन किया और यह निष्कर्ष निकाला कि अल्पविकसित देशों में निर्मित वस्तुओं के निर्यात में भी 1 प्रतिशत की कमी आई है। अपने पहले अध्ययन में प्राथमिक वस्तुओं का व्यापार 0-9 प्रतिशत प्रति वर्ष के हिसाब से गिरा। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अल्पविकसित देशों में प्राथमिक वस्तुओं के निर्यात में ही नहीं बल्कि निर्मित वस्तुओं के निर्यात में ही नही बल्कि निर्मित वस्तुओं के निर्यात में ही नहीं बल्कि निर्मित वस्तुओं के निर्यात में भी गिरावट आई है। 1970-71 में निर्मित वस्तुओं का निर्यात 35 प्रतिशत गिरा एक तरफ कीमत में गिरावट तथा दूसरी तरफ निर्यात में गिरावट। इससे अल्पविकसित देशों में दोहरा नुकसान है।

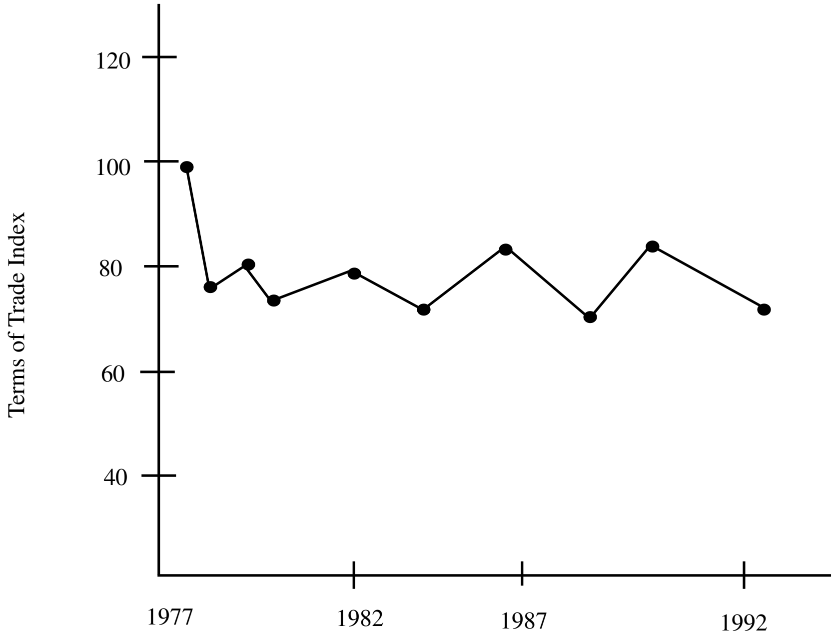

चित्र: Terms of trade of Non-Oil developing countries, (1977-92) (1977=100)

चित्र में जो पेबरिस सिंगर सिद्धान्त द्वारा दर्शाया गया है कि घटते हुए स्वर का अभिप्राय है अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में प्राथमिक वस्तुओं व्यापार स्तर घट रहा है। ये पहले भी बता चुके हैं 1949 में UN डिपार्टमेंट ऑफ इकनामिक एफेयर के द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी। पेबरिस ने परम्परागत मुक्त व्यापार नीति द्वारा किए गए वायदे के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नीति द्वारा आपसी लाभ के ऊपर प्रश्न चिन्ह लगाया है। लेटिन अमेरिका के विकसित अनुभव पर ध्यान देते हुये, उसने तर्क दिया कि उनकी गिनती हुई (विपरीत) व्यापार की शर्तें उनके विकास में बाधा बनेंगी। उसने संसार को दो भागों में बाँटा है औद्योगिक देश व विकसित देश (Peripheral)। अल्पविकसित देश औद्योगिक क्षेत्र के लिए कच्चा माल व भोजन जुटाते हैं। इस स्कीम के तहत अल्पविकसित देशों के लिए औद्योगिकरण का विकल्प नहीं है। यह विकल्प अथवा प्रबंध दिखाता है कि औद्योगिक क्षेत्र के हाथों उनका आर्थिक शोषण होता है।

1. **व्यापार की शर्तें और तकनीकी उन्नति (Technical Progress and Terms of Trade)** - पेबरिस के अनुसार अल्पविकसित देशों में असमानता प्राथमिक वस्तुओं की व द्धि दर और औद्योगिक वस्तुओं के आयात में व द्धि दर में असमानता है। प्राथमिक वस्तुओं का निर्यात धीरे तथा औद्योगिक वस्तुओं के आयात की माँग तेजी से बढ़ती है। यह आर्थिक विकास का बड़ा तत्व है। पेबरिस यह भी तर्क देते है कि प्राथमिक वस्तुओं के निर्यात की व द्धि का निम्नकरण औद्योगिक क्षेत्र में तकनीकी उन्नति है। दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता है कि तकनीकी उन्नति औद्योगिक क्षेत्र में लम्बे समय

के लिए प्रयोग तथा कृषि क्षेत्र में देरी से आती है। यदि कृषि क्षेत्र को देखा जाए तो दो बार ये अमरीका तक सीमित हो जाते हैं। अल्पविकसित देशों में कृषि का उत्पादन यदि बढ़ जाए तब भी निर्यात में व द्धि नहीं हो पाती क्योंकि औद्योगिक क्षेत्रों में कृषि उत्पादन अधिक होने पर ये अल्पविकसित देशों के कृषि निर्यात को कमजोर करते हैं।

पेबरिस के अनुसार औद्योगिक क्षेत्रों में उद्यमियों की आय और उत्पादक साधन उत्पादकता की अपेक्षा तेजी से बढ़ते हैं। लेकिन अल्पविकसित देशों में आय बढ़ोतरी उत्पादकता की अपेक्षा कम है। इसका परिणाम है कि औद्योगिक क्षेत्र तकनीकी उन्नति से होने वाले लाभ अपने पास रखती है। तथा अल्पविकसित देशों अपने तकनीकी उन्नति की फल इन देशों के साथ बाँटने को मजबूर हैं। विकसित देशों में श्रम की कमी तथा व्यापार संघ संगठन ताकतवार की वजह से उत्पादकता की बजाय मजबूरी में व द्धि होती है। लेकिन अल्पविकसित देशों में श्रम की अधिकता तथा श्रमिकों में संगठनों के अभाव से मजदूरी स्तर नहीं बढ़ पाता और कृषि पर श्रम का दबाव भी रहता है।

पेबरिस जैसे मत सिंगर के भी है। औद्योगिक देशों में तकनीक उन्नति के लाभ उत्पादकों के बीच आय के रूप में तथा अल्पविकसित देशों में तकनीक सुधार से आय उपभोक्ताओं के बीच कम कीमत की शक्ल में बंद अर्थव्यवस्था में इस प्रकार के स्तर से कोई प्रभाव नहीं पड़ता। लेकिन जब उत्पादक घरेलु ही और उपभोक्ता विदेशी हो तो प्रभाव पड़ता है। प्रो॰ सिगर ने कहा है औद्योगिक क्षेत्र दोनों में प्राथमिक वस्तुओं का उपभोग तथा निर्मित वस्तुओं का उत्पादन में उत्तम है लेकिन अल्पविकसित दोनों में ही प्राथमिक वस्तुओं का उत्पादन तथा निर्मित वस्तुओं का उपभोग उत्तम नहीं है।

2. **उत्पादों के लिए माँग की आय लोच व व्यापार की शर्तें (The Income Elasticity of Demand For Products and Terms of Trade)** - तकनीकी उन्नति के साथ-साथ और भी कारण है व्यापार की खराब हालत के। पेबरिस के मतानुसार भुगतान संतुलन से विभिन्न उत्पादों की माँग की आय लोच में अन्तर है। प्रायः यह देखा जाता है कि प्राथमिक वस्तुओं की माँग की आय लोच निर्मित वस्तुओं की आय लोच से कम है। इसलिए प्राथमिक वस्तुओं की मांग की आय लोच एक से कम है आय घटी हुई माँग इन वस्तुओं पर खर्च किया जाएगा आय बढ़ने के बाद (Engles Law in Economics) अल्पविकसित देश प्राथमिक वस्तुओं का निर्यात करते हैं तथा विकसित देश निर्मित वस्तुओं का संसार की दी गई आय (व द्धि) पर भुगतान संतुलन की स्थिति अल्पविकसित देशों में खराब तथा विकसित देशों में अच्छी। भुगतान संतुलन में संतुलन की समस्या अल्पविकसित देशों में लगातार खराब होगी तथा विकसित देश अतिरेक दिखाएँगे। अल्पविकसित देशों में निर्यात की बजाय आयात तेजी से बढ़ते हैं। इसलिए संतुलन की स्थिति में गिरावट है।

व्यापार और कम विकसित देश
(Trade and Less Developed Countries)

Primary Exports - पिछले चार दशकों से व्यापार में तेजी से व द्धि हुई है। यद्यपि 1965 से 1995 के बीच विकसित देशों के निर्यात में 7 प्रतिशत की व द्धि प्रति वर्ष हुई है लेकिन अल्पविकसित देशों में निर्यात में व द्धि कम दर से 5 प्रतिशत प्रतिवर्ष हुई है। कीमत के स्तर पर अथवा निर्यात की कीमत देखी जाए तो अल्पविकसित देशों का World Trade में हिस्सा 1965 में 30 प्रतिशत था जो गिरकर 1995 में 20 प्रतिशत रह गया।

अधिकतर कम आय वाले अल्पविकसित देश अपनी निर्यात आय का 75 प्रतिशत हिस्सा प्राथमिक वस्तुओं से कमाते हैं। दूसरी तरफ विकसित देश का निर्यात का 90 प्रतिशत हिस्सा निर्मित वस्तुओं से कमाते हैं। अल्पविकसित देशों की अधिकतर संख्या प्राथमिक वस्तुओं के निर्यात पर करती है। इसलिए इनके निर्यात में तेजी नहीं आई है। क्योंकि यह आन्तरिक तथा बाह्य क्षेत्रों पर निर्भर हैं।

बाहरी क्षेत्र में विद्यमान तत्वों के बाद और भी कई कारण हैं जिससे आर्थिक उन्नति होने पर निर्यात योग्य वस्तुओं के उपभोग में व द्धि अथवा कच्चा माल इत्यादि को अपने उद्योगों में करना। 1952 में भारत ने तेल का निर्यात प्रतिबंधित किया था क्योंकि तेल की घरेलू क्षेत्र के लिए माँग पूरी नहीं हो पाई। स्फीतिकारी प्रभावों को रोकने के लिए सरकार इस तरह के कदम उठाती है।

निर्मित वस्तुओं का निर्यात
(Manufactured Exports)

अल्पविकसित देशों में निर्यात में व द्धि वो भी निर्मित वस्तुओं में कम होती है। पेबरिस ने कहा है यह भुगतान संतुलन की वजह से है। पहले भी बता चुके है यह माँग की आय लोच के कम होने की वजह से हैं। प्राथमिक वस्तुओं की माँग की लोच कम है इस वजह से भुगतान संतुलन की समस्या उत्पन्न होती है। निर्मित क्षेत्र में निर्यात कम होने का कारण उत्पादन समस्या तथा गलत घरेलू नीति है। अल्पविकसित देशों में उत्पादन के साथ टैरिफ समस्या भी उत्पन्न हो जाती है। इस टैरिफ की वजह से निर्यात प्रभावित होते हैं।

अल्पविकसित देशों में निर्मित उद्योगों में उत्पादन की समस्या बाजार में सिर्फ लागत का ही अन्तर नहीं बल्कि कीमत करने पर हो सकता है बिक्री न हो। यद्यपि बहुत सा अल्पविकसित देशों के गरीब प्रतियोगी है अल्पविकसित देशों के उपभोक्ता भी विदेशों में बनी वस्तुओं कर उपभोग करने को लालयित रहते हैं। इसलिए सरकार इसको नियंत्रित करने के लिए आयात कर लगाती है।

इन सब बातों के साथ हम कह सकते हैं कि विदेशी व्यापार का यदि वास्तविकता की द ष्टि से आंकलन किया जाए तो यह सही रूप से लाभदायक नहीं है। क्योंकि अल्पविकसित तथा विकसित देशों में निर्यात वस्तुओं की प्रव ति में काफी अंतर है। लेकिन फिर भी यदि औद्योगिकरण को बढ़ावा देना है तो हमें तकनीकी लाभ भी प्राप्त होते हैं। जो आयात से संभव हैं।

अध्याय-27
भारत में गरीबी
(Poverty in India)

अधिकतर सभी अल्पविकसित देश जहाँ प्रति व्यक्ति आय कम, आय असमानता ने कई बुराईयों को जन्म दिया है। जिनमें से गरीबी एक है। भारत में पाँच दशकों में विकास होने के बावजूद 24.8 प्रतिशत लोग गरीब है। वर्तमान आय के समान वितरण करने के बाद क्या हर एक अमीर होगा, लेकिन इसमें शक नहीं है कि प्रत्येक न्यूनतम उपभोग करेगा।

गरीबी का विचार
(The Concept of Poverty)

आमतौर पर यह माना जाता है कि एक निश्चित न्यूनतम उपभोग स्तर प्राप्त नहीं करता है तो वह गरीब कहलाएगा। लेकिन अर्थशास्त्रियों ने यह पता लगाने में असमर्थता जाहिर कि क्या आय कीमत एक समय पर न्यूनतम उपभोग स्तर को प्राप्त करने के निए गारंटी देती है। 1962 में भारत सरकार ने निरीक्षण किया राष्ट्रीय स्तर पर उपभोग का स्तर क्या होना चाहिए। इस ग्रुप ने निजी उपभोग का खर्च 20 रूपये (1960-60 कीमत पर) प्रति व्यक्ति प्रति माह ग्रामीण तथा शहरी रहन-सहन पर कोई अन्तर नहीं किया। यद्यपि यह साफ नहीं था कि किस आधार पर यह न्यूनतम स्तर बनाया लेकिन काफी लोगों ने इस पर प्रश्न चिन्ह लगाया क्योंकि ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में रहने की लागत अलग-अलग है।

नियोजन कमीशन ने Task Force द्वारा दी गई परिभाषा से गरीबी को परिभाषित करने के लिए विकल्प माना है। इनका पावर्टी मैथड को प्रयोग करते हुए गरीबी प्रति व्यक्ति खर्च जिसमें कलोरी की मात्रा गाँव में 2400 कैलोरी प्रतिदिन तथा 2100 शहरी क्षेत्र में इसके पूरा करने के लिए 49 रूपये ग्रामीण क्षेत्र में तथा 57 रूपये शहरी क्षेत्र के लिए (1973-74 की कीमतों पर) G. Dutt, B Ozler, M. Ravallion, S.D. Tendulkar और L.R. Jain ने भी गरीबी रेखा का प्रयोग किया है।

गरीबी के घटक
(Factors of Poverty)

भारत में गरीबी पर सही रूप से आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं। इस देश ने इस तरह के आँकड़े इकट्ठे करने के लिए कोई खास प्रयत्न नहीं किया। NSS के उपभोग आंकड़े (गरीबी) इस तरह की सूचना प्रदान करते हैं जो ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र में गरीबी के घटक को निर्धारित करने के लिए प्रयोग किए जाते हैं।

1. **Head Count Approach** - भारत में गरीबी के अंदाजे के बारे में दंडेकर और रथ, वरदान और आहुलिवालिया ने आँकड़े प्रस्तुत किए है लेकिन वे काफी पुराने और गरीब घटक है ओर गरीबी के घटक जो उपलब्ध है, उनके बारे में सही स्थिति प्रदान नहीं करते। प्रो॰ मिन्साह के अनुसार 1967-68 में गरीबी रेखा से नीचे 37.1 प्रतिशत थे तथा आहुलिवालिया 56.5 प्रतिशत व वरदान ने 54 प्रतिशत उसी वर्ष तथा 1968-69 के लिए दंडेकर व रूप ने 40 प्रतिशत बनाया है। प्रो॰वरदान, दंडेकर व रथ ने गिहास से गरीबी रेखा थोड़ी सी नीचे दिखाई है। इसमें हैरानी नहीं होनी चाहिए क्योंकि इन अर्थशास्त्रियों में एक जैसे आँकड़े प्रयोग कर मैथोडोलिजी अलग-अलग प्रयोग की है। इन सब बातों से यही पता चलता है कि 1960 में गरीबी की संख्या काफी थी बल्कि इस देश की कुल जनसंख्या का बडा हिस्सा गरीबी में था।

   नियोजन कमीशन ने भी आंकड़ों के घटक के अंदाजे लगाए हैं जो ग्रामीण जनसंख्या के लिए 49 रुपये (1973-74

कीमतों पर) प्रति व्यक्ति प्रति हीने तथा शहरी क्षेत्र (शहरी जनसंख्या) 57 रुपये (1973-74 की कीमतों पर)। इन घटकों से 1978-79 में 51.2 प्रतिशत गरीब ग्रामीण क्षेत्र में तथा 38.22 शहरी क्षेत्र में। ये आंकड़े 1978-79 में उपलब्ध थे।

नियोजन कमीशन द्वारा प्रयोग की गई मैथोडोलोजी की आलोचना की गई और यह महसूस किया गया कि गरीब से संबंधी सारे तत्वों को दोबारा निरक्षित किया जाए। नियोजन कमीशन ने एक्सपर्ट ग्रुप बनाया। जो प्रयोग की गई मैथोडोजी का निरीक्षण करे। एकस्पर्ट ग्रुप ने टास्क फोर्स द्वारा लिया गया अथवा उसके द्वारा दिया गया सुझाव को मान लिया गया। इनका यह मानना था कि कीमत रेखा को भी ध्यान में रखा जाए।

सूची - 1

गरीबी से नीचे रहने वाले लोगों का प्रतिशत

(नियोजन कमीशन के अंदाजे एक्सपर्ट ग्रुप की मैथोडोलोजी)

क्षेत्र	1983-84	1987-88	1993-94
ग्रामीण	46.6	39.1	37.3
शहरी	42.2	40.1	32.4
दोनों	44.8	39.3	36.4

स्त्रोत : भारतीय सरकार , एक्सपर्ट ग्रुप की रिपोर्ट के आधार पर, गरीबों की संख्या 1993, भारत सरकार, नियोजन कमीशन, नवीं पंचवर्षिय 1997-2002 Vol I.

वर्तमान समय में नियोजन कमीशन ने गरीबी को मापने के लिए दो विभिन्न अंदाजे अपनाए हैं। यह सब 1978 के बाद स्थिति दर्शाते हैं। इन अंदाजों के आधार पद (वही प्रश्नचिन्ह लगी मैथोडोलोजी का प्रयोग) बताया है कि भारत में गरीबी रेखा में तेजी से गिरावट आई है जो घटकर 29.8 प्रतिशत (987-88) से 1994-95 में रह गई है। यद्यपि इन आंकडों की उपयोगिता सही न होने पर इनका प्रयोग नहीं किया गया है। एक्सपर्ट ग्रुप द्वारा सुझाव दी गई मैथोडोलोजी को प्रयोग करने के बाद नियोजन कमीशन के खुद के आंकडे इससे ज्यादा जो सूची एक में दर्शाये गए हैं। वर्तमान समय में वर्ल्ड बैंक के पावर्टी और हुमन रिसार्स डिविजन द्वारा भी आँकड़े दिखाए गए हैं। जिनमें काफी लम्बा समय प्रयोग किया गया है। (1950-1951 से 1973-74) इसके बाद 1989-90 तक गरीबी में कमी आई है उसके बाद यह उल्टी हो गई है। 1993-94 में ग्रामीण क्षेत्रों में 38.7 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्र 30 प्रतिशत गरीब जनसंख्या थी।

हैड कांऊट नोन-डीसकरीमीनेटरी अपरोच की सीमाएँ (Limitations of the Head-Count Non-Discrimix atory Approach) - ऊपर जो गरीबी के घटक लिए गए है वे सब इस अपरोच के द्वारा मापे गए हैं। इसके द्वारा जो माप दिए गए हैं कि 77 रूपए या इससे कम या ज्यादा रूपये गरीबी को निर्धारित करते हैं। क्योंकि यदि वह आदमी 77 रूपये कमा रहा है तो ठीक है यदि 25 रूपये कमा रहा है तो उसे किसी सूची में रखा जाए।

अमर्त्य सेन ने कहा है गरीब एक आर्थिक क्लास नहीं है यदि हमने गरीबी को मापना है तो उसे प्रभावित करने वाले पहलू सामाजिक या अन्य कोई उसको देखना चाहिए। गरीबी सर्वेक्षण को दोबारा लिया गया है (1) बराबर आय प्रयोग कर किसको कितना मिला है और कुछ आय के तत्व प्रयोग कर गरीबी को रेखांकित किया (2) वास्तव में स्थिति कितनी खराब है तथा एक की स्थिति दूसरे की स्थिति से खराब है। इस संदर्भ में "अमर्त्य सेन ने कहा है यह सम्पूर्ण तथ्य नहीं है कि कितने लोग गरीब है, बल्कि किस हद तक वे गरीब हैं।" प्रो॰ सेन के हिसाब से सब गरीबी की समस्या को टेकल करते हैं। वर्तमान समय में प्रो॰ आजलर, दत्त व रेवेलन ने वर्न्ड बैंक के लिए किए गए अध्ययन में पावर्टी गेप रेस्यो और स्क्येरड गेप रेस्यो 1951-94 समय के लिए प्रयोग किया है। ये गरीबी के घटक के साथ-साथ गरीबी की गहराई को भी मापते हैं।

उनके बीच तथा गरीबी की रेखा के बीच का अन्तर है। पावर्टी गेप आय के हस्तान्तरण को मापता है जो गरीब को गरीबी रेखा तक पहुँचने के लिए है। ऐसी हालत में यह सिद्धान्त गरीबी की गहराई के साथ इसके घटक को भी मापता है। यद्यपि यह सिद्धान्त गरीबों की आय के बीच कितनी असमानता है उसका व्याख्यान नहीं करता। यदि एक गरीब

की आय को दूसरे गरीब के पास हस्तान्तरित किया जाए तो कौन ज्यादा गरीब है। क्योंकि गरीबी सूचकांक में इससे कोई परिवर्तन नहीं आएगा। यह सीमा ज्यों कि त्यों खड़ी हुई है वरना तो पावर्टी गेप माप सिंपल हैड काऊँट से उच्च होने चाहिए।

पावर्टी गेप इंडेक्स से शहरी क्षेत्र में भी गरीबी मापी गई है। ओजलर, दत्त व रेवेलियन वर्ल्ड बैंक के पावर्टी एंड हुमन डिविजन डवल्पमैंट के लिए प्रयोग किया है। ये आँकड़े भी बताते हैं कि 1950-51 से 1973-74 तक कोई ज्यादा अंतर दिखाई नहीं देता लेकिन उसके बाद 1989-90 तक गरीबी सूचकांक कम हुआ है। नब्बे के प्रारम्भ में यह स्तर उल्टा था और 1993-94 में पावर्टी गेप इन्डेक्स ग्रामीण जनसंख्या के लिए 9.1 तथा शहरी जनसंख्या के लिए 7.62 था।

3. **स्केयेरड पावर्टी गेप इंडेक्स (The Squared Poverty Gap Index)** - यह माप गरीबों के बीच आय असमानता को दर्शाता है। इसको हम आय गरीबी को मापने का सही तरीका कह सकते हैं।

इस स्केयेरड पावर्टी गेप इडेक्स को प्रो॰ ओजलर, दत्त और रेवेलियन ने साफ तौर पर बताया है कि 1950-51 से 1973-74 तक गरीबी में कोई अंतर नहीं आया है। यद्यपि 1974 के बाद स्केयेरड पावर्टी इंडेक्स ग्रामीण तथा शहरी जनसंख्या दोनो की कम हुई है। 1993-94 में ग्रामीण जनसंख्या के लिए 3.27 तथा शहरी के लिए 2.76 स्केयेरड पावर्टी इंडेक्स था। 1973-74 में ग्रामीण में 7.13 तथा शहरी में 5.22 था। इसका मतलब इस सूचकांक में कमी हुई है।

अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में गरीबी हटाने के लिए काफी महत्त्वता दी गई है। लेकिन सरकार को नीतियाँ बनाने से पहले यह निर्धारित करना चाहिए कि गरीब है कौन? सरकार ने इस बारे में कोई विशेष प्रयत्न नहीं किए हैं। NSS आंकडों को प्रयोग करते हुए, निंहास, रथ दांडेकर और कुछ दूसरे अर्थशास्त्रियों ने इसको परिभाषित किया है।

1. घरेलू कृषि मजदूर जो भूमिहीन है, घरेलु श्रमिक मजदूर का 60 प्रतिशत है।
2. कृषि मजदूर घर जिसके पास थोड़ी जमीन है वे कृषि मजदूर का 40 प्रतिशत है।
3. गैर कृषि मजदूर घर जिसमें गाँव के कारीगर भी शामिल हैं और जो भूमिहीन हैं।
4. कम भूमि मालिकाना जो 2 एकड़ जमीन से कम को जोतते हैं बल्कि 1 एकड़ से कम हैं।

शहरी गरीबों दांडेकर और रथ ने अलग से परिभाषित नहीं किया है बल्कि शहरी गरीबों को उन्होंने ग्रामीण गरीबों की ज्यादा माँगों से जोड़ा है। जो ग्रामीण गरीब गाँव में रोजगार प्राप्त नहीं कर सकते और शहरों में चले जाते हैं। वे शहरी गरीबी में निवास करते हैं। बढ़ते हुए शहरों से उनकी श्रम तथा जीवन के बारे में कम पता चलता है।

मानव गरीबी
(Human Poverty)

अधिकतर अर्थशास्त्रियों ने गरीबी को आय के साथ जोड़ा है लेकिन यह मानव जीवन की अधुरी तस्वीर है। Human Development Report, 1997 में कहा गया है। अच्छा स्वास्थ्य तथा अच्छा जीवन कोई भी बिता सकता है, लेकिन अनपढ़ होने से काई भी मनुष्य संचार या दूसरों से विचार विमर्श से ज्ञान प्राप्त नहीं कर पाता। दूसरा उदाहरण एक आदमी पूर्ण रूप से शिक्षित है लेकिन स्वास्थय खराब या किसी बीमारी से पहले म त्यु हो जाती है। तीसरा तरीका जो गरीबी को प्रभावित करता है उसको इसमें शामिल नहीं किया गया है। इन लोगों की परेशानियों को आय पूर्ण रूप से नहीं पकड़ सकती। इससे साफ है कि गरीबी के बारे में पूर्ण विचार प्राप्त करके उसकी परेशानियाँ इत्यादि के बारे में जानकारी प्राप्त करके पूर्ण रूप से गरीबी के बारे में अध्ययन करना चाहिए न कि केवल आय के बारे में कि यही केवल गरीबी का कारण है। मानव गरीब का यही तत्व है। इसका अभिप्राय मानव विकास के लिए अथवा मानव विकास का जो आधार है उसको नकार दिया गया है। क्योंकि मानव विकास का आधार है- लम्बा जीवन, स्वस्थ, क्रियात्मक जीवन और स्वतन्त्रता आत्म सम्मान, दूसरों का सम्मान।

4. **मानव गरीबी सूचकांक (Human Poverty Index)** - 1997 में Human Development Report ने गरीबी सूचकांक आरंभ किया ताकि कम्पोंजिट इंडैक्स जिसमें समुदाय में उपस्थित परेशानियाँ, आदि को Human

Development Index के साथ मिला लिया जाए। यह रिपोर्ट बताती है कि गरीबी का कोई भी माप चाहे मानव गरीबी सूचकांक उससे भी बड़ी है। यह बहुत चीजो को शामिल करती है जैसे स्वतन्त्रता की कमी, फैसलों में शामिल होने की अयोग्यता निजी सुरक्षा की कमी, सामुदायिक सेवाओं में शामिल होने की अयोग्यता आदि जिसको माप नहीं सकते। यद्यपि अल्पविकसित देशों में भूख, असाक्षरता, अकाल, स्वास्थय सेवाओ की कमी या साफ पानी को शामिल किया गया है। लेकिन Human Development Report में Human Life (मानव) के चार तत्व लिए गए हैं। लम्बी आयु, ज्ञान बच्चों का स्वास्थ्य अच्छा (उच्च) जीवन स्तर।

1. मानव गरीबी दरिद्रता/सूचकांक (Human Poverty Index) में उनको लोगों का प्रतिशत जो 40 साल की आयु पहले मरते हैं।
2. असाक्षरता की प्रतिशत दर
3. उच्च जीवन स्तर जिसमें साफ पीने का पानी बगैर स्वास्थ्य सेवाओं के लोगों का प्रतिशत, सेनीटेशन सुविध ाओं के बिना लोगों का प्रतिशत।

भारत में मानव दरिद्रता
(Human Poverty in India)

भारत में मानव दरिद्रता बहुत ज्यादा है। मानव गरीबी का सबसे बड़ा तत्व है छोटा जीवन अधिकतर लोगों की 40 साल से पहले म त्यू हो जाती है। भारत में लोगों का 1/5 भाग इस आयु से पहले मर जाते है। यह औद्योगिक क्षेत्रों की बजाय चार गुणा है। चीन, श्रीलंका, मलेशिया, अर्जेनटीना,क्यूबा, चाइना में 8 प्रतिशत लोग 40 से पहले मर जाते हैं तथा भारत में 16 प्रतिशत है।

1997 में भारत में 15 साल से ऊपर असाक्षरता 46.5 प्रतिशत यह अल्पविकसित देशों से 28.4 प्रतिशत ज्यादा है। वियतनाम श्रीलंका, थाईलैंड यह 10 प्रतिशत है। 1997 में भारत में 15 वर्ष से ऊपर महिला असाक्षरता 60.4 प्रति औरत तथा आदमी असाक्षरता 30.3 प्रतिशत थी।

ऊपर वर्णित गरीबी के माप के बारे में हमने तीन माप को लिया है। (1) Head Count Approach (2) Squared Gap Poverty Index और Human Poverty Index. यदि हम दरिद्रता के बारे में आंकलन करे तो अलग-अलग अर्थशास्त्रियों, नियोजन कमीशन आदि ने अलग-अलग मैथोडोलोजी ली है। हॉलाकि प्रभाव डालने वाले तत्व एक जैसे हैं। अधिकतर अर्थशास्त्री दंडेकर व रथ से सहमत होंगे कि 'शहरी दरिद्रता' ग्रामीण क्षेत्र से निकलकर शहरी क्षेत्र में प्रवेश करती है। इन अर्थशास्त्रियों ने इसको अलग से परिभाषित नहीं किया है। क्योंकि ग्रामीण क्षेत्र में दरिद्रता बढ़ने पर ही यह शहर में स्थान्तरित होती है। इसलिए शहरी दरिद्रता तथा उनकी समस्याओं को अलग से परिभाषित करना मुश्किल है।

ग्रामीण दरिद्रता
(Rural Poverty)

ग्रामीण दरिद्रता का महत्त्वपूर्ण कारण जनसंख्या व द्धि है। रोजगार के सिमटते साधनों ने इसको और बढ़ा दिया है। कृषि पर निर्भरता भी इसका कारण है। अधिकतर कृषि मजदूर, छोटे व सीमांत किसान सभी गरीब हैं। भारत का सामाजिक राजनीतिक ढाँचा भी इसमें सुधार नहीं ला सका।

जनसंख्या व द्धि के कारण भूमि पर दबाव बढ़ने से प्रति व्यक्ति श्रम आय में कमी आई है। इसके साथ कृषि में लागत कम करने वाली तकनीक के प्रयोग से ग्रामीण दरिद्रता में कमी आई है नई तकनीक के प्रयोग करने पर खाद्यान्न उत्पादन की लागत में कमी से श्रम रोजगार में व द्धि हुई है। आय के प्रभाव को देखते हुये यह गरीबों के हक में है। इसका अभिप्राय नई तकनीक को कृषि क्षेत्र में प्रयोग करने पर रोजगार के साथ आय में व द्धि हुई जो एक महत्त्वपूर्ण साधन है।

ग्रामीण गरीबी को दूर करने के लिए सरकार ने एक कार्यक्रम अथवा माप शुरू किया है जो इसको कम करने में सहायता करेगा।

इसे Poverty Trickle Down का नाम दिया है।

ग्रामीण क्षेत्र में दरिद्रता व ट्रीकल डाउन
(Poverty and Trickle down in the Rural sector)

इस सिद्धन्त के अर्न्तगत गरीबी हटाने के लिए प्रति व्यक्ति आय में तेज व द्धि की आवश्यकता है। भारत में एक कृषि विकास के संदर्भ में इस सिद्धान्त का प्रयोग किय गया इस सिद्धान्त में माना गया है कि कृषि उत्पादक में बगैर संस्थागत परिवर्तन के व द्धि इस गरीबी तत्व को कम करेगी । प्रो॰ S. Ahuluwalia ने कृषि क्षेत्र में ट्रीकल डाउन सिद्धांत मौजूद है इसलिए इसके द्वारा कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति आय बढ़ने पर गरीबी में कमी आएगी। उनके अनुसार कृषि क्षेत्र में आय वितरण स्थिर रहता है इसलिए इस सिद्धांत को प्रयोग कर हम उत्पादन में व द्धि कर सकते है तथा स्थिर आय वितरण, उत्पादन पर विपरीत प्रभाव नहीं डालता हैं उनका यह भी मत है कि इच्छा के अनुसार उत्पादन में व द्धि नहीं हो सकती है, इसलिए सम्पूर्ण दरिद्रता को खत्म नहीं किया जा सकता। घरेलु उत्पाद में कृषि आय 2 प्रतिशत बढ़कर है लेकिन यह गरीबी को खत्म करने के लिए पूर्ण नहीं है।

फिर भी इस सिद्धांत के साथ हम गरीबी पर काबू कर सकते है। प्रो॰ बरदान ने 60 के दशक में इस सिद्धान्त के रोकने के बारे में अपने विचार प्रस्तुत किए है। उनका मानना है कि नई तकनीक कृषि पर तथा कृषि श्रम पर विपरीत प्रभाव डालती है उनका कहना है कि श्रम प्रधान तकनीक का प्रयोग कर आय तथा रोजगार को बढ़ा सकते है जो कि 1990 में अपनाया गया था। उनके विचार है।

1. श्रम प्रधान तकनीक का प्रयोग
2. काशतकार को बाहर कर जमींदारों को खुद खेती जोतकर आय में व द्धि
3. कुछ क्षेत्रों में तेजी से कृषि विकास ताकि श्रम का हस्तान्तरण रूके।

इन सब बातों से श्रम प्रधान तकनीक का प्रयोग कर कृषि क्षेत्र में आय के स्त्रोत बढ़ा सकते है जिसमें व्यक्ति आय में व द्धि से गरीबी का स्तर गिरेगा और यह सिद्धांन्त अपने आप लागू होगा । इसके साथ सरकार ने ग्रामीण गरीबी हटाने के लिए काफी कार्यक्रम शुरू किए है जैस Integrated Rural Development Programme (1980), National Rural Employment Programme, Employment Guarantee Programme, etc. जो गाँव में सामुदायिक सेवाएँ प्रदान करने के साथ ग्रामीण लोगों को रोजगार जुटाने में भी मदद करेगें। इससे यदि पिछड़े आँकड़ों को देखा जाए तो गरीबी में कुछ गिरावट आई है।

अध्याय-28
नियोजन और विकास
(Plans and Development)

बाजार प्रभावित अर्थव्यवस्था में नियोजन
(Plan in a Market–oriented Economy)

बाजार के द्वारा नियोजन पश्चिमी देशों तथा कुछ अल्पविकसित देशों में शुरू किया गया है। प्रो॰ लुईस बाजार से नियोजन को प्रभावी नियोजन के नाम से भी जाना जाता है। इस तरह के आर्थिक नियोजन द्वितीय युद्ध से विकसित तथा अल्पविकसित देशों में अपनाए गए हैं। प्रभावी नियोजन के अन्तर्गत मुक्त व्यापार की अवस्था है। फर्मे निजी व सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों में निवेश करती है और बाजार में अपनी वस्तुओं को एडजस्ट करने में स्वतंत्र हैं। जब तक संभव हो सके नियंत्रण को रोका जाता है। लेकिन रेगुलेटरी माप से स्वतन्त्रता की कोई संभावना नहीं है। यद्यपि, यह नियोजन के महत्व को सीमित नहीं करता। राज्य बाजार को नियंत्रण में रखने के लिए, जो उत्पादन को नियंत्रण में रखता है किसी भी सीमा तक जा सकी है। इस प्रकार का नियोजन उपभोक्ता को बचा कर ही नहीं रखेगा बल्कि। विभिन्न आर्थिक स्वतंत्रता का भी विश्वास करेगा। यद्यपि, इस सिद्धान्त के अन्तर्गत नियोजन के तंत्र मुश्किल है। राज्य हमेशा मुद्रा तथा राजकोषीय मापों पर विश्वास रखता है। उदाहरण के तौर पर यदि राज्य किसी वस्तु का उत्पादन बढ़ाना चाहता है तो वह उत्पादक को छूट देगा। इसके विपरीत यदि किसी वस्तु के उत्पादक पर प्रतिबंध लगाना है तो इन पर भारी कर लगाए जा सकते है। इस तरह के नियोजन में उत्पादन के ऊपर नियंत्रण करने की आवश्यकता नहीं। यदि निर्यात या पूँजी निर्माण के अच्छे परिणाम प्राप्त करने है तो यह मुद्रा तथा राजकोषीय नीति के माप को बदलकर कर सकते है। यदि निर्यात में व द्धि करनी है तो सरकार घरेलु वस्तुओं की माँग को काटने के लिए कर लगा सकती है या निर्यातकों को छुट दे सकती है। पूँजी निर्माण को प्रभावी बनाने के लिए बचतकर्ता को कर लाभ या निवेश पर छुट दे सकती है।

सीमाएँ
(Limitations)

बाजार से नियोजन के फायदे पश्चिमी देशों को ज्यादा, लेकिन यह अल्पविकसित देशों के लिए सही नहीं है।

1. इस प्रकार की अर्थव्यवस्था में साधनों का गतिशील होना आवश्यक है। लेकिन अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में साधनो की गतिशीलता कम है। छुट देने के बावजूद भी राज्य बाजार की माँग को पूरा करने के लिए पूर्ति नही जुटा पाता। ऐसी अवस्था में राज्य के पास कोई विकल्प नही, बल्कि कीमत नियंत्रण को लागू करना है।

2. अल्पविकसित देशों में अर्थव्यवस्था उलझी होने पर राज्य द्वारा दिए प्रोत्साहनों के प्रति झुकाव नहीं रहता। कई बार इस संबंध में असफलता से नियोजन प्रक्रिया उदास रहती है। उदाहरण के तौर पर बहुत बार कृषि जोतने वाले कृषक सरकार द्वारा बनाई गई कीमत नीति पर कोई विशेष ध्यान नही देते। परिणामस्वरूप, कृषि क्षेत्र में व द्धि रूकावट से औद्योगिक क्षेत्र भी प्रभावित होता है।

3. अल्पविकसित देशों में प्रोत्साहन के बाद भी बचत प्रभावी नही होती। इस कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में आय का (आर्थिक अतिरेक) का अधिकतर भाग उपभोग पर नष्ट हो जाता है। जमींदान तथा शहरी स्लीट मुद्रा व राजकोषिय नीति पर कोई राय नहीं देते (योगदान), जिससे पूँजी निर्माण के लिए सरकार के उपाय धरे के धर रह जाते हैं। यह

सही कहा गया है कि अल्पविकसित देश बचत व निवेश की मात्रा बढ़ाने के लिए इस सिद्धांत पर भरोसा नही कर सकते।

भारत में नियोजन
Planning in India

आर्थिक नियोजन विकास का एक यंत्र है जो 1951 में शुरू हुआ। इससे पहले इससे इसकी आवश्यकता महसूस नहीं की गयी। स्वतंत्रता के समय के दौरान, कुछ विकसित नियोजन तैयार किए गए। ये नियोजन (विकास नियोजन) दोनो राष्ट्रीय नेताओं और उद्योगपतियों ने तैयार किए। यद्यपि ये नियोजन भारत के विकास की आवश्यकता के प्रति ब्रिटिश शाषक के नजरिये की वजह से ये लागू नही हो पाई। यह विशिष्ट कार्य पं॰ जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में नियोजन कमीशन ने तैयार किया। इस कमीशन की रिपोर्ट में कहा गया कि राज्य को संस्थान आधार के विकास तथा सामाजिक उपरि पूँजी के निवेश में योगदान करना चाहिए।

1940 में दूसरी योजना 'बाम्बे पलान' लाई गई। यह देश के उद्योगपतियों द्वारा तैयार की गई। इस योजना में तैयार किया गया कि भविष्य की योजना पूँजीवादी ढाँचे में होगी।

1947 में भारत को आजादी मिलने के पश्चात आर्थिक नियोजन को अपनाने का रास्ता अपनाया गया। आजादी के 56 सालों के बाद न केवल राष्ट्रीय आय बढ़ी बल्कि विकास में भी व द्धि हुई। नियोजन से आय असमानता में कमी। रोजगार के अवसरों में व द्धि, देश में अधिकतर लोग अकाल से पीड़ित, मुद्रा स्फीति की अवस्था में ज्यादा परिवर्तन नही हुआ। इसका मतलब आर्थिक नियोजन के उदेश्य के कमी रही है। इसलिए इसके उदेश्य तथा ढाँचें में परिवर्तन को आंकलित करने की आवश्यकता हैं।

नियोजन के उद्देश्य
(Objectives of Planning)

नियोजन के उद्देश्य निम्नलिखित है।

1. **आर्थिक व द्धि** (Economic growth)- भारत में आर्थिक नियोजन में हमेशा सरकार ने आर्थिक व द्धि को अहम् स्थान दिया। नियोजकों का विश्वास था कि आर्थिक व द्धि के बढ़ने पर दूसरे उद्देश्यों को पूरा किया जा सकता है। व द्धि किसी देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए आवश्यक है। इससे गरीबी में कमी, असमानता में कमी, रोजगार के अधिक अवसर आदि प्राप्त होते है।

   यद्यपि भारतीय योजनाओं में विकास को प्राथमिकता भी आवश्यक है क्योकि ब्रिटिश राज की वजह से उस समय में भारत इन आर्थिक व द्धि के मौकों को प्राप्त नहीं कर पाया। इसलिए जब भारत को स्वतन्त्रता मिली, फैसला लेने वालों ने अपना चुनाव आर्थिक व द्धि की तरफ किया।

   आर्थिक व द्धि के उद्देश्य से पहली पंच-वर्षीय योजना में 3.6 प्रतिशत प्रतिवर्ष की व द्धि हुई। बल्कि इसका उद्देश्य 2.1 प्रतिशत था इससे नियोजकों को काफी हौसला मिला। दूसरी पंच-योजना में 4.5 प्रतिशत की व द्धि हुई इस योजना में उद्योगों को प्राथमिकता देते हुए महालोबिस का मॉडल प्रयोग किया। तीसरी पंचवर्षीय योजना में 5.6 प्रतिशत प्रतिवर्ष की व द्धि राष्ट्रीय आय में हुई। चौथी पंचवर्षीय योजना में व द्धि स्थिरता के साथ ये उद्देश्य रखा गया पाँचवी पंचवर्षीय योजना में 5.7 प्रतिशत व द्धि का उद्देश्य रखा गया लेकिन इसमें केवल 3.3 प्रतिशत प्रतिवर्ष की व द्धि हुई। पाँचवी पंचवर्षीय योजना में आत्म निर्भरता तथा गरीबी हटाना उद्देश्य रखा गया। पाँचवी पंचवर्षीय योजना भी असफल रही तथा GDP 5.2 प्रतिशत तक कम रहा (घट गया)। 1951 से 1991 के बीच तीन योजनाँए पूरी हुई। इन योजनाओं में और GDP 5.5 प्रतिशत था जो कि इससे पहले वाली योजनाओं में 3.4 प्रतिशत था।

2. **आत्म निर्भर** (Self reliance)- पहली दो पंचवर्षीय योजनाओं में आत्म निर्भर पर ज्यादा जोर नहीं दिया गया। पहली बार तीसरी पंचवर्षीय योजना में आत्म निर्भर को महत्व दिया। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में भी इसे महत्व दिया गया। इस योजना में विदेशी निर्भरता में भी कमी लाई गई। आधारभूत उद्योग जैसे लोहा व इस्पात उद्योग मशीन यंत्र आदि के उद्योग स्थापित करने से निर्भरता कम हुई है। यद्यपि पूर्ण से हम आत्मनिर्भरता का उद्देश्य पूरा नही कर पाए हैं।

3. **पूर्ण रोजगार (Full Employment)**- अल्पविकसित देशों में रोजगार के ऊपर विशेष ध्यान देना चाहिए। इस संदर्भ में आर्थिक नियोजन का उद्देश्य हमेशा पूर्ण रोजगार रहा यद्यपि यह इतनी प्राथमिकता प्राप्त नहीं कर पाया जितनी इसे देनी चाहिए थी । अशोक रूद्रा के अनुसार सही रूप से पूर्ण रोजगार अथवा रोजगार नीति नही बन पाई।

   पिछले कुछ दशकों से भारतीय नियोजक निवेश टारगेट के साथ सीधा जोड़ रहे हैं। उनका मानना है कि निवेश बढ़ने से व्यापार अपने आप बढ़ेगा। लेकिन यदि आंकड़े देखें तो रोजगार में उस स्तर से व द्धि नहीं हो पाई। छठी पंचवर्षीय योजना में 12 मिलियन बेरोजगार थे। 1993-94 मे 2.02 प्रतिशत बेरोजगार तथा 8.43 प्रतिशत अर्ध-बेरोजगार थे। प्रो॰ अरूण घोष ने कहा है बेरोजगारी की समस्या को टैकल करने के लिए तीन प्रतिशत प्रतिवर्ष प्रभावी रोजगार में व द्धि होनी चाहिए।

4. **सामाजिक न्याय (Social Justice)**- सामाजिक न्याय में आय की असमानता और गरीबी में कमी करनी चाहिए। भारतीय योजनाओं में दोनो उद्देश्य है।

   1. **गरीबी में कमी (Reduction in Poverty)**- पूर्व प्रधानमंत्री नेहरू का तर्क था केवल आय तथा धन के दोबारा वितरण से असमानता की समस्या खत्म नहीं हो सकती आय की असमानता आधुनिक आर्थिक व द्धि। आमतौर पर औद्योगिकरण से पनपती है। औद्योगिकरण की प्रारम्भिक अवस्था में आय लोगों की कम तथा कुछ संख्या में लोगों की आय अधिक रहती है।

      योजना कमीशन ने चौथी पंचवर्षीय योजना में अपनी नीति को आय की असमानता की तरफ मोड़ा। इसके अनुसार राजाकोषीय तत्व नाकाम रहते है क्योंकि वे डिस्पाजेबल इन्कम को कम कर देते है। अल्पविकसित देशों में आर्थिक व द्धि करने से यह ध्यान में रखा जाता है कि इससे गरीबों का नाम होगा तथा आय की असमानता कम होगी । पाँचवी पंचवर्षीय योजना में आय की असमानता की तरफ ध्यान दिया गया तथा छठी पंचवर्षीय योजना में केवल गरीबी हटाने पर ध्यान दिया गया। कृषि क्षेत्र में भूमि का अधिक भाग कुछ ही लोगों के हाथ में तथा थोड़ा हिस्सा ज्यादा लोगों के हाथ में होने से भी आय की असमानता बढ़ती है।

   2. **गरीबी हटाना (Removal of Poberty)**- आयोजकों ने पहली बार पंचवर्षीय योजना में गरीबी की समस्या पर ध्यान दिया चौथी पंचवर्षीय योजना तक यह सोचा गया कि आर्थिक व द्धि से अरब लोगों को फायदा मिलेगा जब आधुनिक विकास से इन गरीबों को फायदा नही हुआ तथा गरीबी बढ़ने पर इस पर ध्यान दिया। छठी पंचवर्षीय योजना में पहली बार महसूस किया कि अर्थव्यवस्था में गरीबी के घटक काफी मौजूद हैं 1977-78 में गरीबी से नीचे रहने वालों की संख्या 43.8 प्रतिशत थी तथा घटकर 1977-78 में 29.9 प्रतिशत रह गई। 1993-94 में यह घटकर 36.0 रह गया। वर्तमान समय में गरीबी से नीचे रहने वाले लगभग 29 प्रतिशत है। सरकार ने इसे खत्म करने के लिए कार्यक्रम भी लागू किए जैसे-एंटी पार्वटी प्रोग्राम 1980 में शुरू किया गया।

   3. **आधुनिकरण (Modernisation)**- अर्थव्यवस्था में विज्ञान व तकनीक का महत्वपूर्ण स्थान है। विकसित तथा उत्तम तकनीक के प्रयोग से उत्पादन में व द्धि होती है। पहली बार छठी पंचवर्षीय योजना में आधुनिकरण पर जोर दिया। तकनीय से संस्थागत तथा ढांचात्मक परिवर्तन संभव है। जो अर्थव्यवस्था का ढाँचा बदलने में सहायक है। सातवी पंचवर्षीय योजना में इस पर विशेष ध्यान नहीं दिया। लेकिन कई बार श्रम अतिरेक वाले देश में प्रयोग की गई तकनीक के प्रयोग पर प्रश्नचिन्ह लग जाता है। इसलिए नियोजकों के आधुनिकीकरण के उद्देश्य से बेरोजगारी तथा गरीबी हटाने के उद्देश्य के बीच झगड़े पैदा हो जाते है।

विकसित योजनाओं की सरंचना
(The Strategy of the Development Plans)

अल्पविकसित देशों में हमेशा आर्थिक व द्धि पर अधिक ध्यान दिया जाता है। नियोजन की संरचना इस उद्देश्य को पूरा करने में सहायता करती है। जो निम्न प्रकार हैं।

1. **भविष्य में आर्थिक व द्धि के लिए एक अच्छे आधार का विकास (Development a sound base for future economic growth)**- आजादी के पश्चात अर्थव्यवस्था ने एकदम से दीर्घकाल की व द्धि की प्रक्रिया की स्थिति में

नहीं थी। क्योंकि ब्रिटिश सरकार (राज) ने सारी अर्थव्यवस्था को ध्वस्त कर दिया था आजादी के बाद देश के बंटवारे ने एक नई समस्या जोड़ दी ऐसे हालात में देश के पास कोई हल नहीं था, बल्कि अपने सारे प्रयत्न इन समस्याओं को दूर करने में लगा दिया। इसलिए योजनाओं के आरंभ ने भविष्य के लिए नए आयाम रख दिया। पहली पंचवर्षीय योजना में खाद्यान्न आत्मनिर्भरता तथा संस्थान में विकास पर जोर दिया योजना में औद्योगिकरण के कार्यक्रम शुरू हुए।

2. **औद्योगिकरण को उच्च प्राथमिकता (A Higher Priority to Industrilization)**- दूसरी पंचवर्षीय योजना में दीर्घकालीन विकास महालोनोबिस के विचारों पर आधारित है। इस सिद्धांन्त में औद्योगिकरण को उच्च प्राथमिकता दी गई। उनका मानना था कि औद्योगिकरण के बिना कृषि विकास संभव नहीं। भूमि के ऊपर जनसंख्या का दबाव अधिक है जब तक औद्योगिकरण नही होगा तब तक कृषि क्षेत्र से अतिरेक श्रम औद्योगिकरण क्षेत्र में हस्तान्तरित नही हो सकती। निर्मित उद्योगों में श्रम की उत् पादकता ज्यादा है इसलिए उनके उच्च-पैमाने के विकास के लिए राष्ट्रीय आय में तेजबी से व द्धि होनी चाहिए। इसलिए यह संबंध बताते है कि एक पिछड़ी औद्योगिक अर्थव्यवस्था में कृषि भी पिछड़ी रहती है। यातायात का विकास, संचार व्यवस्था और विद्युत भी उद्योग व द्धि पर निर्भर करते है।

3. **पूँजीगत उद्योगो के विकास के लिए दबाव (Emphasis on development of Capital good industies)**- प्लान्ड डैवलपमैट स्ट्रेटजी में पूँजीगत वस्तुओं को प्राथमिकता दी जाती है। उपभोक्ता वस्तुओं उद्योगों और कृषि को बाजार की ताकतो पर छोड़ दिया जाता है। हालांकि यह सरंचना सही नहीं है। इससे वस्तुओं की मात्रा में कमी उत्पन्न होती है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में खाद्यान्न की समस्या उत्पन्न हो गई थी इसके बाद नियोजको ने फिर अपनी प्राथमिकता में कृषि को रखा। लेकिन यदि उपभोक्ता वस्तुओं की बजाय निर्मित उद्योगों को प्राथमिकता दी जाए तो इससे खाद्यान्न की कमी, आवश्यक वस्तुओं की कमी की समस्या उत्पन्न होती है। उपभोक्ता वस्तुओं को प्राथमिकता अथवा प्रोत्साहन देकर इस कमी को पूरा किया जा सकता है।

सबसे पहले जब यह संरचना प्रयोग की गई उस समय मशीन निर्मित उद्योग नहीं थे। उसी समय सरकार ने इन उद्योगों के विकास के लिए फैसला किया कि कोई भी उपलब्ध अतिरेक निवेश उद्देश्य से लगाया जाएगा। क्योंकि यदि ये देश पूँजीगत उद्योगों को विकसित नहीं कर पाते है तो इन्हें आयात करना पड़ेगा। दूसरी अवस्था में औद्योगिकरण के लिए पूँजीगत वस्तुओं को आयात करना पड़ेगा इसलिए इन देशों को निर्यात में व द्धि के लिए प्रयत्न करने चाहिए। यदि यह समस्या बनी रहती है जो ये देश विकसित सरंचना में दीर्घकालीन विदेशी उधार ले सकते है।

अध्याय-29
भौतिक आगत
(Endogenous Growth)

पश्चिमी देशों में सांख्यिकी अनुसंधान दिखाते है कि भौतिक आगत की अपेक्षा उत्पादन में ऊँची दर से व द्धि हुई है। इसका कारण है कि मानव की योग्यता, उत्पादन साधनों के लिए लगातार बढ़ रही है क्योंकि शिक्षा और कुशल, स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धि इत्यादि में सुधार हुआ है। इसलिए भौतिक विकास के साथ मानव विकास भी होना चाहिए।

प्रो॰ एडम स्मिथ का कहना है कि मानव बाजार के लिए नहीं है। यद्यपि कुछ अर्थशास्त्रियों का मानना है कि मानव का उत्पादन के लिए साधन माना जाता है (1) मानव के पालन पोषण तथा शिक्षा देना एक वास्तविक लागत है (2) उनके श्रम का उत्पादन राष्ट्रीय (धन) आय में जुड़ना (3) मानव पर किया गया खर्च इस उत्पाद को बढ़ाएगा तथा ये राष्ट्रीय धन में व द्धि करेगा।

अर्थशास्त्री जिन्होंने मानव की निपुणता व मानव को उत्पादन साधन माना है वे एडम स्मिथ है। प्रो॰ मार्शल ने इस विचार को नकार दिया है और कहा है कि मानव बाजार के लिए नहीं है। कुछ अर्थशास्त्रियों का कहना है कि शिक्षा में निवेश प्रतिफल के लिए लेना चाहिए और इसे मानव व पूँजी में निवेश समझना चाहिए जो मानव पूँजी निर्माण को बढ़ाता है। उदाहरण के तौर पर विकास के नाम पर एक अर्थव्यवस्था में भूमि तथा उत्पादक पूँजी है, तकनीक की उपलब्धता, जो अमेरिका से है। इसके लिए कोई भी मनुष्य उपलब्ध नहीं है जिसके पास इस तकनीक के बारे में जानकारी व अभ्यास नहीं है, किसी कोई जानकारी नही, कोई स्कूल नहीं यदि सब व्यवस्थाएँ उपलब्ध लागू है तो उत्पादन में गिरावट आएगी। इसलिए उत्पादक बढ़ाने के लिए मानव के लिए पूँजी निवेश करना चाहिए।

शिक्षा और आर्थिक व द्धि
(Education and Economic Growth)

जैसा कि ऊपर बताया गया है शिक्षा में निवेश से आर्थिक व द्धि होती है। वास्तव में, भौतिक पूँजी का प्रयोग मानव संसाधन पर निर्भर करता है। पश्चिम देशों में किए गए अध्ययन ने आर्थिक व द्धि में शिक्षा का योगदान को दिखाया (मापा) है। प्रो॰ Edward F-Densons ने बताया है कि शिक्षा में निवेश ने कुल राष्ट्रीय आय में 23 प्रतिशत की व द्धि और अमरीका में रोजगार प्राप्त लोगों ने वास्तविक राष्ट्रीय आय में प्रति व्यक्ति 42 प्रतिशत का आर्थिक व द्धि में योगदान किया। यह आंकड़े 1929-57 के बीच लिए गए है।

Prof. Todaro के अनुसार शिक्षा विकसित तथा अल्पविकसित देशों में योगदान देती है जो इस प्रकार है।

1. यह ज्यादा (बड़ी मात्रा) में उत्पादक श्रम शक्ति जुटाने में मदद करती है तथा साथ में ज्ञान व कुशलता में व द्धि भी होती है।
2. यह अधिक मात्रा में शिक्षक, स्कूल तथा दुसरे क्षेत्रों में श्रमिक, कापी व पेपर को छापने स्कूल युनिफार्म बनाने वाले इत्यादि को रोजगार प्रदान करती है।
3. यह शिक्षक नेताओं की क्लास (वर्ग) बनाने में सहायता करती है। जैसे सरकारी सेवाएँ, सार्वजनिक कॉरपोरेशन, निजी व्यवसाय आदि
4. यह जनसंख्या को निपुणता तथा आधुनिक धार अपनाने में मदद करती है।

शिक्षा से आय असमानता में कमी, ज्ञान में व द्धि तथा खोज करने में सहायता मिलती है। इससे मानव विकास में भी व द्धि होती है। शिक्षा में विकास पंचवर्षीय योजनाओं से शुरू हुआ। भारत में शिक्षा में खर्च का नाम तथा दूसरे (पश्चिमी देशों) में इसे शिक्षा में निवेश का नाम दिया है। भारत में शिक्षा खर्च को मानव संसाधन में निवेश का नाम नहीं दिया है। इसलिए आर्थिक व द्धि के नाम से अथवा उसके बढ़ाने के नाम से शिक्षा को जगह मिली है। आठवी पंचवर्षीय योजना में नियोजन कमीशन ने 21, 217 करोड़ रूपये शिक्षा पर खर्च किए। यह इस योजना के सार्वजनिक क्षेत्र का 4.9 प्रतिशत था। यद्यपि शिक्षा पर खर्च वर्तमान समय में भी पूर्ण नहीं है। 160 देशों में से संबधित आंकड़े बताते है कि भारत का रेंक (सार्वजनिक खर्च शिक्षा पर तथा GNP पर में योगदान) 82 है जो काफी नीचे है। वर्तमान समय में भारत में शिक्षा में कुछ सुधार हुआ है न कि साक्षरता बल्कि स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्या में व द्धि हुई है। लेकिन फिर भी भारत में ऊँची तथा तकनीकी शिक्षा की सुविधाएँ कम है। क्योंकि यदि ज्ञान तथा शोध के बारे में बात की जाए तो यह तभी संभव है जब तकनिकी शिक्षा में व द्धि हो।

Education Knowledge, Research अल्पविकसित अर्थव्यवस्था में बहुत कम परिवर्तन हुए है- शिक्षा के स्तर में अथवा सुधार में भारत में केवल इसकी बनावट बदली है। इसके अलावा अधिक परिवर्तन नहीं हो पाए। इन अल्पविकसित अर्थव्यवस्थाओं में थोड़े-थोड़े परिवर्तन किए गए है जो पहल कोलानियल देश जैसे फ्रांस, इंग्लैड, स्पेन, बैलजियम, पुर्तगाल और संयुक्त राज्य के अधिकतर बराबर दिखाई देते है। अल्पविकसित देशों की प्रकृति कृषि साधन की प्रव त्ति है। और जो विदेशों से तकनीक का हस्तान्तरण हुआ है उसके लिए शिक्षा स्तर की भी आवश्यकता है।

इसके साथ अमीर देशों ने भौतिक तथा मानवीय तकनीक के हस्तान्तरण से अन्तर्राष्ट्रीय बाजार पर अपना दबाव बना रखा है। इस वजह से इन देशों के बीच आय के बीच बहुत ज्यादा असमानता उत्पन्न हुई। अन्तर्राष्ट्रीय माइगरेशन में अधिक अवसर प्राप्त होने की वजह से अल्पविकसित देशों से इंजीनियर, डाक्टर अथवा दूसरे कार्य में निपुण व्यक्ति विकसित देशों में चले जाते है जिससे 'brain drain' की समस्या उत्पन्न हुई है। विकसित देशों में इस तरह का 'brain drain' उनकी केवल अच्छी नीति से नहीं, न ही अल्पविकसित देशों की आर्थिक नीति से, बल्कि अल्पविकसित देशों में शिक्षा नीति का सही नहीं होना है। यह 'ब्रेन ड्रेन' न कि अल्पविकसित देशों की पूर्ति को प्रभावित करता है। बल्कि देश में उत्पन्न होने वाली समस्याएँ (घरेलू समस्यों) की तरफ से भी ध्यान को हटाना है। यह रूकता तभी संभव है जब रहने की लागत कम हो, हॉस्पिटल, स्कूल, स्वास्थ्य सुविधाएँ तथा इस तरह की तकनीकी प्रयोग की जाए ताकि शिक्षक युवक व युवती को अवसर प्राप्त हो। अपने आप को विकसित करने तथा अपनी योग्यता का देश के लिए योगदान करने के लिए, अमीर देशों के प्रभाव न होने पर भी हमारी इस तरह की नीतियाँ जो 'excellence' के नाम पर intellectuals का विदेशों में भेजते है। इसका भी योगदान उपलब्ध साधनों की वजह से विकसित देशों को प्राप्त होता है।

यदि हमारे देश के अन्दर उचित, शिक्षा, ज्ञान तथा अन्वेषण किए जाएँ तो इससे उत्पादन लागत में कमी होगी। रोजगार के ज्यादा अवसर प्राप्त होंगे तथा लोगों के जीवन स्तर में व द्धि होगी और जो डॉक्टर, इंजिनियर अथवा दूसरे intellectuals विदेश में चले जाते हैं। उनका योगदान हमारे देश में होगा। यदि ये सब सुविधाएँ लेकर हम इनके आवागमन पर रोक लगा दे सबसे महत्वपूर्ण है अल्पविकसित देशों को अपनी शिक्षा नीति में modification न कर बल्कि इसको परिवर्तित करना होगा। क्योंकि हम केवल विदेशी नकल कर उनके अनुसार अपने उद्देश्य वो निर्धारित कर लेते है लेकिन वे कैसे प्रभावी होगें। इस बारे में अन्वेषण नहीं करते। अल्पविकसित अर्थव्यवस्थाओं को शिक्षा नीति में संचूयनात्मक परिवर्तन करने चाहिए शिक्षा में बढ़ोत्तरी के लिए खर्च का नाम न देकर बल्कि उसमें निवेश कर इसको उद्योग का दर्जा देना चाहिए। अमेरिका के राष्ट्रपति श्री बुश से पूछा गया आपका क्या उद्देश्य या लक्ष्य है अपने देश के प्रति। उनका जवाब था शिक्षा-शिक्षा। इसलिए नीति को कल्याण सिद्धांत का नाम न देकर यह आर्थिक व द्धि में कितना योगदान कर सकती है इसके बारे में ध्यान देना चाहिए तभी हम अपने देश को विकास की प्रकृति व इसकी प्रव त्ति को बढ़ा सकते है।